महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा
(संसद द्वारा पारित अधिनियम 1997, क्रमांक 3 के अंतर्गत स्थापित केंद्रीय विश्वविद्यालय)
Mahatma Gandhi Antarrashtriya Hindi Vishwavidyalaya, Wardha
(A Central University Established by Parliament by Act No.3 of 1997)

ज्ञान शांति मैत्री

एमएसडब्ल्यू पाठ्यक्रम (80 क्रेडिट)
प्रथम सेमेस्टर

दूर शिक्षा निदेशालय
महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा
पोस्ट - हिंदी विश्वविद्यालय, गांधी हिल्स, वर्धा - 442001 (महाराष्ट्र)

मार्ग निर्देशन समिति

प्रो. गिरीश्वर मिश्र
कुलपति
म.गां.अं.हिं.वि., वर्धा

प्रो. आनंद वर्धन शर्मा
प्रतिकुलपति
म.गां.अं.हिं.वि., वर्धा

प्रो. अरबिंद कुमार झा
निदेशक (दूर शिक्षा निदेशालय)
म.गां.अं.हिं.वि., वर्धा

पाठ्यचर्या निर्माण समिति

प्रो. मनोज कुमार
निदेशक – म.गां.फ्यू. गु. समाज कार्य अध्ययन केंद्र, म.गां.अं.हिं.वि., वर्धा

डॉ. मिथिलेश कुमार
असिस्टेंट प्रोफेसर , म.गां.फ्यू. गु. समाज कार्य अध्ययन केंद्र, म.गां.अं.हिं.वि., वर्धा

डॉ. शिवसिंह बघेल
असिस्टेंट प्रोफेसर , म.गां.फ्यू. गु. समाज कार्य अध्ययन केंद्र, म.गां.अं.हिं.वि., वर्धा

श्री अमोद गुर्जर
असिस्टेंट प्रोफेसर , म.गां.फ्यू. गु. समाज कार्य अध्ययन केंद्र, म.गां.अं.हिं.वि., वर्धा

डॉ. शंभू जोशी
असिस्टेंट प्रोफेसर एवं पाठ्यक्रम संयोजक, दूर शिक्षा निदेशालय, म.गां.अं.हिं.वि., वर्धा

संपादन मंडल

प्रो. मनोज कुमार
निदेशक – म.गां.फ्यू. गु. समाज कार्य अध्ययन केंद्र, म.गां.अं.हिं.वि., वर्धा

डॉ. मिथिलेश कुमार
असिस्टेंट प्रोफेसर
म.गां.फ्यू. गु. समाज कार्य अध्ययन केंद्र, म.गां.अं.हिं.वि., वर्धा

डॉ. शंभू जोशी
असिस्टेंट प्रोफेसर एवं पाठ्यक्रम संयोजक
दूर शिक्षा निदेशालय, म.गां.अं.हिं.वि., वर्धा

इकाई लेखन

खंड-1
डॉ. मिथिलेश कुमार

खंड- 2
डॉ. शिवसिंह बघेल

खंड– 3
श्री सुशील कुमार पाण्डेय

खंड-4
इकाई 1 व 2 डॉ. शिवसिंह बघेल
इकाई 3,4 व 5 डॉ. मिथिलेश कुमार

कार्यालयीन एवं संपादकीय सहयोग

श्री विनोद वैद्य
अनुभाग अधिकारी, दू.शि. निदेशालय

श्री महेन्द्र प्रसाद
संपादकीय सहायक, दू.शि. निदेशालय

सुश्री शिल्पा एवं श्री प्रवेश कुमार
सहायक, दू.शि. निदेशालय

सुश्री मेघा आचार्य
प्रूफ रीडर, दू.शि. निदेशालय

श्री हरीश चंद्र शाह
तकनीकी सहायक, दू.शि. निदेशालय

सुश्री राधा
टंकक, दू.शि. निदेशालय

आवरण पृष्ठ
सुश्री मेघा आचार्य

अनुक्रम

क्र.सं.	खंड का नाम	पृष्ठ संख्या
1	**खंड - 1 – समाज कार्य अनुशासन के रूप में**	3
	इकाई - 1 अनुशासन का उदय	4-9
	इकाई - 2 अनुशासन एवं अंतरानुशासनिकता	10-20
	इकाई - 3 अनुशासन के रूप में समाज कार्य का उदय	21-27
2	**खंड - 2 - समाज कार्य का इतिहास: वैश्विक परिदृश्य**	28
	इकाई - 1 यूरोप में समाज कार्य का इतिहास	29-42
	इकाई - 2 अमेरिका में समाज कार्य का इतिहास	43-57
	इकाई - 3 एशिया में समाज कार्य का इतिहास	58-74
	इकाई - 4 अफ्रीका व मध्य-पूर्व में समाज कार्य का इतिहास	75-85
3	**खंड - 3 - समाज कार्य व्यवसाय एवं शिक्षा**	86
	इकाई - 1 समाज कार्य एक व्यवसाय के रूप में	87-100
	इकाई - 2 समाज कार्य शिक्षा: सिंहावलोकन एवं संभावनाए	101-113
	इकाई - 3 दूरवर्ती शिक्षा के माध्यम से समाज कार्य शिक्ष	114-120
	इकाई - 4 व्यावसायिक समाज कार्य के मूल्य, सिद्धांत और नैतिकताएं	121-138
4	**खंड - 4 - भारत में समाज कार्य का उद्गम और विकास**	139
	इकाई - 1 भारत में समाज कार्य का ऐतिहासिक विकास	140-152
	इकाई - 2 विभिन्न धर्म और समाज कार्य	153-163
	इकाई - 3 राज्य और समाज कार्य	164-172
	इकाई - 4 गांधी विचार एवं समाज कार्य	173-181
	इकाई - 5 समसामयिक प्रवृत्तियां	182-190

MSW 01 समाज कार्य का उद्भव और विकास

खंड परिचय

प्रिय विद्यार्थियों,

एमएसडब्ल्यू पाठ्यक्रम (प्रथम सत्र) के प्रश्नपत्र **MSW 01समाज कार्य का उद्भव और विकास** में आपका स्वागत है। इस प्रश्नपत्र को चार खंडों में विभाजित किया गया है।

पहले खंड में यह बताया गया है कि एक अकादमिक अनुशासन का उदय किस प्रकार होता है? अनुशासन और अंतरानुशासनिकता के बीच क्या संबंध हैं? एकअनुशासन के रूप में समाज कार्य का उदय किस प्रकार हुआ?

दूसरे खंड में समाज कार्य के ऐतिहासिक विकास को वैश्विक परिदृश्य के आधार पर बताया गया है। यूरोप,अमेरिका,एशिया,अफ्रीका व मध्य-पूर्व में समाज कार्य के विकास पर प्रकाशडाला गया है। इनका अध्ययन कर हम यह समाज कार्य के विकास की प्रमुख प्रवृत्तियों को जानसकते हैं।

तीसरे खंड में समाज कार्य के एक व्यवसाय एवं शैक्षिक कार्यक्रम के रूप में उदय व विकास को रेखांकित किया गया है। समाज कार्य एक व्यवसाय के रूप में कैसे विकसित हुआ? उसके मूल्य,सिद्धांत और नैतिकताएं क्या हैं? शैक्षिक कार्यक्रम के रूप में समाज कार्य की स्थिति एवं संभावनाओं पर भी प्रकाश डाला गया है। दूर शिक्षा के माध्यम से समाज कार्य शिक्षा को बताया गया है।

चौथे खंड में भारत में समाज कार्य के उद्भव और विकास को स्पष्ट किया गया है। भारत में समाज कार्य के ऐतिहासिक विकास का वर्णन किया गया है। विभिन्न धर्मों में समाज कार्य कैसे रहा है? राज्य और समाज कार्य के बीच क्या संबंध हैं? गांधी विचार में समाज कार्य की अवधारणा कैसी है? समाज कार्य की नवीन प्रवत्तियां कौन-सी है? इत्यादि बातो को विस्तार से बताया गया है।

खंड - 1

समाज कार्य अनुशासन के रूप में

ज्ञान शांति मैत्री

इकाई 1
अनुशासन का उदय
इकाई की रूपरेखा

1.0 उद्देश्य
1.1 प्रस्तावना
1.2 अनुशासन का संक्षिप्त परिचय
1.3 ऐतिहासिक पृष्ठभूमि
1.4 अनुशासन के मुख्य तत्व
1.5 सारांश
1.6 बोध प्रश्न
1.7 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

1.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आप –

- अनुशासन के परिचय से अवगत हो सकेंगे।
- अनुशासन के निर्धारण में सहयोगी कारकों को समझ सकेंगे।
- अनुशासन की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को समझ सकेंगे।
- अनुशासन के मुख्य तत्वों के बारे में संज्ञान कर सकेंगे।

ज्ञान शांति मैत्री

1.1 प्रस्तावना

समाज कार्य का इतिहास ज़्यादा पुराना नहीं हैं। इसकी जड़े हमें विश्व के विभिन्न धर्मों में दया, दान सहयोग के रूप में मिल जाती हैं। हम देखते हैं इंग्लैड़ में मध्यकाल में धार्मिक भावना से प्रेरित होकर लोग असहाय अंधों, लंगड़ों तथा रोगियों की सहायता करते थे। दान वितरण के कार्य को अधिक महत्व देने के कारण चर्च तथा राज्य में असहमति उत्पन्न हूई, जिसके फलस्वरूप सोलहवीं शताब्दी में निर्धनों की सहायता का दायित्व राज्य पर आ गया। इंग्लैड़ के समान ही अमेरिका में भी दान संगठन का सुत्रपात 1877 के आसपास हो जाता है। 19 वीं शताब्दी के अंतिम वर्षों में चैरिटी आर्गनायइज़े ने अपने काम का दायरा बढ़ाकर औद्योगिक श्रमिकों को आनेवाली समस्याओं को केंद्रमें लाकर खड़ा कर दिया। भारत में असहायों दीन-दुखियों की सहायता करने की परंपरा काफ़ी प्राचीन थी। अलग-अलग समयों, बौद्ध काल, मौर्यकाल, इस्लाम और अंग्रेज़ोंके शासनकाल में इसके स्वरूप में परिवर्तन आता गया और स्वतंत्रता के बाद इसका स्वरूप कल्याणकारिता ने ग्रहण कर लिया।

ऐसे में यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि समाज कार्य व्यवसाय के रूप में या अनुशासन के रूप में कैसे उद्भुत हुआ? इस सवाल का जवाब हमें तभी मिल सकता है, जब हम अनुशासन क्या है? का अर्थ ढूँढते हैं तथा इसके उद्गम को जानते हैं। अत: अनुशासन क्या है? उसकी कसौटियां क्या है और उसका निर्धारण कैसे होता है? यह जानकारी आवश्यक हो जाती है। इस इकाई में हम इन्हीं प्रश्नों के उत्तर प्राप्त करने का प्रयत्न करेंगे।

1.2 अनुशासन का संक्षिप्त परिचय

साधारणत: अनुशासन शब्द से तात्पर्य 'नियमों आदर्शों के अंतर्गत व्यवहार करने के तरीके' से लगाया जाता है। किंतु यहाँ हम जिस अनुशासन की बात कर रहें है, वह अकादमिक अनुशासन के अंतर्गत आता है, इसलिए इसका अलग अर्थ 'ज्ञान का क्षेत्र' होता है।

मरियम वेबस्टर्स शब्दकोश (2016) के अनुसार अंग्रेज़ी शब्द Discipline का उद्गम लैटिन शब्द disciplina से हुआ जिसका अर्थ शिक्षण, सीखना आदि होता है। इस लैटिन शब्द की उत्पत्ति भी लैटिन शब्द discipulus से मानी जाती है, जिसका अर्थ विद्यार्थी (Pupil) होता है। शब्दकोश का मानना है कि अनुशासन शब्द 13 वी शताब्दी से उपयोग में लाया जाने लगा है। लेकिन डिक्शनरी. कॉम (2016) का मानना ही कि अनुशासन शब्द की उत्पत्ति 1175-1225 के आस पास हुई होगी। अनुशासन शब्द का एक और अर्थ भी लगाया जाता है, जो यहाँ सटीक बैठता है- "Branch of instruction or education"। अकादमिक क्षेत्र में जब हम अनुशासन की बात करते हैं तब उसका सही मायने में अर्थ होगा- शिक्षा या अनुदेश की शाखा। अकादमिक अनुशासन या अकादमिक क्षेत्र के रूप में प्रचलित इस शब्द का अर्थ 'ज्ञान की शाखा' से भी लगाया जाता है, इसलिए इसे ज्ञानानुशासन या ज्ञानशाखा भी कहा जाता है।

ज्ञान शांति मैत्री

1.3 ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

इतिहास में हम देखते हैं कि शुरुआत में मनुष्य स्वयं के बारे मेंतथा अपने पर्यावरण के बारे में जागरूकता से सोचने-समझने लगा। अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए विभिन्न तरीके उसने ईजाद किए, जिससे उसका जीवन सुखमय बने। धार्मिक युग में अलौकिकता के आधार पर मनुष्य ने संसार की विवेचना की किंतु कालांतर में जीवनोपयोगी परिघटनाओं केअंतर्गत दर्शनशास्त्र, गणित, तर्क शास्त्र आदि के संबंध में विचारों की उत्पत्ति होने लगी शुरूआती समय में दर्शनशास्त्र, जिसे ज्ञान से प्रेम करने वालों के समूह के रूप में भी जाना जाता है, का उद्गम हुआ। ज्ञान के प्रेम के खातिर सुकरात को हेम्लॉक ज़हर पीना पड़ा तथा गैलिलिओ को फ़ाँसी पर चढ़ना पड़ा था। इसलिए दर्शनशास्त्र को ज्ञानशाखाओं की जननी माना जाता है। बावजुद इसके साक्ष्य मिलते हैं कि पेरिस विश्वविद्यालय में 1231 में चार संकाय

(Theology), चिकित्साविज्ञान, कला तथा धर्म विज्ञान (Canon Low)(Discipline Academiya), 2016 की शुरुआत हुई थी।

शैक्षिक संस्थाओं में मूलतः अनुशासन शब्द का उपयोग'वैज्ञानिक समुदाय द्वारा सूचना उत्पादन की संरचना' से लगाया जाता है। ऐसा माना जाता है कि उन्नीसवीं शताब्दी के शुरुआत में जर्मन विश्वविद्यालयों में अनुशासन पदों का उद्गम हुआ। ज़्यादातर अकादमिक अनुशासनों का उभार 19 वीं सदी के मध्य तथा अंत में हुआ। इसलिए यह कहा जाता है कि इस समय में विश्वविद्यालयों का धर्मनिरपेक्षीकरण हो गया। पारंपारिक पाठ्यक्रम के साथ-साथ अशास्त्रीय भाषा तथा साहित्य, समाज विज्ञान (राजनीति विज्ञान, अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र, लोक प्रशासन) तथा प्राकृतिक विज्ञान एवं तकनीकी अनुशासनों में भौतिकी, जीवविज्ञान और अभियांत्रिकी का उद्गम हुआ।

बीसवीं सदी के शुरुआत में नई अकादमिक ज्ञानशाखाओं, शिक्षण तथा मनोविज्ञान को इसके साथ जोड़ा गया। 1970-80 के आस-पास कुछ और नई ज्ञानशाखाओं का उभार हुआ, जो विशेष थीम्स पर ध्यान केंद्रित किए हुए थी, इसमें शामिल हैं- मीडिया अध्ययन, स्त्री अध्ययन तथा आफ्रिकन अध्ययन। इसके बावजूद ऐसे कई सारे अनुशासनों का उभार हुआ, जिसके माध्यम से कॅरियर की तैयारी तथा व्यावसायिकता वाले पाठ्यक्रमों (नर्सिंग, हॉस्पिटैलिटी मैनेजमेंट, और सुधारात्मक सेवाएं) की शुरुआत विश्वविद्यालयों में होने लगी।

अंत में, आज हम देखते हैं कि अंतर-अनुशासनिक वैज्ञानिक अध्ययन की शाखाओं का विस्तार होने लगा है, जिसमें बायो-केमिस्ट्री, भू-भौतिकी आदि शामिल हैं।

बीसवीं सदी के दृष्टिकोण के साथ विभिन्न देशों में ज्ञानानुशासनों को वर्गीकृत किया गया। इसके अंतर्गत विज्ञान अनुशासन के अंतर्गत भौतिकी, रसायनशास्त्र, जीवविज्ञान, आदि को शामिल किया गया तथा समाज विज्ञान में अर्थशास्त्र, राजनीति विज्ञान, समाज शास्त्र एवं मनोविज्ञान को शामिल किया गया।

बीसवीं सदी की यह आवश्यकता बन गई कि इस वर्गीकरण को वह विस्तृत और सामान्य बनाएं, क्योंकि यह वह समय था, जब विज्ञान में रुचि की कमी हो रही थी। इस कारण विद्या तथा कला प्रेमियों की भरमार बढ़ गई जिससे 'प्राकृतिक इतिहासवेत्ता' तथा 'प्राकृतिक दार्शनिक' जैसे प्रचलन की शुरुआत हुई। ऐतिहासिक विचारों में रूचि रखने वाले फ्रांसीसी विद्वान मिशेल फूको अकादमिक अनुशासन की आलोचना करते हुए दावा करते हैं कि अनुशासन 18 वीं सदी में फ्रांस में स्थापित आधुनिक जेल और दंड व्यवस्था के नियंत्रण तंत्रकी तरह ही सामाजिक आंदोलन से उत्पन्न हुआ है और इन तथ्यों से उन आवश्यक पहलुओं का पता चलता है जिससे इसे जारी रखने की कोशिश की जा रही है। विशेषज्ञता, वर्गीकरण, अनुशासन की विशेषताएं हैं यह एक पैमाने के साथ, मानकों के इर्द-गिर्द, व्यक्तियों के बीच एक दूसरे के संबंधों को पदानुक्रम में बांधते हुए, जरूरत के अनुसार अयोग्य एवं अमान्य के रूप में वितरित करता हैं।

1.4 अनुशासन के मुख्य तत्व

प्रत्येक अनुशासन का एक अध्ययन क्षेत्र होता है। जैसे कि हम देखते हैं, समाजशास्त्र एक अनुशासन है, तब उसका अपना अध्ययन का एक क्षेत्र भी है, जिसमें मानव तथा समाज का अध्ययन किया जाता है। इसके अंतर्गत सामाजिक संबंधों, समूह, समुदाय तथा सामाजिक संस्थाओं का अध्ययन भी शामिल है।

अनुशासन की दूसरी विशेषता यह है कि इसे एक विभाग का दर्जा मिलना चाहिए तथा उसे अकादमिक क्षेत्र में मान्यता मिलनी चाहिए। जैसे कि हम जानते हैं भारत में समाज शास्त्र का उभार अंग्रेज़ो के आने के बाद हुआ इसके लिए यहाँ के विश्वविद्यालयों में समाज शास्त्र के विभाग खोले गए। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर समाजशास्त्र को इसका दर्जा दिलाने का श्रेय इमाइल दुर्खीम को जाता है।

अनुशासन की तीसरी विशेषता यह है कि इसके पास सिद्धांत और ज्ञान का ढाँचा (Body of Knowledge) पर्याप्त होना चाहिए। समाजशास्त्र के ही उदाहरण से हम इसे भी समझेंगे। समाजशास्त्र के पास अपना एक ज्ञान का ढाँचा है, जिसमें लगातार परिवर्तन दिखाई देते हैं। साथ ही विभिन्न सिंद्धांतों एवं दृष्टिकोण (मार्क्सिस्ट, सावयाविक, यांत्रिकीय) ने समाजशास्त्र के ज्ञान को और भी पुष्ट किया है।

अनुशासन की चौथी विशेषता है- समस्या के अध्ययन व जाँच के लिए एक सामान्य प्रणाली का होना। यह किसी भी अनुशासन की महत्वपूर्ण विशेषता है समाजशास्त्र के अंतर्गत अध्ययन के लिए उसकी एक ख़ास प्रणाली है, जिसमें तथ्य जुटाने तथा तथ्यों का मूल्यांकन एवं विश्लेषण के लिए उपयोग में लाया जाता है। तथ्य संकलन के लिए विभिन्न तरीके, जैसे –साक्षात्कार, अवलोकन आदि उपलब्ध है। साथ ही इसके विश्लेषण के लिए सांख्यिकीय, सारणियाँ तथा एस.पी.एस.एस. उपलब्ध है।

अनुशासन की पाँचवी विशेषता यह है कि इसके लिए शोध, व्यवहार तथा ज्ञान में योगदानकर्ता के रूप में सम्मानजनक स्थिति में पहुँचे हुए लोगों की संख्या अनुशासन में तथा अनुशासन के बाहर भी होनी चाहिए। जैसे कि हम देखते, हैं समाजशास्त्र के पितामह के रूप में कांट को माना जाता है, जिन्होंने समाजशास्त्र की नींव रखी इसके बावजूद इमाइल दुर्खिम, कार्ल मार्क्स, विल्फ्रेड पेरेटो आदि विश्वस्तरीय विद्वानों के बावजूद भारतीय परिदृश्य में जीएस. घुर्ये, एम. एन. श्रीनिवासन, एच. सी. दूबे आदि लोगों के शोधों, सिद्धांतों ने समाज शास्त्र को एक सम्मानजनक स्थिति में पहुंचाया है।

इसके बावजूद एक अनुशासन के लिएशिक्षित समाज द्वारा सहयोग प्राप्त होना आवश्यक शर्त मानी जाती है। यह गौण विशेषता होने के बावजूद भी महत्वपूर्ण है क्योंकि समाज के शिक्षित वर्ग ही अनुशासन को आगे बढ़ाने का कार्य करता है ऐसे वे ही इसकी उपेक्षा करेंगे, तो इसकी सामाजिक मान्यता पर प्रश्नचिन्ह लगेगा।

अनुशासन की दूसरी गौण विशेषता यह है किइसके अध्ययन में रुचि लेने वाले लोगों की पर्याप्त संख्या होनी चाहिए। जैसे कि हम भारतीय परिदृश्य में देखते हैं, संस्कृत भाषा को सीखने, पढ़ने तथा रुचि लेने वाले लोगों की संख्या लगातार कम होती जा रही है। इसका असर यह है कि आम लोग इसको भूलने लगे हैं।

इसके साथ ही अंतिम विशेषता के रूप में अनुशासन की शुरुआत से लेकर आयु भी मायने रखती हैजैसे कि दर्शनशास्त्र के बारे में हम देखते हैं यह सबसे पुरानी ज्ञानशाखा मानी जाती है। इस कारण इसे अत्यधिक महत्त्व प्राप्त है।

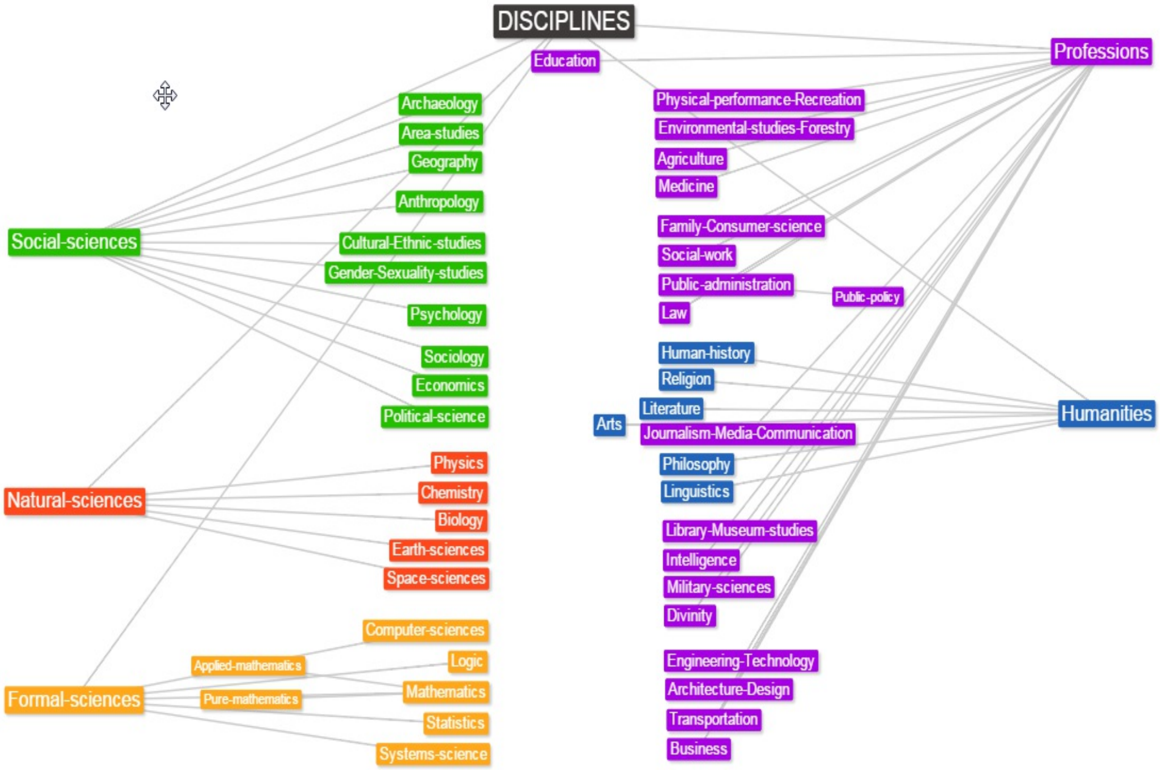

स्रोत: https://en.wikipedia.org/wiki/Outline_of_academic_disciplines#/media/File:Disciplines_mind_map.jpg

ज्ञान शांति मैत्री

1.5 सारांश

अनुशासन वह विषय अथवा अंतर्दृष्टि है जो संबंधित विषय-क्षेत्र में स्वयं का प्रभुत्व रखता है और उससे संबंधित विभिन्न मानकों व प्रतिमानों में श्रेष्ठ होता है। इसके अलावा संबंधित विषयक्षेत्र के अध्ययन हेतु विशिष्ट ज्ञान-मीमांसीय प्रविधि का प्रयोग करता है और साथ ही ज्ञान की परिधि के अनुरूप वह स्वयं को विषय-क्षेत्र में बाँधकर रखता है। इस इकाई के माध्यम से आपको अनुशासन के बारे में जानकारी दी गई है। यहाँ अनुशासन का परिचय संक्षिप्त रूप में स्पष्ट किया गया है, विस्तृत विवरण अगली इकाई में प्रस्तुत किया गया है। इसके अलावा अनुशासन की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि के बारे में भी चर्चा की गई है। इस इकाई के अंत में अनुशासन के मुख्य तत्वों पर प्रकाश डाला गया है।

1.6 बोध प्रश्न

बोध प्रश्न 1: अनुशासन के बारे में विवरण दीजिए।

बोध प्रश्न 2: अनुशासन के ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को स्पष्ट कीजिए।
बोध प्रश्न 3: अनुशासन के मुख्य तत्वों पर प्रकाश डालिए।

1.7 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

BoixMansilla, V. (2005). *Assessing student work at disciplinary crossroads.Change*, January/February, 14-21.

Heckhausen, Heinz. *"Discipline and Interdisciplinarity."* Interdisciplinarity. Leo Apostel et al.,eds. OECD: Paris, 1972.

Youngblood, Dawn, 2007. "*Interdisciplinary Studies and the Bridging Disciplines: A Matter ofProcess.*" Journal of Research Practice, v.3, i.2. http://www.eric.ed.gov/ERICWebPortal/contentdelivery/servlet/ERICServlet?accno=EJ800366.

Beane, J. A. (1995). *Curriculum integration and the disciplines of knowledge.* Phi Delta Kappan,77(4), 616-622.

Foshay, A. W. (1970). *How fare the disciplines? Phi Delta Kappan.* 51(7), 349-352.

https://en.wikipedia.org/wiki/Outline_of_academic_disciplines#/media/File:Disciplines_mind_map.jpg

ज्ञान शांति मैत्री

इकाई 2
अनुशासन और अंतरानुशासनिकता
इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य
2.1 प्रस्तावना
2.2 अनुशासन क्या है?
2.3 अनुशासनिकता और अंतरानुशासनिकत
2.4 अंतर अनुशासनिकता के मापक
2.5 अंतर अनुशासनिकता की शोध प्रक्रिया
2.6 सारांश
2.7 बोध प्रश्न
2.8 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

2.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने पश्चात् आप –

- अनुशासन को जान पाने में सक्षम हो सकेंगे।
- अनुशासनिकता और अंतरानुशासनिकता की बहसोंको समझ सकेंगे।
- अंतर अनुशासनिकता के मापक और शोध प्रक्रियाके बारे में समझ विकसित कर पाने में दक्ष हो सकेंगे।

ज्ञान शांति मैत्री

2.1 प्रस्तावना

अतीत में किसी भी समस्या अथवा यथार्थ को जानने के लिए एक मात्र अनुशासन ‘दर्शन’ का सहारा लिया जाता था। कालांतर में प्रकृति के आधार पर यथार्थ के संज्ञान हेतु अनेक अनुशासनों का उदय हुआ जो अपने विषय-क्षेत्र के संदर्भ में घटना-परिघटना, समस्या अथवा यथार्थ आदि की व्याख्या करते थे। समकालीन संदर्भ में ज्ञान व्यापक फलक पर पहुँच चुका है और इस ज्ञान के बारे में स्वस्थ और बेहतर समझ विकसित करने की दृष्टि से हमे अंतरानुशासनिकता की आवश्यकता पड़ती है। वर्तमान समय में किसी एक अनुशासन के अधीन रहते हुए ज्ञान के व्यापक विमर्श कोसमझ पाना दुष्कर है। यहाँ इस संदर्भ में विवरण प्रस्तुत किया गया है। इसके अलावा अनुशासन के अभिप्राय को भी स्पष्ट करने का प्रयास

किया गया है। अंतरानुशासनिकता के अलावा परा-अनुशासनिकता की भी बहस छेड़ी जा रही है, जिसके बारे में यहाँ चर्चा प्रस्तुत की गई है।

2.2 अनुशासन क्या है?

यहाँ अनुशासन का तात्पर्य व्यावहारिक तौर पर प्रयोग किए जाने वाले अर्थ से अलग है। सामान्यतः हम अनुशासन को जीवन जीने की बेहतर विधि के रूप में नियोजित करने वाले प्रारूप के संदर्भ में व्याख्यायित करते हैं। परंतु यहाँ अनुशासन का अभिप्राय विभागीय सीमा-क्षेत्र से है, जो ज्ञान को अपने-अपने तरीके से प्रस्तुत करता है। सामाजिक विज्ञानों में सभी अनुशासनों(जैसे- दर्शनशास्त्र, इतिहास, अर्थशास्त्र, राजनीतिशास्त्र, समाजशास्त्र, मानव विज्ञान, मनोविज्ञान, समाज कार्य आदि) की पृथक प्रविधि और मापक होते हैं, जो यथार्थ को भिन्न-भिन्न परिदृश्य में देखने की कवायद करते हैं। प्रत्येक अनुशासन स्वयं में तार्किक व वैज्ञानिक प्रकृति के होते हैं। सभी अनुशासन के परिप्रेक्ष्य, प्रविधि, तथ्यों के विश्लेषण व प्रस्तुतीकरण, मापक आदि पृथक प्रकार के होते हैं।

सामान्य शब्दों में अनुशासन को संबंधित विषयक्षेत्र में यथार्थ को तलाशने और व्याख्या करने वाले उपकरण के रूप में अभिव्यक्त किया जा सकता है। कालांतर में अनुशासन विशिष्ट से संबंधित विद्वानों द्वारा सिद्धांतों को निर्मित किया गया, जिसके आधार पर उनके अध्ययन और उनकी तलाश निर्देशित और नियंत्रित की जा सके। ये सिद्धांत यथार्थ को तलाशने के संदर्भ में संबंधित अनुशासन के प्रति मित्रवत प्रवृत्ति के थे। फलतः इन सिद्धांतों ने अनुशासन विशेष को ही अपनी परिधि और सीमा बना लिया तथा उसके अधीन ही यथार्थ की शिनाख़्त करना आरंभ कर दिया। निश्चित तौर पर एक अनुशासन दूसरे से सैद्धांतिक मान्यताओं व प्रविधियों की भिन्नता के कारण अलग होता है। यदि सामान्य शब्दों में कहा जाए, तो अनुशासन वह विषय अथवा अंतर्दृष्टि है जो संबंधित विषयक्षेत्र में स्वयं का प्रभुत्व रखता है और उससे संबंधित विभिन्न मानकों व प्रतिमानोंमें श्रेष्ठ होता है। इसके अलावा संबंधित विषयक्षेत्र के अध्ययन हेतु विशिष्ट ज्ञान-मीमांसीय प्रविधि का प्रयोग करता है और साथ ही ज्ञान की परिधि के अनुरूप वह स्वयं को विषय-क्षेत्र में बांधकर रखता है। अनुशासन विशेष विभिन्न सिद्धांत, तथ्य, अवधारणाओं, परिभाषा, अर्थ, विशेषताओं, प्रकार, सूचनाओं, तकनीक, प्रविधि, उपागम आदि से संबंधित पृथक दृष्टिकोण विकसित करता है।

अकादमिक तौर पर अनुशासन को परिभाषित करना बहुत कठिन कार्य माना जाता है। इसलिए अनुशासन को समझने के लिए हमें उसकी विशेषताओं को समझना होगा, जो उसकी कसौटियां भी मानी जाती है। इसी के आधार पर किसी विषय को अनुशासन का दर्जा मिलता है।

अनुशासन की विशेषताएं

1. अध्ययन क्षेत्र की पहचान
2. विभाग का दर्जा, अकादमिक क्षेत्र में औपचारिक मान्यता तथा स्वायत्तता
3. सिद्धांत एवं ज्ञान का पर्याप्त ढांचा

4. समस्या के अध्ययन व जांच के लिए एक समान्य प्रणाली
5. शोध, व्यवहार तथा ज्ञान में योगदानकर्ता के रूप में सम्मानजनक स्थिति में पहुंचे हुए लोगों की संख्या अनुशासन में तथा अनुशासन के बाहर भी हो।
6. शिक्षित समाज द्वारा सहयोग प्राप्त हो
7. इसके अध्ययन में रुचि लेने वाले लोगों की संख्या
8. उक्त क्रियाकलापों की आयु

2.3 अनुशासन और अंतरानुशासनिकता(अंतर- अनुशासनिकता)

उक्त वर्णित अनुशासन की व्याख्या के आधार पर यह स्पष्ट किया जा सकता है कि अनुशासन विशिष्ट के संदर्भ से विश्लेषित होने वाला ज्ञान अथवा यथार्थ की परिभाषा अत्यंत संकुचित प्रकार की है।इस प्रकार की समस्या के मद्देनज़र अनुशासन की परिधि और उसकी सीमा को लांघने की आवश्यकता महसूस की गई। ज्ञान के विस्तारीकरण के कारण उसे किसी अनुशासन में बांधकर रखा जाना न ही उचित है और न ही संभव। इसके अलावा एक अन्य तर्क यह है कि सभी अनुशासनों की कुछ विशेषताएँहोती हैं और कुछ सीमाएं भी होती हैं। किसी भी अनुशासन विशेष द्वारा सभी शोध विशेषताओं, तकनीकों और परिणामों का संज्ञान कर पाना संभव नहीं है। इसके लिए उसे बाहरी ज्ञान और सहारे की आवश्यकता होती है। इस प्रकार से वह विश्व दृष्टि प्राप्त कर लेता है, जिससे उसमें लचीलेपन और सार्वभौमिकता को गुण आ जाता है। सामान्य तौर पर अंतरानुशासनिकता की बहस को 70 के दशक से आरंभ माना जाता है। अंतरानुशासनिक अध्ययन में दो अथवा उससे अधिक अनुशासनों के दृष्टिकोणों का समन्वय अथवा एकीकरण पाया जाता है। इसमें दो भिन्न अनुशासनों के सिद्धांतों, तथ्यों, अवधारणाओं, प्रविधियों, पदों आदि के माध्यम से सामाजिक घटनाओं-परिघटनाओं का विश्लेषण प्रस्तुत किया जाता है। इसके अंतर्गत किसी भी घटना अथवा समस्या के बारे में संज्ञान करने के लिए अलग-अलग अनुशासनों के दृष्टिकोणों का प्रयोग कर बेहतर और प्रभावी व्याख्या प्रस्तुत करने का प्रयास किया जाता है।

- **क्लीन एवं नेवेल (1994) के अनुसार**, *"अंतरानुशासनिक अध्ययन प्रश्नों के उत्तर देने की एक प्रक्रिया है, समस्या समाधान की एक प्रणाली या बहुत जटिल या विस्तृत विषय को संबोधित करने की एक शैली है, जो एक अनुशासन के द्वारा पूर्ण रूप से संबोधित नहीं होपाते और विषय से परिप्रेक्ष्य तथा अंतर्दृष्टिको समन्वित कर व्यापक परिप्रेक्ष्य की रचना करता है।"*
- **वेरोनिका बायक्स मन्सिला(2005) के शब्दों में**, *"ज्ञान को समन्वित या एकीकृत करने की क्षमता या विचार/सोचने की वैसी पद्धति, जिन्हें दो या उससे अधिक ज्ञान अनुशासनों से लिए गए हो, जिसका उद्देश्य संज्ञानात्मक या ज्ञानात्मक प्रगति को प्राप्त करना होता है।"*

उपर्युक्त वर्णित परिभाषाओं के आधार पर यह कहा जा सकता है कि ज्ञान की स्पष्ट और बेहतर व्याख्या प्रस्तुत करने की दृष्टि से अंतरानुशानिकता एक उचित विकल्प है।अंतरानुशासनिक अध्ययन के प्रकारों के बारे में विभिन्न विद्वानों में मतभेद है। अमेरिका में समाज वैज्ञानिकों का एक बड़ा समूह इस बात की कवायद करता है कि अंतरानुशासनिक अध्ययन को विभिन्न भागों में विभाजित करना उचित नहीं है। यदि ऐसा हम करते हैं, तो अंतरानुशासनिक अध्ययन जिस उद्देश्य को लेकर पल्लवित एवं पुष्पित हो रहा है, वही नहीं रहेगा। हालांकि अंतरानुशासनिक अध्ययन को प्रमुख रूप से निम्नलिखित भागों में वर्गीकृत किया जा सकता है–

- **इंट्रा-आनुशासनिक अध्ययन**

  इंट्रा-आनुशासनिक अध्ययन के केंद्र में मानव व्यवहार या मानव व्यवहार का प्रकटीकरण होता है। जब किसी एक अनुशासन विशेष के ही किसी विषय-क्षेत्र की अवधाराणाओं, तथ्यों, सिद्धांतों एवं प्रविधियों का समन्वय कर किसी समस्या का समाधान प्रस्तुत किया जाता है, तो ऐसे अध्ययन को इंट्रा-आनुशासनिक अध्ययन कहा जाता है। इसे निम्न चित्र के आधार पर सरलता से समझा जा सकता है –

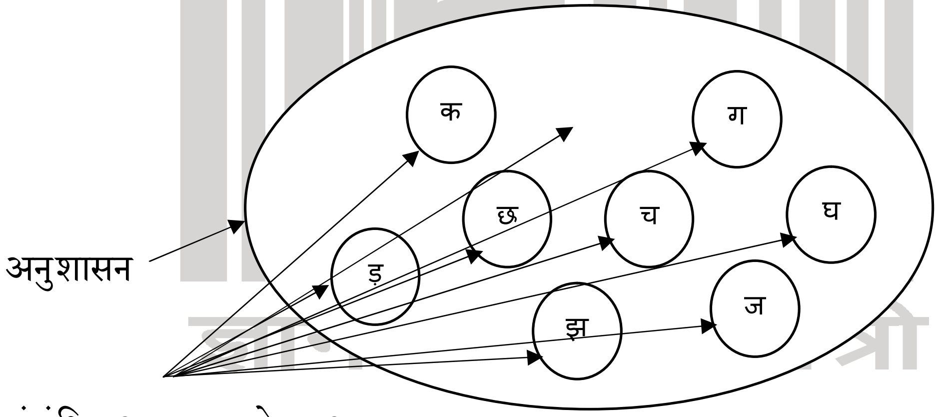

संबंधित अनुशासन के उपअनुशासन

(क, ख, ग, घ, ड़, च, छ, ज, झ)

- **अंतरानुशासनिक अथवा इंटर-आनुशासनिक अध्ययन**

  इसमें व्यवस्थित रूप से प्रयत्न कर विभिन्न आनुशासनिक परिप्रेक्ष्यों के समाकलन द्वारा एक वैकल्पिक परिप्रेक्ष्य के रूप में एक एकीकृत विश्लेषणात्मक रूपरेखा को निर्मित किया जाता है और इस रूपरेखा के आधार पर किसी समस्या अथवा घटना की व्याख्या प्रस्तुत की जाती है। इसे निम्न चित्र की सहायता से समझा जा सकता है –

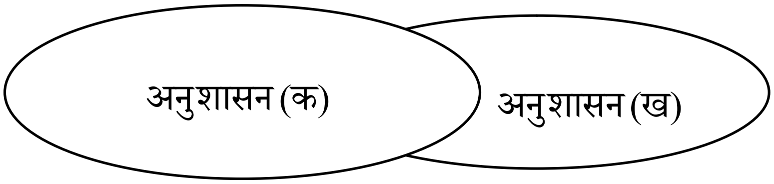

- **बहु-अनुशासनिक अथवा मल्टी-अनुशासनिक अध्ययन**

इसमें व्यवस्थित रूप से आनुशासनिक परिप्रेक्ष्यों को समाकलित करने का प्रयात्म किए बिना ही किसी घटना अथवा समस्या को विभिन्न परिप्रेक्ष्यों की सहायता से विश्लेषित किया जाता है। यहाँ किसी घटना विशेष को अलग-अलग लोग अपने-अपने ज्ञानानुशासन परंपरा की विधियों से देखने का प्रयत्न करते हैं। इसे निम्न चित्र के माध्यम से अभिव्यक्त किया जा सकता है –

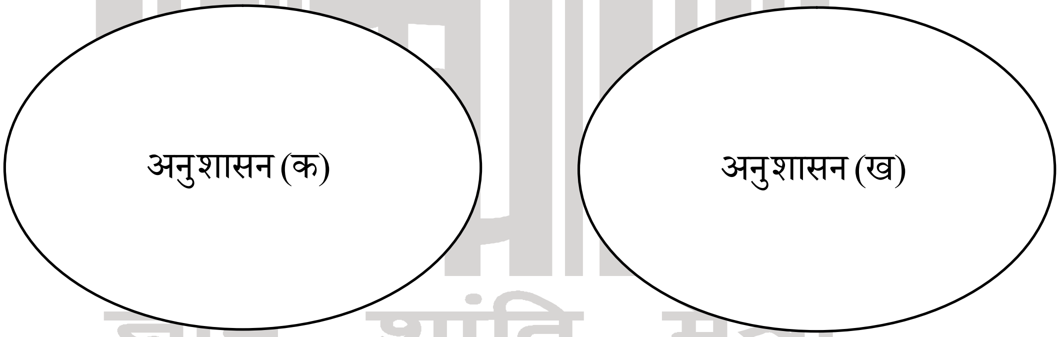

ज्ञान शांति मैत्री

- **पार-आनुशासनिक अथवा क्रॉस-अनुशासनिक अध्ययन**

इसमें मूलतः किसी आनुशासनिक विषय-वस्तु से संबंधित माने जाने वाली घटनाओं अथवा समस्याओं का परीक्षण अन्य किसी अनुशासनिक दृष्टिकोण से किया जाता है। अर्थात जब किसी एक अनुशासन के शोध परिणाम को दूसरे अनुशासन का विशेषज्ञ उसकी वैधता की जांच करता है, तो इसे पार-आनुशासनिक अध्ययन की संज्ञा दी जाती है। इसे निम्न चित्र के माध्यम से समझा जा सकता है –

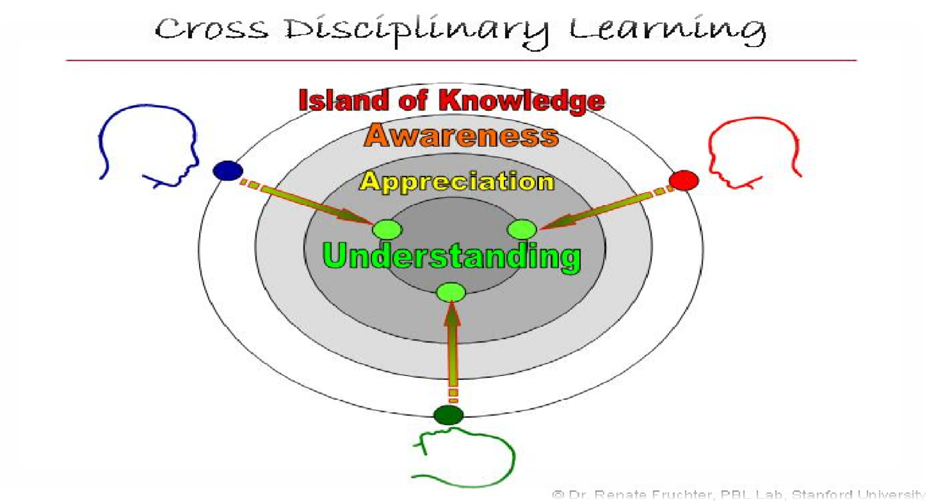

- **पार-अनुशासनिक अथवा ट्रांस-अनुशासनिक अध्ययन**

जब विभिन्न अनुशासनों के समन्वय से समस्या का समाधान नहीं होता है अथवा घटना के बारे में यथार्थ ज्ञान प्राप्त नहीं हो पाता है, तो उस परिस्थिति में इस विधि का प्रयोग किया जाता है। जब दो या दो से अधिक अनुशासन आपस में समन्वय कर एक नए विषय ढाँचे का निर्माणकरते हैं और समस्या का समाधान करते हैं, तो ऐसी विधि को पार-आनुशासनिक अध्ययन कहा जाता है। इसके संज्ञान हेतु निम्न चित्र प्रस्तुत है–

तत्कालिक समस्या के समाधान अथवा घटना के यथार्थ विश्लेषण के लिए नए अनुशासन का निर्माण

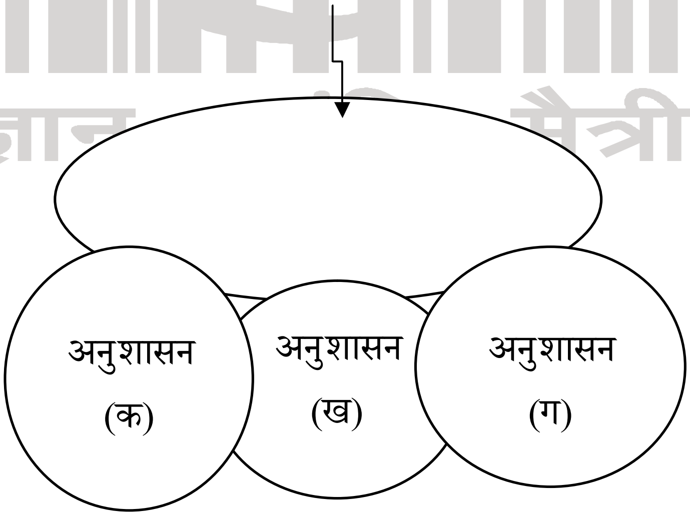

2.4 अंतर अनुशासनिकता के मापक

गैर-अनुशासनात्मक अध्ययनों की एक प्रमुख विशेषता यह होती है कि वे प्रयोगउन्मुखी होते हैं। सामाजिक समस्याओं अथवा घटनाओं में परिवर्तन हो जाने पर भी गैरअनुशासनात्मक अध्ययनों के

प्रवाह निरंतरता में बने रहते हैं। हालांकि अनुशासनात्मक अध्ययनों में समकालीन संदर्भमें काफ़ी परिवर्तन आए हैं। यदि स्पष्ट तौर पर कहा जाए, तो अनुशासनात्मक अध्ययन और गैर-अनुशासनात्मक अध्ययन एकरूपता व विषमता तथा स्थिरता व प्रवाह के मसले पर विश्वासप्रद नहीं हैं। अनुशासनों के समायोजन के स्तर से इन समस्याओं पर अंकुश लगाया जा सकता है। इसी समायोजन के प्रत्युत्तर के रूप में अंतरानुशासनिक अध्ययनों की नींव पड़ी। अंतरानुशासनिक विश्लेषण मुख्य रूप से दो अथवा दो से अधिक अनुशासनों के दृष्टिकोणों का समन्वय है तथा इस समन्वय की सहायता से किसी समस्या अथवा किसी घटना के यथार्थ को जानने का प्रयास किया जाता है। अंतरा आनुशासनिक शोध की पद्धति ज्ञान की बुनियादी समझ के विकास और समस्या-निवारण में विशेष तौर पर लाभकारी होती है।

अंतरा आनुशासनिक शोध पद्धति किसी प्रश्न के उत्तर की तलाश करने अथवा किसी समस्या के समाधान प्रस्तुत करने अथवा किसी घटना का अध्ययन करने का एक तरीकाहै, जिसमें संबंधित उद्देश्य की पूर्ति के लिए विभिन्न अनुशासनों की मदद ली जाती है। सभी ज्ञानमीमांसीय प्रविधियों का प्रयोग कर यथार्थ की तलाश करना ही इसका प्रमुख उद्देश्य होता है। समकालीन समय में नितनई समस्याएं उत्पन्न होने लगी हैं और इनका निवारण किसी एक अनुशासन की प्रविधियों, सिद्धांतों के आधार पर कर पाना दुष्कर है। इन समस्याओं के कारण अंतर अनुशासनिक अध्ययनों के कई मापक विकसित हो गए हैं। इन मापकों की सहायता से समस्या-निवारण के तार्किक प्रयास किए जाते हैं। कालांतर में अंतरा अनुशासनिकता के कई मापक विकसित हुए, जिनकी चर्चा इस इकाई में पहले ही की जा चुकी है–

- इंट्रा-आनुशासनिक अध्ययन
- अंतरानुशासनिक अथवा इंटर-आनुशासनिक अध्ययन
- बहु-अनुशासनिक अथवा मल्टी-आनुशासनिक अध्ययन
- पार-अनुशासनिक अथवा क्रॉस-आनुशासनिक अध्ययन
- पार-अनुशासनिक अथवा ट्रांस-आनुशासनिक अध्ययन

ज्ञान शांति मैत्री

2.5 अंतरा अनुशासनिकता की शोध प्रक्रिया

अंतरा अनुशासनिकता की शोध प्रक्रिया को साधारणतः निम्न चरणों में वर्गीकृत किया जा सकता है –

1. **शोध समस्या**

   सामाजिक समस्याओं की प्रकृतिअथवा किसी सामाजिक घटना को समझना एवं उस समस्या जनित घटना को क्या, क्यों, कैसे, कब आदि के रूप में तार्किक प्रश्न रख कर उसका अपने अनुसंधान के लिए शोध समस्या के रूप में चुनाव करना प्रथम चरण होता है।
2. **औचित्य का निर्धारण**

शोध समस्या में शोध के प्रश्न को उल्लेखित करना और उसकी प्रकृति के आधार पर यह समझना कि शोध के प्रश्न अंतरा अनुशासन का निर्धारण कर रहे हैं अथवा नहीं। अर्थात किए जाने वाले शोध के प्रश्न अलग-अलग विषयानुशासनों की परिधि के तहत हैं अथवा उनके परिधि से बाहर परे हैं।

3. उपयोगी अनुशासनों की सूची

यदि शोध समस्या के प्रश्न का दृष्टिकोण अलग-अलग विषयानुशासनों को निर्धारित करता है, तो सबसे पहले उन विषयानुशासनों की सूची बना ली जाती है। इसके बाद उनके ज्ञान मीमांसा अर्थात अवधारणा, सिद्धांत, प्रविधि आदि का सहारा लेकर शोध-कार्य आरंभ करना होता है।

4. शोध साहित्य की तलाश

इसके बाद शोध को एक निश्चित दिशा प्रदान करने वाले शोध साहित्य की तलाश की जाती है, जिनमें पुस्तकों, लेखों व इंटरनेट आदि की सहायता ली जाती है। यदि शोध-समस्या अंतरा अनुशासनिकता को निर्धारित करता है, तब अंतरा अनुशासनिक दृष्टिकोण से संबंधित साहित्यों की तलाश की जाती है।

5. उपयोगी अनुशासनों से प्राप्त अवधारणाओं, सिद्धांतों और विधियों का परिष्करण

जब शोध समस्या का क्षेत्र अंतरा अनुशासन के परिप्रेक्ष्य से संबंधित होता है, तो ऐसे में उसके अध्ययन के लिए उपयोगी अनुशासनों के ज्ञान मीमांसा अथवा अवधारणाओं, सिद्धांतों व प्रविधियों को लेकर समन्वय के द्वारा पदों का परिष्करण कर लिया जाता है। ऐसा इसलिए किया जाता है, क्योंकि अंतरा अनुशासनिक शोध समस्या को समझने के लिए सभी अनुशासनों के ज्ञान-क्षेत्र की सहायता से व्याख्या सरलता से की जा सकती है और साथ ही प्राप्त तथ्य भी अपेक्षाकृत अधिक विश्वसनीय व तार्किक होते हैं।

6. समस्या से संबंधित प्रत्येक आनुशासनिक अंतर्दृष्टि कीपहचान

किसी भी समस्या के संबंध में यह देखा जाता है कि समस्याकिन ज्ञानानुशासनों के अध्ययन क्षेत्र से संबंधितहै। इस प्रकार से समस्या को बेहतर ढंग से समझने के अवसर अधिक होते हैं। समस्या के दृष्टिकोण के अनुरूप, विषयानुशासनों की अंतर्दृष्टिकी पहचान करके समस्या के प्रति निवारण एवं व्याख्या की जाती है।

7. अंतर्दृष्टियों के बीच संघर्ष और उनके स्रोतों की पहचान

प्राप्त किए गए विषयानुशासनों के दृष्टिकोण और शोध समस्या के मध्य संघर्ष हो सकता है क्योंकि किसी घटना के प्रति सभी विषयानुशासनों के दृष्टिकोण एक समान नहीं होते हैं। अलग-अलग दृष्टिकोण होने के कारण संघर्ष पैदा हो जाते हैं इस हालात में उनके संघर्ष को पैदा करने वाले दृष्टिकोणों के स्रोत क्या है? और कहाँ है? आदि प्रश्नों के उत्तरों की तलाश की जाती है।

8. समान धरातल की रचना

शोध समस्या के समाधान के लिए यह आवश्यक होता है कि विषयानुशासनों की अंतर्दृष्टियों को एक समान धरातल पर लाया जाए, जिससे कि वे अपने विषय क्षेत्र में रहकर शोध समस्या की व्याख्या अथवा समस्या का निवारण कर सके और उनमें किसी प्रकार से अंतर्दृष्टियों को लेकर हस्तक्षेप या संघर्षना हो।

9. अंतर्दृष्टियों का एकीकरण

विभिन्न विषयानुशासनों की अंतर्दृष्टियों को उनके विषय क्षेत्र में रखकर व समान धरातल पर लाने के पश्चात उनकी अंतर्दृष्टियों का एकीकरण किया जाता है। इससे घटना की व्याख्या करने में संघर्ष की स्थिति उत्पन्न नहीं होती और किसी घटना की व्याख्या हर परिप्रेक्ष्य से कर अध्ययन के नए क्षेत्र का निर्माण भी किया जा सकता है।

10. अंतरा अनुशासनिक समझ का विकास एवं परीक्षण

अंतरा अनुशासन को समझने के लिए उसकी विशेषताओं अथवा लक्षणों को समझना पड़ेगा। जैसे कि अंतरा अनुशासन का प्रमुख कार्य ज्ञान का एकीकरण और दोअथवा दो से अधिक ज्ञान अनुशासनों को साथ लेकर विचार करने की पद्धति को विकसित करना है। यहाँ ज्ञान के एकीकरण का तात्पर्य किसी विशिष्ट समस्या की समझ अथवा बौद्धिक प्रश्न के लिए प्रासंगिक अनुशासनों की पहचान व उनके आनुशासनिक अंतर्दृष्टि का समिश्रण कर वास्तविकता में किसी घटना के परीक्षण से है।

2.6 सारांश

सारांशतः यह कहा जा सकता है कि अंतरा अनुशासनिकता एक ऐसा धरातल है जहां यथार्थ की तलाश कई अनुशासनों की प्रविधियों, तकनीकों, अवधारणाओं आदि के प्रयोग से करने की कवायद की जाती है। इस इकाई में अनुशासन और अंतरा अनुशासन के विमर्श को प्रस्तुत किया गया है। इसके साथ ही अंतर अनुशासन के मापकों पर भी चर्चा की गई है। इस इकाई के अंत में अंतरा अनुशासन की शोध प्रक्रिया के बारे में विवरण प्रस्तुत किया गया है।

2.7 बोध प्रश्न

बोध प्रश्न 1: अनुशासन क्या है? स्पष्ट कीजिए।

बोध प्रश्न 2: अंतरानुशासनिकता के बारे में विवरण प्रस्तुत कीजिए।

बोध प्रश्न 3: अंतरानुशासनिकता की शोध प्रविधि पर प्रकाश डालिए।

बोध प्रश्न 4: टिप्पणी लिखिए –

1 . इंट्रा-अनुशासनात्मक अध्ययन
2 . बहु-अनुशासनात्मक अध्ययन
3 . पार-अनुशासनात्मक अध्ययन
4 . परा-अनुशासनात्मक अध्ययन

2.8 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

Augsburg, T. (2006). *Becoming interdisciplinary: An introduction tointerdisciplinary studies* (2nd ed.). Dubuque, IA: Kendall/Hunt.

Bandura, A. (1998). Mechanism of moral disengagement. In W. Reich (Ed.),*Origins of terrorism: Psychologies, ideologies, theologies, states of mind* (pp.161-191). Washington, D.C.: Woodrow Wilson Center Press.

BoixMansilla, V. (2005). Assessing student work at disciplinary crossroads.*Change*, January/February, 14-21.

BoixMansilla, V. & Gardner, H. (2003, December 1). Assessing interdisciplinarywork at the frontier: *An empirical exploration of "symptoms of quality."*GoodWork Project Report Series, Number 26. Retrieved August 2, 2006, from http://www.pz.harvard.edu/ebookstore/search_results.cfm.

Clark, H.H. (1996). *Using language. Cambridge*. MA: Cambridge University Press.

Davis, J.R. (1995). Interdisciplinary courses and team teaching*: New arrangementsfor learning*. Phoenix, AZ: American Council on Education, OryxPress.

Klein, J.T. & Newell, W.H. (1997). *Advancing interdisciplinary studies*. In J.G.Gaff, J.L. Ratcliff & Associates (Eds.), Handbook of the undergraduatecurriculum: *A comprehensive guide to purposes, structures.* practices, andchange (pp. 393-415). San Francisco: Jossey-Bass.

Moran, J. (2002). *Interdisciplinarity*. New York: Routledge.

Newell, W.H. (2001). *A theory of interdisciplinary studies*. Issues In IntegrativeStudies, 19, 1-25.

Martinello, M. L. & Cook, G. E. (1994). *Interdisciplinary inquiry in teaching and learning.* NewYork: Macmillan College Publishing.

Palmer, J. M. (1995). *Interdisciplinary curriculum - again. In J. A. Beane (Ed.)toward a coherentcurriculum (pp. 55-61).* Alexandria,VA: Association for Supervision and Curriculum Development.

Short, E. C. & Jennings, Jr., T. J. (1976). Multidisciplinary: *An approach to alternative curriculumthought.* Educational Leadership, 33(8), 590-594.
Bie, Pierre de. *"Multidisciplinary Problem Focused Research."* International Social Science Journal,Vol. XX, No. 2 (1968).
Eckhardt, Caroline. *Interdisciplinary Programs and Administrative Structure.* PennsylvaniaState University: University Park, 1978.
Heckhausen, Heinz. "*Discipline and Interdisciplinarity."* Interdisciplinarity. Leo Apostel et al.,eds. OECD: Paris, 1972.
Miller, Raymond C. "*Interdisciplinary Social Science and San Francisco State College."* Mimeo,1969.
Petrie, Hugh G. "*Do You See What I See?" The Epistemology of Interdisciplinary Inquiry.*" The Journalof Aesthetic Education, Vol. 10, No. 1 (January 1976), pp. 29-43.

ज्ञान शांति मैत्री

इकाई 3
अनुशासन के रूप में समाज कार्य का उदय
इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य
3.1 प्रस्तावना
3.2 समाज कार्य व्यवसाय का इतिहास और विकास
3.3 समाज कार्य: अनुशासन के रूप में
3.4 समाज कार्य के प्रकार्य
3.5 समाज कार्य से संबंधित अन्य अनुशासन
3.6 सारांश
3.7 बोध प्रश्न
3.8 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

3.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप–

- समाज कार्य व्यवसाय के इतिहास को जान पाएंगे।
- समाज कार्य के विकास और प्रकार्य को समझा सकेंगे।
- अनुशासन के रूप में समाज कार्य के बारे में समझ विकसित कर पाने में दक्ष हो सकेंगे।
- समाज कार्य से संबंधित अन्य अनुशासनों के बारे में संज्ञान कर सकेंगे।

ज्ञान शांति मैत्री

3.1 प्रस्तावना

इस इकाई में समाज कार्य अनुशासन के उदय से संबंधित तथ्यों के बारे में विचार प्रस्तुत किए गए हैं। सामान्य तौर पर समाज कार्य को एक व्यवसाय के रूप में विश्लेषित किया जाता है। यहाँ इस अनुशासन के उदय और विकास के पारिस्थितिक कालक्रम के बारे में चर्चा की गई है। समाज कार्य के एक अनुशासन के उदय हेतु कौन सी दशाएँ प्रभावी रही हैं और उनका इस अनुशासन के विकास में कितना योगदान है। अंत में इस इकाई के माध्यम से समाज कार्य की प्रकार्यात्मक उपयोगिता को प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है।

3.2 समाज कार्य व्यवसाय का इतिहास और विकास

यहाँ समाज कार्य व्यवसाय के इतिहास और विकास के बारे में संक्षेप में विवरण प्रस्तुत किया जा रहा है। सामान्य तौर पर समाज कार्य को दान-धर्म उन्मुखी कार्यों से आरंभ माना जाताहै। ये कार्य पहले चर्च के माध्यम से किए जाते थे (इंग्लैंड और संयुक्त राज्य अमेरिका)। इसके बाद समय परिवर्तित हुआ और यह कार्य जन-साधारण की सहायता के रूप में किए जाने लगे। आरंभ में इस कार्य के लिए केवल ऐच्छिक स्वीकृति आवश्यक होती थी और इसके लिए किसी व्यवस्थात्मक अनुबंध का अभाव था। इसके बाद 1536 में इंग्लैंड में एक कानून बनाया गया, जिसमें गरीबों की सहायता के लिए एक व्यवस्थित कार्य-योजना का निर्माण किया गया। 18वीं सदी में औद्योगिक क्रांति के बाद इंग्लैंडऔर अमेरिका में प्रशासन द्वारा गरीबों और हाशिएकृत लोगों को समाज की मुख्यधारा से जोड़ने के लिए अनेक कानूनों की रूपरेखा तैयार की गई। व्यक्तियों के मनोसामाजिक पक्ष के सुधार के लिए 1869 में लंदन चैरिटी संगठन तथा अमेरिका में 1877 में चैरिटी ऑर्गनाइजेशन सोसाइटी द्वारा सर्वप्रथम प्रयास किया गया। इन संस्थाओं द्वारा समुचित जौच-पड़ताल की गई तथा संबंधित व्यक्तियोंके पंजीकरण पर ज़ोर दिया गया। इस प्रक्रिया में संस्था के कार्यकर्ताओं द्वारा व्यक्ति अर्थात सेवार्थी को स्वावलंबी बनाने पर अधिक बल दिया जाता था। कालांतर में इस प्रक्रिया ने सुचिंतित प्रणालीबद्ध स्वरूप धारण कर लिया। 1887 में न्यूयॉर्क में कार्यकर्त्ताओं को इनकार्यों के लिए व्यवस्थित प्रशिक्षण दिया जाने लगा तथा 1910 में अमेरिका में इस प्रकार के प्रशिक्षण हेतु दो वर्षके पाठ्यक्रम का क्रियान्वयन किया गया।

अमेरिका और इंग्लैंड से इतर हमारे देश में भी समाज कार्य का उदय दान-धर्म आदि के कार्यों से ही हुआ है। यहाँ समाज-कल्याण हेतु राजा-महाराजाओं द्वारा दान दिया जाता था, यज्ञ करवाए जाते थे एवं धर्मशालाओं आदि का निर्माण किया जाता था। 18वीं शताब्दी में औद्योगिक क्रांति के फलस्वरूप कई सुधार कार्यक्रम चलाए गए और इन कार्यक्रमों ने भारतीय समाज और जन-साधारण पर गहरा प्रभाव डाला। इसके अलावा ईश्वरचंद विद्यासागर तथा राजा राममोहन राय जैसे समाज सुधारकों ने विधवा पुनर्विवाह पर ज़ोर दिया और सती प्रथा पर रोक लगाने हेतु प्रयास किए। अन्य समाज सुधारकों में गोपाल कृष्ण गोखले, एनी बेसेंट आदि ने आधुनिक समाज सुधारों कोनवीन दृष्टि दी। गोपाल कृष्ण गोखले ने 1905 में सर्वेंट्स ऑफ़ इंडिया की स्थापना की और इसके तहत समाज सेवा के लिए स्नातकों को प्रशिक्षित करना शुरू किया। समाज-कार्य के शिक्षण व प्रशिक्षण हेतु मुंबई में सर दोराब जी टाटा ग्रेजुएट स्कूल ऑफ़ सोशल वर्क की स्थापना 1936 में की गई। वर्तमान समय में हमारे देश में 100 से भी अधिक शिक्षण व प्रशिक्षण संस्थानों में समाजकार्य की शिक्षा प्रदान की जाती है। एक समाज कार्यकर्ता, समाजकार्य की शिक्षा एक व्यवसाय के तौर पर करता है, न कि स्वैच्छिक तौर पर समाज कल्याण के रूप में। स्वैच्छिक तौर पर समाज कल्याण के कार्य को समाज सेवा कहा जाता है।

समाज कार्य व्यवसाय की प्रमुख विशेषताओं को निम्न चित्र की सहायता से सरलता से स्पष्ट किया जा सकता है –

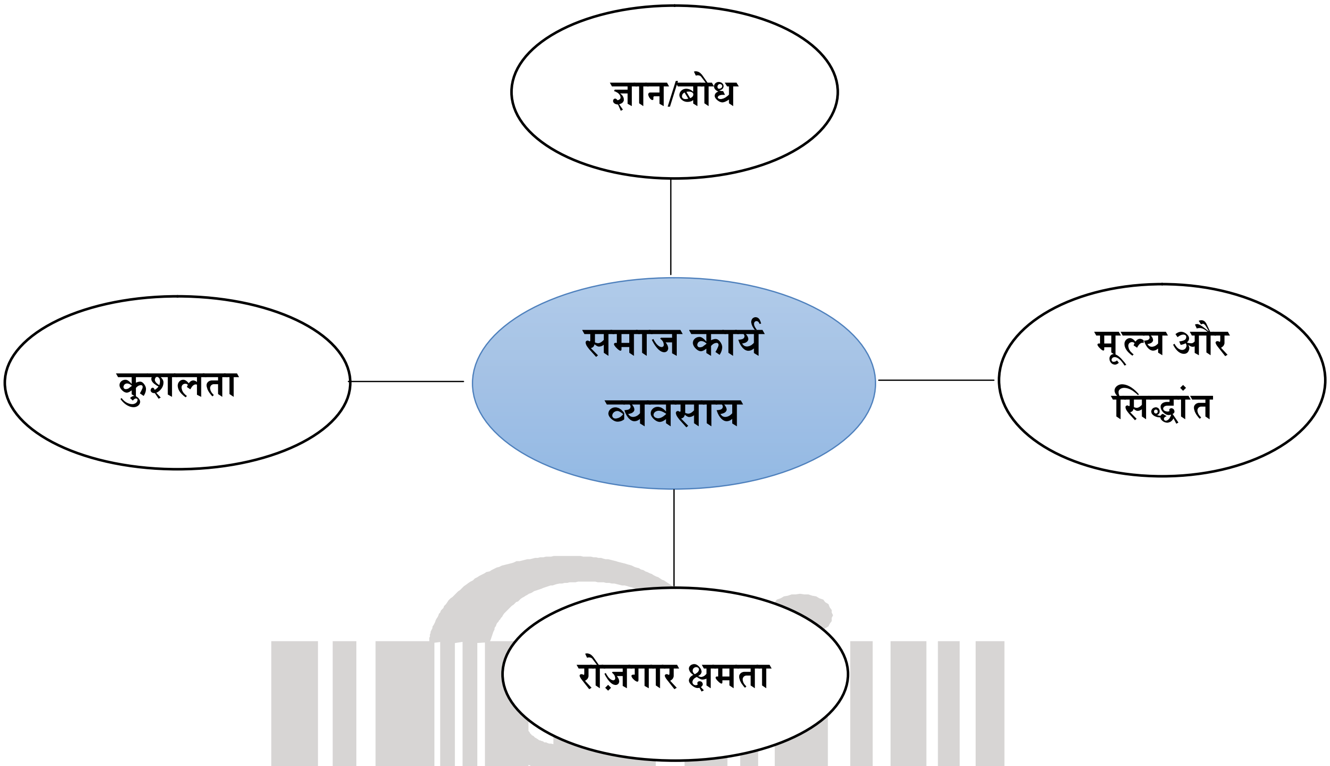

3.3 समाज कार्य: अनुशासन के रूप में

कई विद्वानों द्वारा दिए गए विचारों और व्याख्यानों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि समाज कार्य का अभ्युदय ऐच्छिक और दान-धर्म पर आधारित कार्यों से हुआ है। यह अभ्यास ही कालांतर में एक व्यवसाय के रूप में स्थापित हो जाता है। अन्य विषयों की भाँति, समाज कार्य का एक व्यवसाय के रूप में विकास एक अकादमिक अनुशासन के रूप में ही हुआ है।समाज कार्य, एक व्यवसाय के रूप में ज्ञान के आधार को मज़बूत बनाता है औरसाथ ही लोगों को व्यावसायिक समाज कार्यकर्ता बनने में प्रशिक्षण भी प्रदान करता है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि समाज कार्य अभ्यास से एक अकादमिक अनुशासन के रूप में समाज कार्य के विकास के लिए मार्ग प्रशस्त होता है। अपनी प्रारंभिक अवस्था के बाद से, वहाँ कई विचार विमर्श और जिस उद्देश्य के लिए सामाजिक कार्य के लिए मानव शक्ति गाड़ियों के बारे में बहस कर दिया गया है। इसलिए, सामाजिक कार्य अभ्यास की प्रकृति और सैद्धांतिक इसके लिए आवश्यक सूचनाओं पर विचार विमर्श तार्किक किया गया है।

अन्य सामाजिक विज्ञानों की तुलना में समाज कार्य अत्यंत नवीन अनुशासन है। समाज परिवर्तित हो रहा है और इस परिवर्तन के फलस्वरूप कई समस्याएँ भी उत्पन्न हो रही हैं। इन समस्याओं के निराकरण और समाज को व्यवस्थित बनाए रखने के प्रयोजन से समाज कार्य की आवश्यकता महसूस की गई। जैसा कि

इस इकाई में पहले भी बताया जा चुका है कि समाज कार्य पहले इच्छा आधारित कार्य था, परंतु बाद में इसे एक व्यवसाय के रूप में विकसित किया गया। यह अनुशासन एक व्यवसाय के रूप में सामाजिक संबंधों में होने वाले परिवर्तन, व्यक्तियों के व्यक्तित्व में होने वाले परिवर्तन, समाज की संरचनात्मक व्यवस्था में होने वाले परिवर्तन आदि बदलाव से होने वाले सामाजिक असंतुलन और समस्याओं के समाधान हेतु तत्पर रहता है।

3.4 समाज कार्य के प्रकार्य

समाज कार्य (जैसा कि पहले भी बताया जा चुका है) कि एक व्यावसायिक कार्य है, जो निर्बल और असहाय लोगों की सहायता से संबंधित है। इस सहायता का मूल प्रयोजन यह होता है कि संबंधित लोग स्वयं से ही अपनी सहायता करने में सक्षम हो सकें। समाज कार्य का उद्देश्य समाज में जन-साधारण की समस्याओं का निराकरण करना होता है। इसके लिए एक समाज कार्यकर्ता विभिन्न सामाजिक व व्यावहारिक विज्ञानों के सिद्धांत, कुशलता व ज्ञान का इस्तेमाल करता है और इस आधार पर संबंधित लोगों की समस्याओं का निराकरण करने का प्रयत्न करता है। हालांकि समाज कार्य के सभी प्रकार्यों को यहाँ प्रस्तुत कर पाना दुष्कर है इसलिए यहाँ समाज कार्य के प्रमुख प्रकार्यों को प्रस्तुत किया जा रहा है–

1. **सुधारात्मक प्रकार्य**

   एक व्यवसाय के रूप में समाज कार्य में व्यक्ति और उसके वातावरण के संबंधों को महत्वपूर्ण माना जाता है। इस आधार पर यदि व्यक्ति और वातावरण के अंतःक्रियात्मक संबंध ठीक हैं तो व्यक्ति समायोजन का अनुभव करेगा, परंतु इसके विपरीत यदि व्यक्ति और वातावरण के मध्य अंतःक्रियात्मक संबंध ठीक नहीं हैं तो व्यक्ति को सामाजिक भूमिकाओं के संबंध में कई समस्याओं का सामना करना पड़ सकता है। इसलिए समाज कार्यकर्ता की यह ज़िम्मेदारी बनती है कि वह विचलनपूर्ण व्यवहार करने वाले व्यक्तियों के व्यवहारों में आवश्यक सुधार करे और उनकी अंतःक्रिया करने की क्षमता को विकसित करे। सामान्यतः ये सुधारात्मक प्रकार्य अपराधी सुधार गृहों से संबंधित होते हैं। यहाँ वैयक्तिक सामाजिक कार्यकर्ता अपनी सेवाओं को प्रदान करता है और वह संबंधित व्यक्ति का वातावरण से समायोजन के साथ-साथ उसके पुनर्वास के लिए भी प्रयास करता है। इसके लिए सामाजिक कार्यकर्ता अन्य सुधारकर्ताओं, मनोवैज्ञानिकों व मनोचिकित्सकों की सहायता लेता है तथा संबंधित व्यक्ति की सामाजिक-आर्थिक व पारिवारिक पृष्ठभूमि का संज्ञान करके सुधार करने का प्रयत्न करता है।

2. **निरोधात्मक प्रकार्य**

   निरोधात्मक प्रकार्य से अभिप्राय उन दशाओं के निषेधों से है जो व्यक्ति के जीवन में सामाजिक, आर्थिक व स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं के सृजन में उल्लेखनीय भूमिका निभाते हैं। इन प्रकार्यों के तहत समाज कार्यकर्ता द्वारा संबंधित व्यक्ति के वैयक्तिक व सामुदायिक जीवन में हस्तक्षेप किया

जाता है तथा व्यक्ति को उन परिस्थितियों व तत्वों के बारे में बोध कराया जाता है, जो उनके जीवन में पैदा होने वाली समस्याओं के लिए उत्तरदायी होते हैं। इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु समाज कार्यकर्ता द्वारा समुदायों में निरोधात्मक सेवाओं का संचालन किया जाता है।

3. विकासात्मक प्रकार्य

इन प्रकार्यों के तहत समाज कार्यकर्ता द्वारा समुदाय विकास उन्मुखी कार्यक्रमों के क्रियान्वयन में सहायता की जाती है। समाज कार्यकर्ता समुदाय की विकासात्मक आवश्यकताओं की आपूर्ति हेतु आवश्यक संसाधनों की व्यवस्था करने और उनके समायोजन में सहायता करते हैं। सामान्य तौर पर ये प्रकार्य रोज़गार और विकास उन्मुखी कार्यक्रमों के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

3.5 समाज कार्य से संबंधित अन्य अनुशासन

समाज कार्य अनुशासन का मुख्य उद्देश्य समस्याओं का उन्मूलन करना होता है। इसके लिए समाज कार्य अन्य अनुशासनों की प्रविधियों और साधनों को उपयोग में लाता है और साथ ही इन अनुशासनों के व्यावहारिक ज्ञान के आधार पर भी समाज कार्य को काफ़ी मदद मिलती है। यहाँ उन अंतर्संबंधित अनुशासनों का उल्लेख किया जा रहा है, जिनका समाज कार्य अनुशासन से घनिष्ठ संबंध है–

- **समाजशास्त्र**

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है और वह सदैव किसी-न-किसी समाज का अंग बनकर जीवन व्यतीत करता है। व्यक्ति के जीवनकाल में उसे कई समस्याओं का सामना करना पड़ता है। ये समस्याएँ वैयक्तिक व सामाजिक दोनों प्रकार के कारकों द्वारा नियोजित हो सकती हैं। ये समस्याएँ सामाजिक व्यवस्था को तोड़ने का काम करती हैं, समाज में विचलन, विघटन लाती हैं। उन सामाजिक घटनाओं का अध्ययन समाजशास्त्र का मुख्य उद्देश्य है, जो समाज को विघटित करने के लिए उत्तरदायी होती हैं। ये समस्याएँ न केवल वैयक्तिक जीवन पर दुष्प्रभाव डालती हैं अपितु पूरे समाज को भी दूषित कर देती हैं। समाजशास्त्र का अध्ययन क्षेत्र मानवीय क्रियाएँ और उनके पारस्परिक संबंध भी होते हैं। मानव की अनेक समस्याएँ उनकी आपसी अंतर्क्रियाओं से जुड़ी होती हैं। इस कारण से समाज कार्यकर्ता को इनके बारे में गूढ़ ज्ञान की जरूरत पड़ती है और इसके लिए समाजशास्त्र का सहयोग बहुमूल्य होता है।

- **मनोविज्ञान**

इस अनुशासन के तहत अनेक प्रकार की मानसिक प्रक्रियाओं, व्यवहारों व मानव प्रकृति के निर्माणकारी तत्वों के बारे में बोध किया जाता है। इसकी सहायता से मानव की मानसिक अवस्थाओं के बारे में संज्ञान किया जाता है और मानसिक समस्याओं के बारे में जानकारी प्राप्त की जाती है। इसके अलावा मानवविज्ञान मानसिक समस्याओं को सुलझाने हेतु परामर्श आदि तकनीकों का प्रयोग

भी करता है। ठीक इसी प्रकार से समाज कार्य भी मानव और उसके पर्यावरण के साथ समायोजन को महत्व देता है और कुसमायोजन से उत्पन्न होने वाली समस्याओं के निदान हेतु परामर्श और नैदानिक तकनीकों का प्रयोग करता है। मानव व्यवहार को परिवर्तित करने के लिए व्यक्तित्व के अध्ययन, संप्रेरणाओं के विश्लेषण व व्यक्ति की प्रेणाओं तथा प्रत्युत्तरों के अर्थ को जानने के लिए मनोविज्ञान सहायक सिद्ध होता है।

- **अर्थशास्त्र**

यह अनुशासन मानव जीवन के आर्थिक पक्षों का वैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत करता है। इसके तहत उपभोग, उत्पत्ति, वितरण, विनिमय आदि प्रकार के पहलुओं पर चर्चा की जाती है। समाज कार्य की तरह ही अर्थशास्त्र भी समाज के सभी वर्गों के लिए न्यूनतम जीवन स्तर के लक्ष्य को प्राप्त करने का मार्ग प्रशस्त करता है। इसकी सहायता से समाज कार्य संबंधित व्यक्ति की विश्वासों, परंपराओं, मनोवृत्तियों, पूर्वाग्रहों, अवधारणाओं, संगठनों, अनौपचारिक समूहों आदि के बारे में बोध करते हुए आर्थिक क्रियाओं पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करता है। समाज कार्य मानव के विकास के लिए सामाजिक न्याय के साथ-साथ आर्थिक पक्ष को भी बुनियादी शर्त के रूप में महत्व देता है।ये दोनों अनुशासन एक-दूसरे को सुदृढ़ करते हैं।

- **राजनीतिशास्त्र**

इसके अंतर्गत किसी शासन व्यवस्था के स्वरूप, प्रकार, महत्व, संगठन व संवैधानिक व्यवस्थाओं के बारे में बोध किया जाता है। राज्य की नीतियाँ क्या हैं?, क्या होनी चाहिए? आदि प्रश्नों के उत्तरों के बारे में भी अध्ययन किया जाता है। एक समाज कार्यकर्ता को राजनीतिक संस्थाओं व सामाजिक नीतियों के बारे में पर्याप्त ज्ञान होना चाहिए। राज्य द्वारा नियोजित किए गए कानून, नियम-विनियम, कार्यक्रम, परियोजनाएं समाज के कल्याण में सार्थक होते हैं। ये प्रावधान सही ढंग से समाजतक पहुँच सके और उपयुक्त व्यक्ति को इसका लाभ प्राप्त हो सके, इसके लिए यह आवश्यक है कि एक समाज कार्यकर्ता को इनके बारे में पर्याप्त ज्ञान हो। यह संज्ञान उसे राजनीतिशास्त्र की सहायता से होता है।

3.6 सारांश

समाज कार्य, जिसका आरंभ इच्छित कार्य के रूप में हुआ, एक व्यावसायिक अनुशासन बन चुका है और वर्तमान समय में यह अनुशासन ख्याति के एक नए मुकाम पर पहुंचा चुका है। समकालीन संदर्भ में समाज को न केवल व्यावहारिक तौर पर इस अनुशासन की आवश्यकता है, अपितु सैद्धांतिक तौर पर भी इस अनुशासन की उपलब्धि को समाज द्वारा भुनाया नहीं जा सकता है। इस इकाई के माध्यम से एक अनुशासन के रूप में समाज कार्य की विधा को समझने का प्रयास किया गया है। इसके अतिरिक्त समाज कार्य व्यवसाय के इतिहास और विकास पर संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत किया गया है तथा इस इकाई के अंत

में समाज कार्य के प्रमुख प्रकार्यों और समाज कार्य के अन्य अनुशासनों के साथ संबंध को भी स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है।

3.7 बोध प्रश्न

बोध प्रश्न 1: समाज कार्य व्यवसाय के इतिहास और विकास के बारे में विवरण प्रस्तुत कीजिए।
बोध प्रश्न 2: एक अनुशासन के रूप में समाज के विमर्श को स्पष्ट कीजिए।
बोध प्रश्न 3: समाज कार्य के प्रकार्यों पर प्रकाश डालिए।
बोध प्रश्न 4: निम्नलिखित अनुशासनों में से दो अनुशासनों के साथ समाज कार्य के संबंध बताइए-

1 . समाजशास्त्र 2 . अर्थशास्त्र
3 . राजनीतिशास्त्र 3 . मनोविज्ञान

3.8 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

रिचमण्ड, एम. (1917).*सोशल डायग्नोसिस*.न्यूयॉर्क: रसेल सेज फ़ाउंडेशन.
स्किडमोर, आर.,ठाकरे, एम.एवं फ़ारली, वी. (1997).*इंट्रोडक्शन टू सोशल वर्क*बोस्टन: एलिन ऐंड बेकन.
पर्लमैन,एच.एच. (1957).*सोशल केस वर्क: अ प्रॉब्लम सॉल्विंग प्रॉसेस*.शिकागो: द युनिवर्सिटी ऑफ़ शिकागो प्रेस.
सिंह, स.एवं मिश्र,पी.डी. (2001).*समाज-कार्य: इतिहास, दर्शन एवं प्रणालियाँ*.लखनऊ: न्यू रॉयल बुक कम्पनी.
द्विवेदी, र. (2007). *समाज कार्य व्यवसाय: विकास एवं चुनौतियाँ* लखनऊ: न्यू रॉयल बुक कंपनी

खंड- 2

समाज कार्य का इतिहास: वैश्विक परिदृश्य

इकाई- 1 यूरोप (इंग्लैंड) में समाज कार्य ऐतिहासिक विकास

इकाई की रूपरेखा

1.0 उद्देश्य

1.1 प्रस्तावना

1.2 यूरोप/युनाइटेड किंगडम (इंग्लैंड) में समाज कार्य की परिभाषा

1.3 यूरोप/युनाइटेड किंगडम (इंग्लैंड) में समाज कार्य का ऐतिहासिक विकास

1.4 यूरोप/युनाइटेड किंगडम (इंग्लैंड) में समाज कार्य शिक्षा का विकास

1.5 सारांश

1.6 बोध प्रश्न

1.7 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

1.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आप -

- यूरोप/यूनाइटेड किंगडम (इंग्लैंड) में समाज कार्य के ऐतिहासिक विकास को स्पष्ट कर सकेंगे।
- यूरोप/यूनाइटेड किंगडम (इंग्लैंड) में समाज कार्य शिक्षा के विकास को रेखांकित कर सकेंगे।

1.1 प्रस्तावना

वर्तमान समय में समाज कार्य विषय की उपयोगिता को विभिन्न देशों में देखा जा सकता है। लेकिन यदि इतिहास की ओर नज़र डाली जाए तो प्रतीत होता है कि इसका प्रादुर्भाव इंग्लैंड से ही माना जाता है। बाद में यह अन्य देशों में विभिन्न रूपों में विकसित हुआ। समाज कार्य की एक व्यवसाय के रूप में विविधतापूर्ण भूमिकाएं है। इंग्लैंड, जिसे हम यूरोप या युनाइटेड किंगडम के नाम से जानते है, यहाँ सर्वप्रथम समाज कार्य को दान के रूप में प्रारंभ कर आगे व्यावसायिक रूप तक ले जाया गया और इसका विकसित रूप सामने आया। आज सामाजिक कार्यकर्ता लोगों की समस्याओं का समाधान समाज कार्य के मूल्यों, सिद्धांतों एवं ज्ञान के आधार पर कर रहे हैं और विभिन्नसरकारी गैर-सरकारी, निजी एवं औद्योगिक प्रतिष्ठानों के माध्यम से समाज में सक्रिय कार्यकर्ता की भूमिका को अदा कर रहे हैं। इस इकाई के माध्यम से छात्र-छात्राओं को यह बताने का प्रयास किया जा रहा है कि समाज कार्य एवं व्यावसायिक समाज कार्य का प्रारंभ कैसे हुआ, जिसमें यूरोप/युनाइटेड किंगडम (इंग्लैंड) का योगदान किस प्रकार से देखा जा सकता है।

समाज कार्य व्यवसाय को विभिन्न ऐतिहासिक कालक्रमों से गुजरना पड़ा है, जिसमें विभिन्न कालक्रमों का अपना अलग-अलग महत्व है। इस कालक्रम में इंग्लैंड के विभिन्न सामाजिक घटनाक्रम उत्तरदायी रहे हैं। प्रारंभ में दूसरों की सहायता करना एक स्वैच्छिक कार्य था। किंतु इंग्लैंड में इसे राज्य का दायित्व बनाने के लिए प्रयास किए गए, जिसके परिणामस्वरूप निर्धनता कानून का निर्माण हुआ जो आगे चलकर व्यावसायिक समाज कार्य के विकास का आधार बना और इस तरह सरकारी एवं गैर-सरकारी कार्यकर्ता ने समाज कार्य के माध्यम से लोगों की मदद करने लगे।

1.2 इंग्लैंड में समाज कार्य की परिभाषा

1) चेनी के अनुसार :- *समाज कार्य के अंतर्गत ऐसी आवश्यकताओं, जो सामाजिक संबंधों से संबंधित है तथा जो वैज्ञानिक ज्ञान एवं ढगों का उपयोग करती है के संदर्भ में लाभों को प्रदान करने के ऐच्छिक प्रयास सम्मिलित है।*

2) फिंक में मत में :- *समाज कार्य अकेले अथवा समूहों में व्यक्तियों को वर्तमान अथवा भावी ऐसी सामाजिक एवं मनौवैज्ञानिक बाधाओं, जो समाज में पूर्ण प्रभावपूर्ण सहभागिता को रोकती है अथवा रोक सकती है, के विरूद्ध सहायता प्रदान करने हेतु प्ररचित सेवाओं का अवधान है।*

3) स्ट्रप के मत में :- *"समाज कार्य आत्म सहायता करने हेतु लोगों की सहायता करने के वैज्ञानिक ढंग के प्रयोग द्वारा व्यक्ति, समूह एवं समुदाय की आवश्यकताओं को प्रभावित करने हेतु विभिन्न संसाधनों को जुटाने की कला है।"*

4) हेलेन क्लार्क के मत में :- *"समाज कार्य ज्ञान एवं निपुणताओं के मिश्रण से युक्त व्यावसायिक सेवा का एक स्वरूप है, जिसके कुछ अंश समाज कार्य के विशिष्ट अंश है और कुछ नहीं जो एक ओर व्यक्ति के सामाजिक परिवेश में उसकी आवश्यकताओं की संतुष्टि करने में सहायता करने तथा दूसरी ओर यथासंभव उन कठिनाइयों को, जो उस सर्वोत्तम को, जिसके लिए उनमें क्षमता है, प्राप्त करने से लोगों को रोकती है और उसको दूर करने का प्रयास करती है।'*

1.3 इंग्लैंड में समाज कार्य का ऐतिहासिक विकास

प्रत्येक समाज विषमताओं का समाज है जहाँ प्रत्येक स्तर पर विभिन्नता नज़र आती है। इसी समाज में निर्धन तथा निराश्रयी व्यक्ति रहते हैं और समाज का कोई-न-कोई सदस्य ऐसे व्यक्तियों की सहायता किसी-न-किसी रूप में करता आया है । प्रत्येक समाज अपने निर्धन, वृद्ध व मंदबुद्धि सदस्यों को सामाजिक व आर्थिक मदद प्रदान करता आया है। समाज कार्य मानवता का ऐसा रूप है जो निरंतर एक वैज्ञानिक प्रणाली की खोज कर रहा है और दिनों-दिन नए-नए आयामों की ओर अग्रसर है। अन्य देशों की भाँति यूरोप में भी समाज कार्य को धर्म व धार्मिक संस्थाओं द्वारा ही जोड़कर प्रारंभ किया गया है।

यूरोप/यूनाइटेड किंगडम (इंग्लैंड) में किस प्रकार से समाज कार्य का विकास हुआ इसे निम्नवत बिंदुओं के माध्यम से समझा जा सकता है।

इंग्लैंड में समाज कार्य के इतिहास को मुख्यत: निम्नलिखित भागों के अंतर्गत प्रस्तुत किया जा रहा हैं -

1. दान का युग।
2. आवश्यकताग्रस्त व्यक्तियों की सहायता का काल
3. सामुदायिक सेवाओं के आधार पर सहायता का काल
4. श्रम कल्याण के आधार पर सहायता का काल
5. सुधारात्मक सेवाओं के आधार पर सहायता का काल
6. बेवरिज रिपोर्ट।

1. दान का युग

इंग्लैंड के लोग धार्मिक संस्थाओं में परस्पर सहायता प्रदान करने की भावना रखते थे। ईसाई धर्म में निर्धन व्यक्तियों की सहायता करना, ईश्वर की कृपा समझा जाता है। चौदहवीं शताब्दी तक निर्धन व्यक्तियों को दान देना पुण्य का काम समझा जाता था। साथ ही धार्मिक संस्थाओं द्वारा सभी से चंदे की अपील की जाने लगी। जनता भी प्रोत्साहित होकर इसका निर्वाह करने लगी धार्मिक संस्थाओं, गिरिजाघरों, मठों तथा अनाथाश्रमों में अपंग एवं असहाय लोगों की सहायता की जाने लगी। निर्धन व्यक्ति धार्मिक प्रचारकों तथा धार्मिक गुरूओं द्वारा दान प्राप्तकरने में संलग्न रहे। निर्धनों की सहायता का उत्तरदायित्व मुख्य पादरियों, स्थानीय पादरियों और पादरियों के नीचे के तीसरे स्तर 'डेकन्स' के नाम से संबोधित किए जाने वाले अधिकारियों द्वारा किया जाता था।

ईसाई धर्म को राजधर्म का स्तर प्राप्त होने के साथ-साथ मठों में निर्धनों के लिए संस्थाएँ स्थापित की गई, जो अनाथों, वृद्धों, रोगियों और अपंगों की बुनियादी आवश्यकताओं की पूर्ति करती तथा बेघरों को शरण देती थी। निर्धनों की सहायता के एक ऐतिहासिक उल्लेख के अनुसार, "1839 में इंग्लैंड तथा वेल्स की 1,53,57,000 जनसंख्या में निर्धनों पर किया जाने वाला व्यय 44,06,907 पाउंड था।" 15 वीं शताब्दी में बहुत सी संस्थाएँ धनी व्यक्तियों और राज परिवारों के सदस्यों द्वारा दिए गए धन से बनाए गए कोष से चलाई जा रही थी। भोजन का दैनिक वितरण मठों के दरवाजों पर होता था और बेघर व्यक्तियों को मठों में शरण मिलती थी। परंतु निर्धनों की सामाजिक दशाओं को बदलने के लिए कुछ नहीं किया जाता था, जिससे उनको पुन: आत्मनिर्भर बनाया जा सके।

2. आवश्यकताग्रस्त व्यक्तियों की सहायता का काल

14 वीं शताब्दी तक आवश्यकताग्रस्त व्यक्तियों की सहायता करना पुण्य का कार्य समझा जाता था। चर्च का प्रमुख उद्देश्य ही गरीबों को दान देना और उनकी सहायता करना था। चर्च के काफ़ी प्रयत्नों के

बावजूद भी गरीबों और बेसहारों की स्थिति में कोई संतोषजनक परिवर्तन नज़र नहीं आया। चर्च द्वारा अनेकानेक प्रयत्न किए गए, किंतु कोई स्थायी समाधान प्रस्तुत नहीं किया गया, जिससे जरूरतमंदों की सहायता कर उनका निश्चित विकास किया जा सके।

1349 में किंग एडवर्ड ने यह आदेश पारित किया कि प्रत्येक स्वस्थ शरीर वाला व्यक्ति कोई-न-कोई कार्य अवश्य करेगा, जिससे लोगों की बेरोज़गारी को कम किया जा सके। एडवर्ड द्वारा किया गया यह प्रथम प्रयास था, जिसमें यह बात निकलकर सामने आई कि गरीबी के लिए व्यक्ति स्वयं ही ज़िम्मेदार है तथा इसके लिए किसी दूसरे को ज़िम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता। इस प्रकार से इस नियम द्वारा सक्षम को काम करने के लिए बाध्य किया गया।

1561 में हैनरी नियमावली में भिक्षा माँगने वालों के लिए पंजीकरण आवश्यक कर दिया। इस कानून के अंतर्गत महापालिका अध्यक्ष तथा न्यायाधीशों के लिए यह आदेश जारी किया गया कि वे ऐसे आवश्यकता ग्रस्त व्यक्तियों (जैसे-वृद्ध, निर्धन, अनाथ इत्यादि) के प्रार्थना पत्रों की जाँच करें जो वास्तविक रूप से काम करने में अक्षम है। यह इस प्रकार का पहला अधिनियम था, जिसके द्वारा जरूरतमंदों के प्रति ज़िम्मेदारी का आभास हो सके।

1536 में गरीबों एवं जरूरतमंदों की सहायता के लिए एक सरकारी योजना का भी निर्माण किया गया। जिसमें यह नियम बनाया गया कि गरीबों का उनकी चैरिटियों में पंजीकरण अवश्य हो लेकिन वे वहाँ कम-से-कम 3 वर्षों से रह रहे हों। स्वस्थ शरीर वाले भिक्षा माँगने वाले व्यक्तियों को काम करने के लिए बाध्य किया गया तथा जो 5 से 14 वर्ष के आयु के बीच में ऐसे बच्चे, जो बेकार एवं आवारा घूमते थे, उनको उनके माता-पिता के साथ प्रशिक्षण दिया जा सके, ऐसा प्रावधान किया गया। 1572 में 'एलिजाबेथ क्वीन' ने गरीबों की सहायता के लिए एक सामान्य कर लगा दिया। साथ-साथ नया कानून पालन करने हेतु ओवरसियर नियुक्त किए गए। यह भी मान लिया गया कि सरकार ऐसे व्यक्तियों को आश्रय प्रदान करेगी जो स्वयं अपनी सहायता करने में असमर्थ हैं।1576 में सुधारगृह (House of corrections) बनाए गए जहाँ पर ऐसे व्यक्तियों को रखा गया जो काम करने के लिए सक्षम थे, किंतु कार्य नहीं कर रहे थे। खास कर युवकों को ऐसे काम करने के लिए बाध्य किया गया।**1601 में धनहीनों के लिए एक कानून बना जो कि 43 - ए एलिजाबेथ के नाम से जाना जाता था। इस कानून में निर्धनों को 3 वर्गों में विभाजित कर दिया गया, जिसमें सर्वप्रथम पुष्ट शरीर वाले निर्धन शक्तिहीन निर्धन, आश्रित बच्चों को शामिल किया गया। पुष्ट शरीर वाले निर्धन (Abue Bodied Pear) इसके अंतर्गत ऐसे निर्धनों को रखा गया जो कि हष्ट-पुष्ट हो एवं कार्य करने योग्य हों। इनसे सुधारगृहों में काम लिया जाता था।** कोई भी व्यक्ति इन्हें भिक्षा नहीं दे सकता था। यदि कोई व्यक्ति कार्य के लिए मना कर देता उसे कारागृह में डाल दिया जाता था। शक्तिहीन निर्धन के अंतर्गत वे व्यक्ति आते थे, जो रोगी, वृद्ध, अंधे, बहरे, गूंगे, लंगडे, पागल हों और महिलाएं, जिनके पास छोटे-छोटे बच्चे थे, इसके अंतर्गत आते थे। ये लोग काम करने में असमर्थ होते थे। ऐसे व्यक्तियों के लिए

बाहर से सहायता का प्रबंध किया गया था, जिससे इनकी मूलभूत आवश्यकताओं जैसे- रोटी-भोजन, वस्त्र, मकान आदि को पूरा किया जा सके। आश्रित बच्चे ऐसे बच्चे जिनके माता-पिता नहीं थे या फिर उनके माता-पिता ने उन्हें घर से निकाल दिया था या फिर इतने गरीब थे कि उनके माता-पिता उनकी सहायता नहीं कर सकते थे ऐसे बच्चे उन नागरिकों को दे दिए जाते थे, जो उनका भरण-पोषण कर सके। इस प्रकार से यह कानून अत्यंत ही महत्वपूर्ण एवं सार्थक साबित हुआ। इसके अलावा लॉ ऑफ सेटेलमेंट 1662 का कानून बना, 1795 में 1662 के कानून का पुनः संशोधन किया गया। ये कानून सामाजिक समूह कार्य के क्षेत्र में अत्यंत महत्वपूर्ण माने जाते हैं।1832 में निर्धन कानूनों की प्रशासनिक तथा व्यावहारिक कार्यविधि संबंधी जाँच करने के लिए एक राजकीय आयोग बनाया गया। इस आयोग की प्रमुख सिफ़ारिश निम्नानुसार थी-

- ❖ स्पिनहम लैण्ड तरीके के अंतर्गत दी जाने वाली आंशिक सहायता को कम किया जाए।
- ❖ सहायता चाहने वाले सभी समर्थ प्रार्थियों को कार्यगृहों में रखा जाए।
- ❖ केवल रोगी, वृद्ध, अशक्त एवं नवजात शिशुओंसहित विधवाओं को ही बाहर सहायता दी जाए।
- ❖ विभिन्न पैरिसो में सहायता संबंधी प्रशासन का एक 'निर्धन कानून संघ के रूप में समन्वय हो।
- ❖ निर्धन सहायता प्राप्त करने वालों की स्थिति समुदाय में निम्न वेतन पाने वाले मज़दूरों की तुलना में कम हो।
- ❖ नियंत्रण के लिए केंद्रीय परिषद की स्थापना की जाए।

14 अगस्त, 1834 में एक नया निर्धन कानून 'द न्यू पूअर लॉ' लाया गया, किंतु इससे भी कोई खास सफलता प्राप्त नहीं हुई। सन 1847 में निर्धन कानून कमीशन के स्थान पर निर्धन कानून बोर्ड गठित किया गया, जिसका कार्य निर्धनता के कारणों तथा सामाजिक सुधार के प्रभावशाली साधनों के लिए किए गए कारणों का निरीक्षण करना था। 1834 के नवीन गरीब कानून के प्रति एडविक चाड़विक ने असंतोष प्रकट किया। इस कारण से आयोग के स्थान पर परिषद का गठन किया गया और एड़विक चाड़विक को इसका महा आयुक्त नियुक्त किया गया। उन्होंने निर्धनता के कारणों की खोज करने का प्रयत्न किया। सामाजिक सुधार के प्रभावशाली साधनों की खोज की। आवास गृहों की कमी के कारण कई लोग एक साथ पलंग पर सोते थे, जिससे बाल अपराध, लड़ाई-झगड़ा, अनैतिकता, छुआछूत की बीमारी बढ़ती थी। पीने के पानी के कारण भी लोग बीमार होते थे। अतः इस कारण चाड़विक ने अपना ध्यान स्वास्थ्य की ओर अधिक आकृष्ट किया। उन्होंने संक्रामक रोग से बचने के लिए एक कार्यक्रम बनाया, जिसमें नि:शुल्क टीके लगाए जाने लगे, पार्कों तथा बगीचों को बनाने में रुचि दिखाई। अतः उनके प्रयास के परिणामस्वरूप सन 1898 ई. में जन स्वास्थ्य एक्ट की स्थापना हुई। चाड़विक इसके सदस्य बने। अतः समूह कार्य के

इतिहास में चाड़विक का नाम भी लिया जाता है। औद्योगिक क्रांति के आने से समाज के अनेक क्षेत्रों में विकास हुआ। किंतु इसके साथ-साथ अनेक समस्याओं का भीजन्म हुआ। इस प्रकार की समस्याओं से निपटने के लिए क्रिश्चियन सोसायटी तथा श्रम संघ ने महत्वपूर्ण कार्य किए। 1844 में चार्टिस्टों ने पहला सहकारी भंडार खोला, जिसके मालिक श्रमिक थे। इस प्रयास के उपरांत अन्य नगरों में भी इस प्रकार के प्रयास किए गए। चार्टिस्ट की शक्ति में कमी होने पर फ्रेडरिक हेन्सन मारिस, चार्ल्स क्रिम्सके तथा जे. एम.लुडलो के निर्देशन में मज़दूरों की शैक्षणिक, आध्यात्मिक तथा सामाजिक दशाओं में सुधार करने का प्रयास किया गया। श्रमिकों के लिए रात्रि पाठशालाएँ खोली गई। कैनन सेमुअल, अगस्टस, वाटनेट 1937 ई. में लंदन के हाइट चौपल स्थित सेंट जूड गिरजाघर में उस क्षेत्र में रहने लगे, जिसमें निर्धन रहते थे। वे उनके पादरी बने। वाटनेट ने पाया कि हाइट-चौपल के 8000 निवासियों में अधिकांशतः दिन-दुखी असहाय, अपाहिज, बेकार थे। वे दुर्गंध युक्त जगहों में रहते थे। उनकीदशा अत्यंत ही दयनीय थी। वाटनेट आक्सफोर्ड तथा कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय में गए तथा उनको वहाँ के लोगों के दयनीय स्थिति से अवगत कराया। उन्होंने विद्यार्थियों को इनके वैयक्तिक अध्ययन (Case Work) तथा शैक्षिक सहायता देने के लिए प्रोत्साहित किया। उनके प्रयास से विश्व का प्रथम व्यवस्था गृह बना। इस व्यवस्था गृह के तीन मुख्य उद्देश्य थे –

- ❖ निर्धनों की शिक्षा और संस्कृति का विकास करना। सामाजिक सुधार की अत्यंत आवश्यकता के संबंध में विद्यार्थी तथा व्यवस्था गृह के अन्य निवासियों को जानकारी देना। सामाजिक तथा स्वास्थ्य समस्याओं का निराकरण और सामाजिक विधि निर्माण में व्यापक हितों की सामान्य जागृति उत्पन्न करना। इन उद्देश्यों को बढ़ाने के अतिरिक्त, सांस्कृतिक प्रभाव भी डालना था। अतः भाषण तथा वाद-विवाद, गोष्ठियों आदि का आयोजन करना भी शामिल था।
- ❖ निर्धनों की दशा सुधारने हेतुसामाजिक सुधार करना अत्यंत आवश्यक होता है, अतः इस संबंध में विद्यार्थियों तथा व्यवस्था गृह के अन्य-निवासियों को जानकारी देना है।
- ❖ समस्याओं के निराकरण और सामाजिक विधि निर्माण में व्यापक परिवर्तन हेतु सामाजिक तथा स्वास्थ्य समस्याओं के प्रति लोगों में जागृतिउत्पन्न करना।

समूह कार्य के इतिहास के परिप्रेक्ष्य में यदि हम ध्यान आकर्षित करें तो इसका विकास व्यवसाय के रूप में 20 वीं शताब्दी में ही प्रारंभ हुआ है। परंतु इसके सिद्धांतों तथा व्यावहारिक दक्षताओं का उपयोग बहुत पहले से होता चला आ रहा है। इसी विकास क्रम में चैरिटी ऑर्गेनाइजेशन सोसायटी (Charity Organization Society) ने अपनी विशेष भूमिका अदा की।

जॉन एडम्स हिल तथा डिवाइन आदि ऐसे समाज सुधारक थे, जिन्होंने मानवीय आवश्यकताओं की ओर लोगों का ध्यान आकर्षित किया। इन्होंने उन सामाजिक समस्याओं को दूर करने का प्रयासकिया जो सामाजिक वातावरण से उत्पन्न होती थी। किंतु जैसे-जैसे सामाजिक समस्याएँ गंभीर होती गई सामाजिक

संगठनों ने भी सेवाओं में परिवर्तन करना प्रारंभ कर दिया। अब समूहों की सहायता व्यक्तिसंगठित होकर करने लगे, जिससे समस्याओं के हल खोजने में सहायता मिली। इस प्रकार से इंग्लैंड में आवश्यकताग्रस्त व्यक्तियों की सहायता उपयुक्त कानूनों एवं नियमों के माध्यम से समूह कार्य के रूप में की जाती थी।

3. सामुदायिक सेवाओं के आधार पर सहायता का काल

सामुदायिक स्वास्थ्य सेवाओं के अंतर्गत लगभग500 से अधिक स्वास्थ्य अभ्यागतों की नियुक्ति की गई, जो रोगों को रोकने का प्रबंध करते थे। इसी तारतम्य में 1886 में बीमार तथा अपंग बच्चों के लिए अपंग बालकों का सहायता संघ(Invalid children And Association) बनाया गया। इसके कुछ ही दिनों के बाद विद्यालय बच्चे-देखभाल कमेटी (स्कूल चिल्ड्रन केअर कमेटी) तथा क्षय रोगियों के लिए डिस्पेंसरी खोली गई।

1895 में मिस स्टेवार्ट को रॉयल फ्री हॉस्पीटल में अल्मोनर के रूप में नियुक्त किया गया। इसी अल्मोनर के प्रयास से चिकित्सीय समाज कार्य का प्रारंभ हुआ। भोजन के क्षेत्र में भी एक नया प्रावधान 1906 में पास किया गया जिसे The Proposition of meal act के नाम से भी जाना जाता है, जिससे भोजन का प्रावधान अधिनियम भी कहा जाता है। इस अधिनियम के पास होने के पश्चात विद्यालय में नि:शुल्क स्वल्पाहार की सुविधाएँ प्रदान की गई।

1844 ई. में यंग मैन क्रिश्चन एसोसिएसन (Young men’s Christian association) की स्थापना जॉर्ज विलियम्स नामक बस विक्रेता ने समस्त युवक और युवतियों को इस उद्देश्य के साथ प्रेरित करने के लिए की कि वे ईसाई जीवन पद्धति पर चलने की प्रेरणा प्राप्त कर सके। सन 1860 में एक महिला द्वारा डैस ‘अलो-क्लब’ की स्थापना कनेक्टीकट में की गई, जिसे चर्च महिला समूह के नाम से जाना जाता है। इस क्लब के माध्यम से खेल-कूद, नृत्य, संगीत नाटक आदि अनेक प्रकार के कार्यक्रमों का प्रबंध था। इसी के परिणाम स्वरूप अन्य क्लबों की भी स्थापना इस उद्देश्य के साथ की जाने लगी कि इसमें बच्चे भाग ले सकें और उनकी दशाओं में सुधार हो सकें।

1865 में ही कॉमन्स समाज की स्थापना सुविधाओं के लिए एवं पार्कोंउद्यानों की स्थापना के लिए की गई। इस कॉमन्स समाज का उद्देश्य ऐसे लोगों की मुख्य रूप से सहायता करना था जो मानसिक रूप से कमज़ोर हैं और जिनको रहने के लिए स्थानों का अभाव है।

1844 में पहला सहकारी भंडार चार्टिस्टो द्वारा रोजडेल में खोला गया, जिसके मालिक श्रमिक थे। मानवतावादी रॉबर्ट ओवेन ने सहकारी उपभोक्ता भंडारों को प्रारंभ कर एक उदाहरण प्रस्तुत किया। उन्होंने ऐसे औद्योगिक समुदाय की स्थापना की जहाँ पर कम कीमत पर स्वास्थ्य एवं आवास सुविधाएँ दी जातीं थीं जो स्वच्छता से भरपूर थी। मज़दूरों तथा उनके परिवारों के लिए खेल के मैदान के साथसाथ पुस्तकालय एवं अन्य मनोरंजन की सुविधाएँ उपलब्धथी।

1889 में ‘दातव्य सहायता संगठन एवं भिक्षावृत्ति दमन समिति का गठन हुआ। इसका नाम बदलकर ‘दातव्य संगठन समिति’ कर दिया गया।

20 वीं शताब्दी के आरंभ में इंग्लैंड में बेरोज़गारी बहुत बढ़ गई। मुख्यरूप से यह बेरोज़गारी खानों मे काम करने वाले मज़दूरों में बढ़ने लगी थी इस बेरोज़गारी के कारण इन कोयला खानों के श्रमिकों व उसके परिवारों ने निर्धन सहायता मांगना आरंभ कर दिया। इस समस्याके समाधान के लिए 1905 में 'लार्ड जार्ज हेमिल्टन' की अध्यक्षता में "निर्धन कानून एवं दुख निवारण शाही आयोग का गठन किया।इस आयोग ने सिफ़ारिश की थी कि पुअर लॉ यूनियन और संरक्षकों के मंडल के स्थान पर कांउटी कौंसिल स्थापित की जाए, जिससे स्थानीय सहायता प्रशासन द्वारा कम की जा सके।"

1908 में वृद्धों के लिए 'वृद्धावस्था पेन्शन कानून' पारित हुआ, जिसमें राष्ट्रीय पेन्शन तथा नि:शुल्क उपचार की व्यवस्था की गई। 1909 में श्रम कल्याण अधिनियम पारित किया गया।

भिक्षावृत्ति समाप्त करके उनके स्थान पर चिकित्सालय खोले गए और भेद वृद्धि या मानसिक भेदता की स्थिति वाले रोगी को ठीक किया गया 1925 में 'विधवा अनाथ एवं वृद्धावस्था अंशदायी पेशंन अधिनियम' पारित किया गया।

4. श्रम कल्याण के आधार पर सहायता का काल

इग्लैंड में सन 1802 ई. में स्वास्थ्य एवं सदाचार कानून बनाया गया। इस कानून के अंतर्गत दिनभर में12 घंटे काम करना निश्चित कर दिया गया जो प्रात: 6 बजे से लेकर 9 बजे रात तक कार्य कर सकते थे तथा बच्चों से रात में काम लेना बंद कर दिया गया। 1833 में डाक, कारखाना अधिनियम बना उस समय कारखानों में 9 वर्ष से कम उम्र के बच्चों से काम कराना वर्जित कर दिया गया। 13 वर्ष के बच्चे दिन में सिर्फ 9 घंटे तथा पूरे सप्ताह के अंतर्गत48 घंटे काम कर सकते थे। इस समय तक निरीक्षकों की नियुक्ति भी केन्द्रीय तथा राष्ट्रीय कार्यालय के अंतर्गत करना प्रारंभ कर दी। कारखाना अधिनियम में सुधार करते हुए 1847 में एक आदेश जारी किया गया कि औरतें तथा 18 वर्ष से कम उम्र के बच्चे प्रत्येक दिन में अधिक से अधिक काम 10 घंटे का काम कर सकते हैं।

5. सुधारात्मक सेवाओं के आधार पर सहायता का काल

जेल की दशाओं में सुधार करने के लिए श्रीमती एलिजाबेथ फ्राई नाम की महिला ने जेल के अंदर बच्चों को शिक्षित करने के उद्देश्य से एक विद्यालय की शुरूआत की और अध्यापक के रूप में जेल में बंद अपराधी औरतों में से एक का चुनाव किया गया। प्रौढ़ महिलाओं के लिए जेल में बुनाई-कढ़ाई का काम भी उनके द्वारा शुरू किया गया। बाल अपराधियों के सुधार हेतु सन1912 में काल अधिनियम पास हुआ। 1950 में दूसरा काल अधिनियम पास किया गया तथा इस अधिनियम के तहत काल समितियाँ एवं काउन्टी काउंसिल बनाई गई जिसका उत्तरदायित्व काल का भी देखभाल करना था।

इंग्लैंड में20वीं शताब्दी के पूर्व समूह कार्य का उद्देश्यसामाजिक चेतना तथा सामाजिक उत्तरदायित्व की भावना का विकास करना था। परंतु 1920 के पश्चात इसका उपयोग व्यक्ति के व्यक्तित्व में सकारात्मक परिवर्तन तथा उसके विकास के लिए किया जाने लगा। द्वितीय विश्व युद्ध के समय इग्लैंड के शिक्षा मंत्रालय द्वारा युवा सेवाओं के रूप में समूह समाज कार्य को मान्यता प्राप्त हुई। युवाओं के प्रशिक्षण में

समूह कार्य का ज्ञान कराया जाने लगा और इस संदर्भ में अनेक कार्यक्रम आयोजित किए जाने लगे और इसके साथ ही 1960 तक जो समूह कार्य शिक्षा अपर्याप्त थी 1960 के बाद इसमें व्यापक परिवर्तन हुआ और अनेक विद्यालयों/महाविद्यालयों/विश्वविद्यालयों में समूह कार्य शिक्षा में तेजी से विस्तार हुआ। अतः इस प्रकार से इंग्लैंड में सामाजिक समूह कार्य के ऐतिहासिक विकास को मुख्य बिंदुओं द्वारा प्रदर्शित करने का प्रयास किया गया है एवं यह भी स्पष्ट किया गया है कि इंग्लैंड में किस प्रकार से कानूनों का निर्माण हुआ और उन्हें किस प्रकार से प्रभावी बनाने के लिए समयानुसार उसमें परिवर्तन किया गया।

6. बेवरिज रिपोर्ट

1941 में इंग्लैंड ने समाज के क्षेत्र में चलने वाली समस्त कल्याणकारी योजनाओं में सुधार करना प्रारंभ कर दिया। इस आधार पर लार्ड विलियम बेवरिज की अध्यक्षता में एक सामाजिक बीमा एवं इससे संबंधित विभाग का निर्माण किया गया, जिसे Inter-department commission on social Insurance and Allied Service के नाम से जाना जाता है। इस आयोग ने सामाजिक सुरक्षा से संबंधित5 कार्यक्रमों की विस्तृत योजना को प्रस्तुत किया, जिसमें -

- सामाजिक बीमा।
- जन सहायता ।
- बच्चों के लिए आवश्यक भत्ते।
- व्यापक निशुल्क स्वास्थ्य व पुर्नवास सेवाएँ एवं
- पूर्ण रोज़गार का अनुरक्षण।

इस प्रकार इस आयोग द्वारा मुख्यत: पांच कार्यक्रमों के लिए योजनाओं का निर्माण किया गया, जिसमें व्यापक स्तर पर कार्य किया गया । लेकिन साथ में यह आयोग द्वारा यह भी कहा कि सामाजिक सुरक्षा एवं आवश्यकताओं के साथसाथ चार और दानव है, जिसने समाज को जकड़ कर रख लिया है इन दानव से समाज को छुटकारा दिलवाना भी समाज कार्य का मुख्यलक्ष्य है । ये दानव हैं-

- बीमारी (Disease)
- अज्ञानता (Ignorance)
- मलीनता (Squalor)
- निष्क्रियता (Idleness)

इस प्रकार से इस रिर्पोट द्वारा इन चार दानवों के खिलाफ भी योजना का निर्माण प्रारंभ कर दिया ।

बेवरिज रिर्पोट के आधार पर ही 1944 में अपंग व्यक्ति कानून का निर्माण किया गया । इस कानून हेतु वाणिज्य तथा औद्योगिक प्रतिष्ठानों को निर्देश दिया गया कि वे अपंगोंको रोज़गार मुहैया कराएं।1944 में ही पेंशन तथा राष्ट्रीय बीमा मंत्रालय का गठन किया गया ।1945 में परिवार भत्ता कानून बनाया गया।

1946 में राष्ट्रीय बीमा कानून बनाया गया जिसके अधीन स्वास्थ्य अपंगता एवं वृद्धावस्थाबीमा इत्यादि योजाएं बनाई गई। इस प्रकार सामाजिक सुरक्षा के कार्यक्रमों में कई बार आवश्यकता पड़ने पर परिवर्तन किया गया ।अत: इन्हीं परिवर्तनों के आधार पर बनाया गया The Social Security Benefit Act 1975 इग्लैंड की जनता के लिए व्यापक सामाजिक सुरक्षा के आयामों को प्रस्तुत करता है ।

1.4 यूरोप/युनाइटेड किंगडम (इंग्लैंड) में समाज कार्य शिक्षा का विकास

इग्लैंड में समाज कार्य शिक्षा का प्रारंभ 1950 के पश्चात ही माना जाता है । इस समय समाज कार्य के क्षेत्र में शिक्षण- प्रशिक्षण का अभाव था इसके बावजूद भी चिकित्सीय समाज कार्य, मानसिक स्वास्थ्य, परिवीक्षा इत्यादि कुछ विशेष क्षेत्रों में अल्पकालीन प्रशिक्षण दिया जाता था । सर्वप्रथम कुछ सामाजिक कार्यकर्ताओं ने कार्नेजी की प्रथम रिपोर्ट में यह प्रस्ताव रखा कि समाज कार्य से जुड़े व्यक्तियों एवं सामाजिक कार्यकर्ताओं हेतु प्रशिक्षण व रोज़गार से संबंधित एक विश्वविद्यालय के अधीन समाज कार्य विद्यालय का निर्माण होना चाहिए और इसे शीघ्र प्रारंभ करना चाहिए । इन तथ्यों के आधार पर एक परिषद का निर्माण का किया गया और 1950 में इस परिषद ने एक उपसमिति को बनाकर उसे वैयक्तिक समाज कार्य संबंधी 'परा प्रमाण-पत्र' के लिए पाठ्यक्रम बनाने की ज़िम्मेदारी प्रदान की गई । इस पाठ्यक्रम को मानव-व्यवहार को ध्यान में रखते हुए बनाया गया था । इस संपूर्ण प्रक्रिया के पश्चात 1951 में कार्नेजी ट्रस्ट द्वारा दूसरी रिपोर्ट का प्रकाशन किया गया, जिसका नाम बदलकर 'व्यावहारिक समाज अध्ययन संस्थान' कर दिया गया। 1951 में मानसिक स्वास्थ्य की ओर समाज कार्यकर्ताओं की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए टॉविस्टोन क्लीनिक ने इस क्षेत्र में प्रशिक्षण कार्यक्रमों को आयोजित करना प्रारंभ किया और 1959 तक 24 समाज विज्ञान विभागों में से 6 विभागों द्वारा व्यावसायिक समाज कार्य के शिक्षण-प्रशिक्षण संबंधी कार्यक्रमों को प्रारंभ किया। इसके पश्चात 1966 में यार्क यूनिवसिटी द्वारा सर्वप्रथम समाज कार्य के क्षेत्र में द्विवर्षीय शिक्षण को प्रारंभ किया गया, जिससे व्यावसायिक समाजकार्य के क्षेत्र में काफ़ी बढ़ोतरी हुई। एक आकलन के आधार पर 1975 तक यूरोप/यूनाइटेड किंगडम (इंग्लैंड) के 35 विश्वविद्यालय में सामाजिक प्रशासन तथा समाज कार्य के विभाग थे, जिनमें समाज कार्य से संबंधित शिक्षण-प्रशिक्षण का कार्य किया जाता था । अत: इस तरह यूरोप/यूनाइटेड किंगडम (इंग्लैंड) में समाज कार्य संबंधी शिक्षा के प्रारंभ को देखा जा सकता है जिसने समाज कार्य विषय की पृष्ठभूमि को तैयार करने में काफ़ी हद तक सहायता की।

इग्लैंड में बनाए गए कुछ महत्वपूर्ण विधान एवं कार्य एक नज़र में

- ❖ इंग्लैंड में भी अन्य यूरोपीय देशों की भाँति गरीबों की देख-रेख का कार्य चर्च करते थे।
- ❖ प्रारंभ में क्लेश, दुःख, गरीबी तथा अन्य समस्याओं के लिए ईसाई लोग एकदूसरे की सहायता करते थे।

- ❖ मध्यकाल में क्लेश, दु :ख, गरीबी तथा अन्य समस्याओं के लिए पादरी कार्य करते थे।
- ❖ गाई डी मान्टेपेलियर्स (Guy De Montpellier's)ने हास्पिटल की तथा सेंटफ्रैंसिस डि एसिसी ने (Saint Francis de Assisi) फ्रैंसिस कैन्स (Francis Cans) की स्थापना की, जिसका उद्देश्य निर्धन, अपाहिजों, पीड़ितों को शिक्षा देना तथा रोगियों की चिकित्सीय सहायता तथा निराश्रितों को आश्रय देना था।
- ❖ सोलहवीं शताब्दी के सुधार काल में भिक्षावृत्ति को रोकने का प्रयास किया गया तथा सामान्य दान पेटियों (Common Chests) की स्थापना की गई।
- ❖ 1523 ई. में ज्यूरिख तथा स्विटजरलैंड में अलरिक ज्वीगली ने सहायता के लिए प्रभावकारी योजना प्रस्तुत की।
- ❖ सर्वप्रथम 1531 में हेनरी अष्टम् ने स्टैट्यूट ऑफ हेनरीVIII पास किया।
- ❖ सन 1536 ई. में इंग्लिश सरकार ने निर्धनों को पंजीकृत कराके उनकी चर्च द्वारा सहायता की योजना बनाई।
- ❖ 1576 ई. में सुधारगृह (House of Correction) स्थापित हुए जहाँ पर गरीबों को व्यावसायिक प्रशिक्षण दिया जाता था।
- ❖ सन 1601 ई. में एलिजाबेथ का धनहीनों के प्रति कानून बना।
- ❖ फादर विंसेन्ट ने 1633 में 'भिक्षा की लड़कियाँ' नामक संघ की स्थापना की, जिनमें महिलाएँ भिक्षा का कार्य करती थीं
- ❖ अतः 14 अगस्त, सन् 1834 ई0 को नवीन गरीब कानून (The New Poor Law) बना।
- ❖ सन 1844 ई 0 में चार्टिस्टों ने पहला सहकारी भंडार खोला, जिसके मालिक श्रमिक ही थे।
- ❖ सन 1844 ई. में जार्ज विलियम्स नामक वस्त्र विक्रेता ने युवकों तथा युवतियों को ईसाई जीवन पद्धति पर चलने की प्रेरणा दी और इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए नवयुवक ईसाई संघ (Young Men Christian Association) की स्थापना की।
- ❖ सन 1848 ई. में चाडविक के प्रयास से जनस्वास्थ्य एक्ट The Public Health Act की स्थापना हुई और चाडविक उसके सदस्य बने।
- ❖ सन 1860 ई. में एक चर्च महिला समूह 'डैस अवे क्लब' की स्थापना कनेक्टीकट में की गई।
- ❖ 1874 ई. में प्रौढ़ शिक्षा का कार्यक्रम प्रारंभ हुआ।

ज्ञान शांति मैत्री

- ❖ प्रथम सेटलमेन्ट टायनबी हाल (Toynbee Hall) सन् 1884 ई0 में कैनन बारनेट (Canon Barnett) द्वारा स्थापित किया गया।
- ❖ 1886 ई. में सेटेलमेन्ट हाउसेज आरंभ हुआ।
- ❖ सन 1886 ई. में स्वच्छता सहायता समिति (Sanitary Aid Committee) की स्थापना संक्रामक रोगों की रोकथाम के लिए की गई। गृहों की दशा सुधारने का प्रयत्न किया।
- ❖ सन 1895 ई. में मिस स्टेवार्ट (Stewart) ने हास्पिटल सोशल सर्विस का प्रारंभ किया।
- ❖ डब्ल्यू मोरे इडे (W. Moore Ede) ने 1896 ई0 ने सेटलमेंट आंदोलन का दर्शन प्रस्तुत किया।
- ❖ वेथनाल ग्रीन में आक्सफोर्ड हाउस, साउथवार्क में वीमेन्स यूनिवर्सिटी सेटलमेंट, केनिंग टाउन में मान्सफील्ड हाउस आदि की स्थापना की गई।
- ❖ सामाजिक वैयक्तिक समाज कार्य तथा सामूहिक समाज कार्य लगभग समान परिस्थितियों में औद्योगिक क्रांति के फलस्वरूप इंग्लैंड और अमेरिका में विकसित हुआ।
- ❖ कैनन वारनेट ने सेटलमेंट के लिए उन सिद्धांतों को प्रतिपादित किया जो आगे चलकर समाज कार्य की सभी प्रणालियों के आधारभूत सिद्धांत माने जाने लगे। उन्होंने व्यक्ति के महत्व को, मान, संबंध, आत्म निश्चय पर बल दिया।
- ❖ कैनन की विचारधारा को आधार मान कर ही सामूहिक समाज कार्य पद्धति का आधुनिक रूप से विकास संभव हो सका।

1.5 सारांश

इंग्लैंड में प्रारंभ में समाज कार्य चर्च के माध्यम से ही किए जाते थे, जिनका उद्देश्य जन-कल्याणकारी कार्य था। धीरे-धीरे स्थिति बदली और जन-सहायता को विधिक रूप प्रदान किया जाने लगा। सर्वप्रथम इंग्लैंड में 1536 में एक कानून बना, जिसमें निर्धनों की सहायता के लिए कार्य-योजना का निर्माण किया गया। अट्ठारहवीं सदी में औद्योगिक क्रांति के बाद इंग्लैंड में सरकारों द्वारा निर्धनों व अशक्तों को समाज की मुख्यधारा से जोड़ने के लिए कई कानूनों का निर्माण किया गया। व्यक्तियों का मनोसामाजिक पक्ष सुधारने हेतु 1869 में लंदन चैरिटी संगठन ने शुरूआत की और कार्य करना प्रारंभ कर दिया। इन संस्थाओं के माध्यम से समुचित सहायता आवश्यकता ग्रस्त व्यक्ति को दी जाने लगी तथा संबंधित व्यक्तियों का पंजीकरण करना प्रारंभ किया। इस संपूर्ण प्रक्रिया में मनोसामाजिक स्थिति सुधारने के लिए प्रयास किया गया एवं भौतिक सहायता को भी शामिल किया। यह एक ऐसी प्रक्रिया थी, जिसके ज़रिये संस्था के

कार्यकर्ता अपने पास आए व्यक्ति अर्थात सेवार्थी को स्वावलंबी एवं सामर्थ्यवान बनाते थे। और इस तरह से धीरे-धीरे इस प्रक्रिया ने सुचिंतित प्रणालीबद्ध रूप ग्रहण कर लिया।

वर्तमान समय में इग्लैंड में समाज कार्य का स्तर काफ़ी हद तक श्रेष्ठ माना जाता है । यहाँ व्यावसायिक समाज कार्यकर्ताओं हेतु अलग से पहचानपत्र (Identity Card) प्रदान किए जाते है, ताकि इन्हें अलग से पहचाना जा सकें। सामाजिक सुरक्षा, राष्ट्रीय स्वास्थ्य सेवा एवं समाज सेवा इग्लैंड में दी जाने वाली सबसे प्रमुख समाज कल्याण सेवाएँ है, जिनके माध्यम से व्यक्तियों की आवश्यक सहायता प्रदान की जाती है । सामाजिक सुरक्षा योजनाओं के माध्यम से यह प्रयास किया जाता है कि किस प्रकार से व्यक्ति की आवश्यकता पड़ने पर वित्तीय सहायता प्रदान की जाए, जिससे वह अपने मूलभूत आवश्यकताओं रोटी, कपडा और मकान की आवश्यकता को पूरा कर सके । राष्ट्रीय स्वास्थ्य सेवा के अंतर्गत सभी व्यक्तियों को स्वास्थ्य सेवाएं प्रदान जा रही है, जिससे उनके स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं को दूर किया जा सके और इस कार्य हेतु किसी प्रकार के वार्षिक आय का प्रावधान नहीं रखा गया है। अर्थात यह सुविधा प्रत्येक व्यक्ति को प्रदान की जा रही है । इस प्रकार के अनेक कार्यक्रमों के माध्यम से यूरोप/यूनाइटेड किंगडम (इंग्लैंड) में समाज कार्य को प्रशिक्षित कार्यकर्ताओं के माध्यम से व्यक्ति की आवश्यक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु चलाया जा रहा है,जिसमें समय के साथ आवश्यकता पड़ने पर बदलाव भी किए जा रहें हैं।

1.6 बोध प्रश्न

प्रश्न 01. यूरोप में शिक्षा एवं व्यवसाय के स्तर पर समाज कार्य के क्षेत्र में आये विकास की चर्चा कीजिए।

प्रश्न 02. इग्लैंड में समाज कार्य के विकास क्रम की चर्चा कीजिए।

प्रश्न 03. इग्लैंड में समाज कार्य के प्रांरभिक स्तर की चर्चा कीजिए।

प्रश्न 04. यूरोप/यूनाइटेड किंगडम (इंग्लैंड) में सामाजिक कार्य के माध्यम से किस प्रकार के कार्यक्रमों का क्रियान्वयन किया गया? उल्लेख कीजिए ।

प्रश्न 05. यूरोप/यूनाइटेड किंगडम (इंग्लैंड) शिक्षात्मक विधान क्रम का उल्लेख कीजिए।

1.7 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

1. सिंह सुरेंद्र, मिश्र.पी.डी. (2001). *समाज कार्य*. लखनऊ :न्यू रॉयल बुक कंपनी।
2. डॉ. गौतम सरिता, डॉ. द्विवेदी राकेश (2014). *समाज कार्य इतिहास दर्शन एवं क्षेत्र*. कोटा: वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय।
3. सिंह, ए.एन. एवं सिंह, ए.पी. (2008). *समाज कार्य*. लखनऊ: (इंडिया) प्रा.लि.

4. डीवे, जे. थिंक हाऊवी (1933). *ए रीस्टेटमैंट ऑफ द रिलेशन ऑफ रिफलैक्टिव थिंकिंग टु द एजूकेटिव प्रासेस (संशोधित संस्करण)*. बॉस्टोन डी.सी. हीथ.

5. फैरिस, एल्यवर्थ (1937). द नेचर *आफ ह्युमैन नेचर* मैकग्रा-हिल : बुक कं.इंक.

6. इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विशवविद्यालय (2010). *समूहों के साथ कार्य करना.*दिल्लीः समाज कार्य विद्यापीठ।

7. तेज संगीता एवं पाण्डेय तेजस्कर(2010). *समाज कार्य*. लखनऊ : जुबली एच फाउंडेशन।

ज्ञान शांति मैत्री

इकाई 2 अमेरिका में समाज कार्य का इतिहास

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य
2.1 परिचय
2.2 संयुक्तराज्य अमेरिका में समाज कार्य का इतिहास
2.3 उत्तरी एवं दक्षिण अमेरिका में समाज कार्य तथा समाज कल्याण का विकास
2.4 विभिन्न स्थापनों से समाज कार्य
2.5 सारांश
2.6 बोध प्रश्न
2.7 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

2.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आप -

- अमेरिका में समाज कार्य के ऐतिहासिक विकास को स्पष्ट कर सकेंगे।
- व्यावसायिक समाज कार्य के उद्भव में अमेरिकी समाज कार्य की भूमिका को रेखांकित कर सकेंगे।
- समाज कार्य के बदलते स्वरूप को जान सकेंगे।

ज्ञान शांति मैत्री

2.1 परिचय

समाज कार्य व्यवसाय के विकास में अमेरिका का महत्वपूर्ण योगदान है। यद्यपि समाज कार्य व्यवसाय का जन्म इंग्लैंड में हुआ, लेकिन अमेरिका में जिस प्रकार से C.S.O. (Charity Society Organization) आंदोलन एवं सेटलमेंट हाउस आंदोलन का प्रसार एवंविस्तार हुआ, उसने अतिशीघ्र अमेरिका में समाज कार्य को एक व्यवसाय के रूप में स्थापित कर दिया। इसके विकास ने भी शिक्षण एवं प्रशिक्षण के विशिष्टसंस्थानों की स्थापना के अंतर्गत व्यक्ति एवं उसकी समस्याओं को महत्वपूर्ण स्थान दिया। समाज कार्य के मूल्यों एवं कार्य प्रणालियों का विकास अमेरिका में एक ऐतिहासिक कालक्रम में हुआ, जिसने समाज कार्य को एक व्यवसाय के रूप में स्थापित कर दिया। अमेरिका के समाज वैज्ञानिकों द्वारा इस बात को उजागर किए जाने के कारण कि अमेरिकी समाज में निर्धनता व्याप्त है, इस समस्या की ओर सरकार का ध्यान आकर्षित हुआ,

जिससे अमेरिका में भी सामाजिक सहायता के विभिन्न कार्यक्रम प्रारंभ किए गए। प्रारंभ में इनका स्वरूप केवल मनोरंजनात्मक था। लोग इसे केवल खेल-कूद, सांस्कृतिक गतिविधियों के परिप्रेक्ष्य में ही समझते थे। समय के साथ-साथ इनकी कार्य प्रणालियों और उद्देश्यों में बदलाव आया। अमेरिकी समाज कार्य इंग्लैंड के समाज कार्य की तरह ही प्रतीत होता है। 20 वीं शताब्दी के प्रारंभ में दोनों की कार्य प्रणालियाँ लगभग समान ही नज़र आती है। परंतु 1935 के बाद इनकी कार्य प्रणालियों में कुछ अंतर आने लगता है और समाज कार्य के आयामों में वृद्धि नज़र आती है। इस इकाई के माध्यम से अमेरिका के विभिन्न क्षेत्रों एवं स्थापनों में समाज कार्य के विभिन्न रूपों को वर्गीकृत करने का प्रयास किया गया है।

2.2 संयुक्त अमेरिका में समाज कार्य का इतिहास

अमेरिका में विभिन्न युगों में निर्बल एवं शोषित वर्गोंको प्रदान की जाने वाली सहायता की प्रमुख विशेषताओं के आधार पर अमेरिका समाजकार्य की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को निम्नलिखित श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है -

1. दान काल
2. स्थानीय सहायता काल
3. राज्य सहायता काल
4. अधीक्षण, समन्वय एवं प्रशिक्षण काल
5. युवकों के साथ कार्य का काल
6. आवश्यकताग्रस्त व्यक्तियों के साथ कार्य करने एवं रहने का काल
7. सामाजिक सुरक्षा काल
8. निर्धनता काल

ज्ञान शांति मैत्री

1. दान काल

17 वीं शताब्दी के प्रारंभ से ही इंग्लैंड से आकर अमेरिका में बसने वाले लोग वहां की प्रथाओं, परंपराओं एवं कानूनों को भी अपने साथ लाए। वे अपने अतीत के अनुभवों के आधार पर बेकारी, गरीबी तथा कामचोरी को एक पाप और अपराध मानते थे। किंतु हर समाज की तरह अमेरिका में भी अनेक वर्ग थे। उदाहरण के लिए-अनाथ, बालक, विधवाएं, बीमार, निराश्रित वृद्ध, अशक्त व्यक्ति, इत्यादि। जिन्हें सहायता की आवश्यकता थी। इन लोगों की सहायता परंपरागत तरीकों का प्रयोग करते हुए की जाती थी। निर्धनों के लिए चिकित्सालय खोले गए। इन चिकित्सालयों में निर्धनों के शारीरिक एवं मानसिक रोगों का उपचार किया जाता था। विभिन्न प्रकार के कानून में उनको सहायता

दी जाती थी जो बेघर होते थे उनके कल्याण के लिए एलिजाबेथ द्वारा ऐसे अनेक प्रकार के कानून का निर्माण किया गया।

2. स्थानीय सहायतता काल

स्थानीय सहायता काल में एलिजाबेथ के निर्धन कानून को अपना लिया गया और इस प्रकार निर्धनों के भरण पोषण का उत्तरदायित्व कस्बों को सौंप दिया गया। (जैसे कि न्यूयार्क में रेने सेलर्सविक में भिक्षुक गृह1657 में स्थापित किया गया था) तथा कालांतर में ऐसे भिक्षुक गृहों एवं कार्यशालाओं को कुछ उपनिवेशों के बड़े शहरों में स्थापित किया गया और इस प्रकार अकिंचनों/पराश्रितों के भरण-पोषण का उत्तरदायित्व कस्बों द्वारा ग्रहण किया जाता था।1823 में न्यूयार्क में जे.वी.एन. येट्स को निर्धन कानूनों की क्रियाविधि से संबंधित सूचना एकत्रित करने का उत्तरदायित्व सौंपा गया। येट्स द्वारा प्रस्तुत किए प्रतिवेदन में निर्धनों के दो वर्गों का उल्लेख किया गया-

1) ऐसे निर्धन जिन्हें स्थायी सहायता तथा आवास की आवश्यकता है।
2) अस्थायी निर्धन, इस प्रकार के निर्धन जो एक जगह पर नहीं रहते हैं और उनके लिए भी रहने खाने और कपड़े की आवश्यकता थी जो कि अमेरिकी कस्बों द्वारा उनको दी जाती थी।

येट्स रिपोर्ट में इन तथ्यों को प्रस्तुत किया गया-

1) प्रत्येक काउंटी में एक सेवायोजन गृह की स्थपना की जाएगी, जिसमें बच्चों की शिक्षा और कृषि कार्य के लिए भूमि प्रदान की जाए। उन बच्चों के लिए स्कूल की व्यवस्था की जाएगी, ताकि उन्हें भविष्य में इस प्रकार की परेशानी का सामना न करना पड़े।
2) सशक्त निर्धनों तथा आवारा लोगों के लिए कार्यगृह उपलब्ध कराया जाए जहाँ पर जबरदस्ती कठिन काम दिया जाए और इस प्रकार उनके व्यवहार को सुधारने की कोशिश की जानी चाहिए।
3) निर्धन कल्याण के लिए धनराशि एकत्रित करने के उद्देश्य से शराब बनाने वाले कारखानों पर उत्पादन कर लगाया जाए।
4) न्यूयार्क की एक काउंटी में एक वर्ष के निवास के आधार पर वैधानिक बंदोबस्तकरने का नियम बनाया जाए।
5) निष्कासन आदेशों तथा निर्धन कानूनों से संबंधित मुकदमों में दिए गए फैसलों के विरूद्ध अपील करने की व्यवस्था समाप्त की जाए।
6) 18 से 50 वर्ष के बीच की आयु तथा स्वस्थ शरीर वाले किसी भी व्यक्ति को अकिंचन की श्रेणी में ने रखा जाए।

ज्ञान शांति मैत्री

3. राज्य सहायता काल

अमेरिका में समय के साथ-साथ समाज कार्य को करने का तरीका भी बदलने लगा और इसका परिणाम यह हुआ कि यहाँ राज्य एवं केंद्र सरकार ने भी इसकी आवश्यकता को महसूस किया और अनेक प्रकार की सरकारी सहायता राष्ट्रीय स्तर पर प्रदान की जाने लगी। बोस्टन (Boston) में पहली सहायता समिति की स्थापना की गई जो लोगों को आवश्यक सहायता प्रदान कराती थी। अन्य दूसरे देशों(डच, जर्मन, फ्रांस) से आने वाले लोगों के लिए भी सहायता कार्यक्रमों को भी प्रारंभ किया गया ।1657 में पहला भिक्षु-गृह न्यूयार्क में खोला गया। 1817 में न्यूयोर्क में ही New York Society for the Prevention की स्थापना की गई, जिसका उद्देश्य पुनर्वास (Rehabilitation) के कार्यों में सहायता प्रदान करना था। 1832 में New York Institute for the Blinds की स्थापना की गई। 1840 में अंध व्यक्तियों के लिए कानून का निर्माण किया गया। 1675 में मैसाचुसेट्स राज्य ने भिखारियों के आवश्यक व्ययों के भुगतान का उत्तरदायित्व ग्रहण किया। इस उत्तर दायित्व के अधीन ऐसे व्यक्तियों को सहायता प्रदान की जाती थी, जो थोड़े समय पूर्व ही इस राज्य में आए हुए थे अथवा जिन्हें बाहर जाने की चेतावनी दी गई थी। बाद में अन्य राज्यों ने इस उत्तरदायित्व को ग्रहण किया और इस प्रकार की सहायता धीरे-धीरे अपने स्वरूप बदलती गई और एक ऐसे संस्था का निर्माण किया गया जहाँ पर समाज कार्य के बारे में ही बताया जाने लगा।

4. युवकों के साथ कार्य का काल

अमेरिका में युवाओं के साथ कार्य करने का युग उस समय प्रारंभ हुआ जब जॉर्ज विलियम द्वारा स्थापित Young men's Christian Association (YMCA) की स्थापना इंग्लैंड में हुई और इसने निरंतर युवाओं के क्षेत्र में कार्य किया। इसकी सफलता को ध्यान में रखते हुएअमेरिका में भी एस.जे.वी. सुलिवान द्वारा बोस्टन शहर में सन 1851 में Young Men's Christian Association की स्थापना इसी उद्देश्य के साथ की गई जिससे युवाओं के क्षेत्र में कुछ प्रगतिशील कार्यक्रम को क्रियान्वित किया जाए। इसी तरह की एक और अन्य संस्था 1866 में बोस्टन में ही लुक्रेटिया बोयड के द्वारा Young men's Christian Association स्थापित की गई, जिससे महिलाओं के क्षेत्र में भी प्रगतिशील कार्य हो सकें इसके लिए YMCA नामक संस्था को संचालित किया गया। इसके उपरांतअमेरिका में युवाओं के क्षेत्र में कार्य करने के लिए निरंतर नई संस्थाओं का गठन किया गयाजैसे - 1910 American boys Scout. 1911 esa Camfire Girls इस प्रकार से अमेरिका में युवाओं के सर्वांगीण विकास हेतु इन उपर्युक्त संस्थाओं का निर्माण और विकास किया गया।

5. आवश्यकताग्रस्त लोगों के साथ काम करने एंव रहने का काल

अप्रवासी भारतीय जो अमेरिका में जाकर निवास कर रहे थे, उनकी स्थिति अत्यंत दयनीय एवं विचारणीय थी। न उनके भाषा का मेल-जोल था और न ही विचारधाराओं का मेल। भिन्नभिन्न भाषा

समूह के कारण उन्हें व्यक्तिगत रूप से इंगित करने की आवश्यकता थी। सर्वप्रथम कैनन सॅमुअल (Cannon Samuels) द्वारा अप्रवासी भारतीयों के उत्थान के लिए कदम उठाए। इन्होंने इनकी गंदी बस्तियों, आपस में पड़ोस भावना, अच्छे ढंग से जीवन-यापन करने के तौर तरीके पर विशेष ध्यान दिया। इस कार्य हेतु सैमुअल कादृष्टिकोण यह था कि इन अप्रवासी भारतीयों के बीच शिक्षित लोगों को रखा जाए ताकि जीवन शैली एवं पड़ोस भावना का विकास किया जा सके। इस व्यवस्था को सर्वप्रथम अमेरिका में स्टैन्टन क्वाइट (Stanton Coat) (Charles B. Stover) और चार्ल्स बी. स्टोवर ने लागू किया। इनके द्वारा 1857 में न्यूयॉर्क शहर में ''पड़ोस संघ'' की स्थापना की गई। चूँकि यह व्यवस्था दलितों के सुधार हेतु स्थापित की गईतत्पश्चात इसने ''विश्वविद्यालय बंदोबस्त आवास'' का रूप ले लिया। इसी तरह एक और संस्था का आरंभकिया गया जिसका नाम ''हल हाऊस'' था। इसे शिकागो में स्थापित किया गया, जिसकी नींव जीन एडम्स (Jane Adams) एवं एलेन गेट्स (Allen Gates) ने डाली। विभिन्न देशों से अप्रवासी, जिनमें इटैलियन, जर्मन, ग्रीक, पोलिस तथा रूसी आदि थे, इनके लिए सेटलमेंट हाऊस खोला गया। बालक एवं बालिकाओं के लिए दैनिक नर्सरी एवं किंडर गर्डन स्थापित किए गए।

महिलाओं के लिए1889 में न्यूयार्क में कॉलेज सेटेलमेंट, 1892 में बोस्टन में तथा 1894 में शिकागो कॉमर्स की स्थापना की गई। हेनरी स्ट्रीट सेटेलमेंट की स्थापना भी 1894 में न्यूयॉर्क में की गई। इन संस्थाओं का निर्माण सामाजिक तथा सामूहिक सुधार हेतु किया गया। इन सभी में सेटेलमेंट हाउस के लोगों का सर्वांगीण विकास हुआ।

6. सामाजिक सुरक्षा काल

अमेरिकी संविधान ने एक ऐसे संविधान का निर्माण किया था, जिसमें समाज कल्याण के लिए कोई स्थान नहीं था और इस समय की स्थिति ऐसी थी जब संपूर्ण अमेरिका महान मंदी की स्थिति से गुजर रहा था। बहुत बड़ी संख्या में बेकार व्यक्ति द्वारा निजी कल्याण संस्थाओं से सहायता की अपेक्षा की जाने लगी। कुछ स्थानीय स्तर एवं संस्थाओं द्वारा इन क्षेत्रों में कार्य करना प्रारंभ किया,किंतु समस्या इतनी गंभीर थी कि इन संस्थाओं के सभी वित्तीय संसाधन समाप्त हो गए। इन परिस्थितियों में अमेरिका कांग्रेस ने1932 में आपातकालीन सहायता निर्माण अधिनियम को पारित किया। इस अधिनियम के अधीन पुनर्निर्माण वित्त निगम को राज्यों, काउन्टियों और शहरों को सहायता कार्य तथा जन कार्य सहायता परियोजनाओं को बाँटने का अधिकार प्रदान किया गया। 1933 में संघीय आपातकालीन सहायता अधिनियम पारित किया गया। इस अधिनियम के अंतर्गत अल्प अवधि वाली ऋण की व्यवस्था को समाप्त कर इसके स्थान पर समाज कल्याण हेतु संघीय उत्तरदायित्व वाली व्यवस्था का निर्माण किया गया।

7. निर्धनता उन्मूलन काल

निर्धनता उन्मूलन कार्यक्रम को 1961 के बाद प्रारंभ किया गया जिसका उद्देश्य निर्धनता का उन्मूलन करना था। अमेरिका के समाज वैज्ञानिकों द्वारा इस ओर ध्यान दिया गया और इस कार्यक्रम को प्रारंभ

किया गया। इस प्रकार से संघीय सरकार द्वारा इन कार्यक्रमों को चलाया गया। इसके अंतर्गत समयसमय पर कानूनों में सुधार किया गया। 1961 मे क्षेत्र विकास अधिनियम, 1962 में जनशक्ति विकास एवं प्रशिक्षण अधिनियम, तथा 1964 में आर्थिक अवसर अधिनियम पारित किए गए जिससे आर्थिक अवसर अधिनियम निर्धनता उन्मूलन की दृष्टि से सर्वाधिक महत्वपूर्ण है और इसके अधीन नगरीय एवं ग्रामीण सामुदायिक क्रिया कार्यक्रम, युवा कार्यक्रम, सेवायोजन एवं निवेशों के लिए कार्यक्रम ग्रामीण क्षेत्रों में निर्धनता उन्मूलन के विशिष्ट कार्यक्रम, तथा कार्य अनुभव संबंधी कार्यक्रम चलाए गए।

2.3 उत्तरी एवं दक्षिण अमेरिका में समाज कार्य तथा समाज कल्याण का विकास

उत्तरी अमेरिका में समाज-कार्य को संयुक्तराज्य अमेरिका के इतिहास में देखा जा सकता है। उत्तरी अमेरिका में समाज कल्याण नीतियाँ तथा अभ्यास अनेक रूपों में समान ही नज़र आते हैं। उत्तरी अमेरिका में समाज कार्य के क्षेत्र में किस प्रकार की वृद्धि हुई इसका वर्णन निम्नवत है -

संयुक्तराज्य अमेरिका

प्रारंभ में संयुक्तराज्य अमेरिका में समाज कार्य का रूप एक औपचारिकतापूर्ण था। वास्तव में इसका रूप उस समय सामने आया जब निर्धनों के साथ काम कर रहे व्यक्तियों को शिकागो, इलिनॉयस के 'स्कूल ऑफ सोशल इकोनॉमिक्स' द्वारा प्रथम बार संबोधित किया गया। आज हम समाज कार्य द्वारा व्यक्ति को उसकी समस्या का सामना करना सिखाते हैं और उसको इस प्रकार से सशक्त बनाते है कि वह खुद अपनी समस्या का समाधान कर सके। संयुक्तराज्य अमेरिका में कुछ अत्यंत ही महत्वपूर्ण कार्य समाज कार्य की दृष्टि से देखे जा सकते हैं-

- 1624 में वर्जीनिया कॉलोनी द्वारा अक्षम सैनिकों तथा नाविकों की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए एक कानून का निर्माण किया गया।
- 1642 में एलिजाबेथ द्वारा निर्धन कानून पर सर्वप्रथम प्रकाश डाला गया ।
- 1650 में 'प्रोटेस्टेंट वर्क एथिक्स' का निर्माण किया गया जो कि स्वानुशासन, मितव्ययिता तथा कठोर श्रम एवं बेरोज़गार और पराश्रित व्यक्तियों हेतु कार्य करता था।
- 1692 में मैसाचुसेट्स गृह विहिन बच्चोंके लिए एक इकरारनामा लागू किया किया गया, जिसमें ऐसे बच्चों को अन्य परिवारों के साथ रखा जाता था, जिससे ऐसे बच्चों का भरण-पोषण उचित ढंग से हो सके।
- 1776 में एक घोषणा पत्र तैयार किया गया, जिसे संयुक्तराज्य स्वाधीनता घोषणा पत्र के नाम से जाना गया।

- 1813 में एक कनेक्टिकट बाल श्रम कानून पारित किया गया, जिसमें यह प्रावधान रखा गया कि जो बच्चे स्कूल नहीं जा पाते और कारखानों इत्यादि में कार्य करते हैं ऐसे बच्चों हेतु संपूर्ण पढ़ाई की व्यवस्था की जाएगी।
- 1830 में 'द नेशनल नीग्रो सम्मेलन' का समागम किया गया, जिसका उद्देश्य नागरिक अधिकार, स्वास्थ्य तथा महिलाओं के कल्याण हेतु विमर्श प्रारंभ करना था
- 1843 में 'द न्यूयॉर्क एसोशिएशन' की स्थापना की गई, जिसका उद्देश्य गरीबों की दशा में सुधार करता था।
- 1848 में स्त्री अधिकार की स्थापना की गई, जिसमें स्त्रियों के क्षेत्र में कार्य करने वाले लोगों का सम्मेलन का कार्य किया जाता था जो मतदान के अधिकार, शिक्षा एवं रोज़गार पर आधारित था।
- 1874 में प्रथम बार परामर्श देने तथा आवश्यकता ग्रस्त व्यक्तियों की सहायता हेतु आर्थिक अनुदान देने वाली प्रथम दानसंगठनसोसायटी की स्थापना की गई।
- 1895 में 'शिकागो स्कूल ऑफ इकोनोमिक्स' की स्थापना की गई।
- इसका कार्य मुख्यरूप से गरीबों के साथ कार्यरत व्यक्तियों के लिए कार्यक्रम आयोजित करना था।
- 1917 में मैरी रिचमॉण्ड द्वारा''सोशल डाइग्नोसिस'' पुस्तक का प्रकाशन किया गया जो कि सिग्मण्ड फ्रॉयड के कार्यों से प्रभावित थी, जिसके माध्यम से सेवार्थी की समस्या को समझकर उसका समाधान प्रस्तुत करना था।
- 1950 में 'दी सोशल सिक्योरिटी एक्ट 1935' संशोधन के पश्चात प्रस्तुत हुआ, जिसके माध्यम से पूर्णत: अक्षम व्यक्तियों, विशेषकर बच्चों और उन संबंधियों को जिनके साथ जरूरतमंद बच्चे रहे हैं, उनको सहायता प्रदान करना था।
- 1960 : एन.ए.एस.डब्लू. द्वारा प्रथम आचार संहिता अंगीकार की गई।
- 1965 में वृद्धों के कल्याण एवं चिकित्सकीय देखभाल हेतु 'ग्रेट सोसाइटी' कार्यक्रम को प्रारंभ किया गया।

इस प्रकार से उपर्युक्तकानूनों के निमार्ण के द्वारा संयक्तराज्य अमेरिका के समाज कार्य को समझा जा सकता है।

➢ **दक्षिण अमेरिका में समाज कार्य तथा समाज कल्याण का विकास**

दक्षिण अमेरिकी में समाज कार्य तथा समाज कल्याण का अगर हम संक्षिप्त परीक्षण करें तो हम पाते हैं कि दक्षिण अमेरिकी में इसका प्रांरभिक यूरोपीय प्रभाव स्पेन और पुर्तगाल से व्युत्पन्न हुआ हैं न कि इंग्लैंड, फ्रांस या जर्मनी से। स्पेन और पुर्तगाल इन दो राज्यों की सांस्कृतिक तथा राजनीतिक संरचनाएँ 16वीं शताब्दी में अपनी बुलंदियों पर थी इन शक्तियों ने विस्तृत रूप में लेटिन अमेरिका में अपनें औपनिवेशिक दौर में अपनी सांस्कृतिक तथा सामाजिक संरचनाओं को प्रत्यारोपित किया। जब हम अमेरिका में इन शक्तियों का परीक्षण करते हैं तो पाते है कि ये शक्तियाँ वास्तव में सत्तावादी नौकरशाहियाँ थीं, जो समाज में सामाजिक प्रणाली को परिवर्तित नहीं करना चाहती थी। इसका कारण यह था कि ये शक्तियाँ अभिजात्य वर्ग जैसे- भूस्वामी, उद्योगपति तथा सेनाधिकारी इत्यादि इनके लिए कार्य करते थे तथा ये प्रत्यक्ष रूप से उनके लाभों के लिए कार्य करती थी। अत: इन सामाजिक प्रणाली में व्यापक बदलाव न लाकर अपनी सांस्कृतिक और राजनैतिक संरचना को थोपना चाहते थे तथा यहाँ के लोगों के जीवन-स्तर को बदलने के लिए ज्यादा इच्छुक नहीं थे।

खास तौर से पुर्तगाली उपनिवेश का लक्ष्य दोहरा था स्पेन व पुर्तगाल के राजा पोप की नई दुनिया के क्षेत्रीय विभाजन को स्वीकार करते थे। पुर्तगाली उपनिवेश के दोहरे लक्ष्यइस प्रकार थे-

1. पुर्तगाली बस्ती का सृजन – जो अपने निर्यात से राजा के व्यवसाय में बढ़ोतरी करे।
2. ईसाई धर्म का प्रचार- प्रसार

ब्राजील में उपनिवेशी काल के दौरान का पुर्तगाली समाज वंश परंपरा पर आधारित राजा के अधीन अपने अधिकारों का उपयोग करता था तथा ये कुलीन तंत्रात्मक नेतृत्व पूर्णत: कठोरतापूर्वक धार्मिक तंत्र पर आधारित था। सर्वाधिक महत्वपूर्ण इकाई समाज थी तथा ये मित्र संबंधों पर आधारित थी।

1888 में ब्राजील अपनी स्वतंत्रता तक इन्हीं सांस्कृतिक दासता के अधीन था। यहाँ के लोगों में अन्य अमेरिकियों की अपेक्षा दासता की भावना अधिक थी। इसका कारण यह था कि यहाँ सार्वजनिक शिक्षा की उपेक्षा की गई थी तथा इस उपेक्षा को भी न्याय संगत बनाने की कोशिश की जा रही थी जिसके परिणाम स्वरूप इनमें आर्थिक असमानता के साथ-साथ सामाजिक तथा राजनैतिक क्षेत्रों में अन्य अमेरिकियों की भाँति विकास नहीं हो सका, जबकि विविध मौलिक समूहों तथा अप्रवासियों वाले एक देश अर्जेंटाइना में ईश्वर, परिवार, गृह-भूमि तथा स्वतंत्रता पर आधारित एक ऐसी संस्कृति विकसित हुई जो चारों ओर से ब्राजील की अपेक्षा समृद्ध थी। ब्राजील में औपनिवेशिक युग का प्रभाव काफ़ी लंबे समय तक बना रहा क्योंकि 17 वीं सदी में उत्तरी अमेरिका में स्थापित हो रहे लोकतंत्र की दक्षिणी अमेरिका में नकल नहीं की गई। एशिया और अफ्रीका के अन्य देशों की भाँति लैटिन अमेरिका लंबे समय तक विकासशील देशों का भाग माना जाता रहा है। इस क्षेत्र के विकास के अवरोधक कारकों में संयुक्त राज्य पर इसकी निर्भरता, सामाजिक राजनीतिक तथा आर्थिक गिरावट का एक समयावधि के बीच बने रहना साथ ही साथ सैनिक अधिनायक वाद का उदय था। एक परिणाम के रूप में यहाँ के एक वर्ग का मानना है कि जन निर्धनता एवं सामाजिक न्याय की उपलब्धि बिना विदेशी नियंत्रण की उदारता

के प्राप्त नही की जा सकती। इन बातों के प्रभाव से सामाजिक कार्यकर्ता को यह स्वीकार करने में मदद मिली कि नेतृत्व प्रदान किए बिना परिवर्तन नहीं हो सकता। बेशक विकास सामाजिक समस्याओं में अर्थपूर्ण सुधार का अनिवार्य मार्ग है फलस्वरुप इसने समाजकार्य की एक पुनर्अवधारणात्मकता का नेतृत्व किया।

शुरुआती रूप से संयुक्तराज्य शैक्षणिक तथा व्यावसायिक अभ्यासों का मॉडल, वैयक्तिक सेवाकार्य, सामूहिक सेवा कार्य तथा सामुदायिक संगठन पर जोर देने वाली अवधारणाओं से दूर हट गया और स्वदेशी सामाजिक वास्तविकताओं एवं बेहतर तुलनात्मक अवधारणा की ओर उन्मुख हुआ। 1953 क्यूबाई क्रांति तथा 1970 में चिली में एलेण्ड़ शासन के प्रारंभ से सामाजिक कार्यकर्ता यह निर्णय करने में असमर्थ थे कि सामाजिक परिवर्तन जिन्हें वे अपरिहार्य समझते थे, को सुधार क्रांति के माध्यम से प्राप्त करना चाहिए।

1960 से लेकर 1970 के मध्य को समाज कार्य शिक्षा में पुर्नअवधारणात्मक काल के रूप में जाना गया। सामाजिक कार्यकर्ताओं को अपने देशों के विकास के लिए सामाजिक समस्याओं तथा निक्रियता को समाप्त करते हुए सामाजिक समानता की प्राप्ति में योगदान दिया। वहीं ऐतिहासिक भौतिक वादियों का मानना था कि, सामाजिक कार्यकर्ता की भूमिका निर्धन को दमन से मुक्ति तथा सामंतवाद से मुक्ति केलिए सहायता करना है।

1992 में दी लैटिन अमेरिका एसोसिएशन ऑफ स्कूल्स ऑफ सोशल वर्क के अध्यक्ष मारिया लोरेना मोलीना ने प्रस्ताव किया कि प्राध्यापक कक्षा के अंदर तथा बाहर दोनों स्थानों पर आर्थिक असमानता, राजनीतिक तथा सामाजिक अन्याय के खिलाफ आवाज उठाएं तथा समाज में विविधता से संबंधित भेदभाव किए बिना मानवीय वचनबद्धता भी दोहराते हुए विद्यार्थियों के लिए पर्याप्त ज्ञान तथा मूल्य प्राप्त करने की अनुकूल स्थिति का सृजन करें। साथ ही न्यायपूर्ण समाजों के सृजन और संरक्षण तथा मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए के निरंतर प्रयासरत रहे।

2.4 विभिन्न स्थापनों से समाज कार्य

1. स्वकीय दान संगठन समितियाँ(प्राइवेट चैरिटी)

इंग्लैंड के समाज कार्य और अमेरिका के समाज कार्य में जो प्राथमिक भिन्नताएँ नज़र आती हैं, उसमें सर्वप्रथम स्वकीय दान संगठन पद्धति को देखा जा सकता है।इंग्लैंड में निर्धनों को जो सहायता प्रदान की जाती थी, उसके अंतर्गत निर्धनों को निवास हेतुPoor House or Work House प्रदान किए जाते थे, जबकि अमेरिका में निर्धनों, अनाथों और आश्रितों को उनके रहने एवं उनमें कुछ सुधार लाने हेतु भिक्षागृह एवं सुधार गृह बनवाएं गए थे। अमेरिका में पहला भिक्षागृह1657 में न्यूयॉर्क के अंतर्गत में खोला गया। कुछ समय पश्चात ऐसे कई भिक्षागृह अन्य नगरों में भी खोले जाने लगे।

इंग्लैंड में वैयक्तिक रूप से निर्धनों एवं आश्रितों को जो सहायता प्रदान की जाती थी, उसमें अस्पतालों का अत्यधिक महत्व था एवं इसी प्रकार के माध्यमों से निर्धनों की सहायता की जाती थी, जबकि अमेरिका में वैयक्तिक दान पद्धति का स्थान बहुत ही कम था। जो कुछ थोड़ी-बहुत दान पद्धति थी, उसे 18 वीं शताब्दी तक बंद कर दिया गया था। एक ऐसी ही गैर सरकारी चैरिटी का भी अमेरिका में निर्माण कराया गया था जो राष्ट्रीयता पर आधारित थी। ऐसी अन्य समितियों के लिए इनकी दशाओं को सुधारने के लिए नियम-कानूनों का निर्माण भी कराया गया।

अत: इस प्रकार के कार्यों को सुचारु रूप से क्रियान्वित करने के लिए 1898 में न्यूयॉर्क नगर में पहला समाज कार्य पाठ्यक्रम संगठित किया गया। जितने भी गैर-सरकारी संगठन कार्य कर रहे थे उनकोभी ठीक से संचालित करने के लिए Council of Social Agencies की स्थापना भी की गई। समस्त समूह कार्यों को किस प्रकार क्रियान्वित किया जाए एवं उनके सफल संचालन के लिए किस प्रकार से संयुक्त होकर धन को एकत्रित किया जाए इसके लिए Community Chest की भी स्थापना की गई, जिसके अंतर्गत समस्त एकत्रित धन को संगठित रूप से रखने की व्यवस्था थी।

अमेरिका में समाज कार्य के विकास में एक और महत्वपूर्ण विकास तब नज़र आया जब The Settlement House movement को चलाया गया। इस आन्दोलन का उद्देश्य उन गंदे एवं भीड़-भाड वाले इलाके, जहाँ अत्याधिक लोग निवास करते थे, हटाकर उन्हें एक अन्य प्रकार की संस्था, जिसका नाम Settlement House था, के अंतर्गत उन्हें रखा जाता था। इस संस्था में रहने वाले जितने भी व्यक्ति थे उनमें से अधिकतर समाज सुधारक बन गए और उन्होंने गंदी बस्तियों की सफाई, बाल अपराधियों के विशेष न्यायालय, आवास के लिए उचित विधान व्यवस्था के लिए कालान्तर में माँग रखीं। इस प्रकार से अमेरिका में समूह समाज कार्य का प्रारंभ नज़र आता है।

2. कल्याण सेवाओं का संगठन

ज्ञान शांति मैत्री

समाज कार्य के प्रचार-प्रसार की दृष्टि से संयुक्त राज्यअमेरिका में 1917 से 1929 की अवधि महत्वपूर्ण है। इस समय में विभिन्न राज्य कल्याण सेवाओं के महत्व को समझ कर आगे आए। कल्याण सेवाओं के संगठनों का एवं संपूर्ण राज्य प्रणाली के प्रयास का समन्वय किया गया। परिणाम स्वरूप राज्य में गवर्नर द्वारा कल्याण विभाग एवं सलाहकार बोर्ड की स्थापना की गई।

3. संघीय सहायता एवं अनुदान

समाज में रहने वाले लोगों की सहायता एवं आवश्यक सामग्री को प्रदान करने हेतु ''संघीय कार्यक्रम'' अत्यधिक प्रभावी रहा है। इस प्रकार अनुदान में भूमि प्रदान की जाती थी। बृहत भूमि के विक्रय से जो राशि प्राप्त होती उसे संघीय कार्यक्रम में व्यय किया जाता। संघीय कार्यक्रम में निम्न प्रकार के कार्य महत्वपूर्ण है :

- विकलांग लोगों के लिए व्यवस्था उत्पन्न करना।
- लड़कियों की शिक्षा।

- ➢ असमर्थ व्यक्तियों की सहायता।

बाद में सरकार द्वारा प्राप्त अनुदान में कार्यों की संख्या में वृद्धि हुई और संघीय सहायता एवं अनुदान का प्रसार व्यापक हुआ।

4. जन कल्याण (1929 उपरान्त)

- ❖ समाज कल्याण के विषय में समस्याओं का सामना करते हुए इसे राष्ट्रीय स्तर पर समझना अति आवश्यक था। यह तब संभव हुआ जब सरकारी एवं गैर-सरकारी संगठनों ने समाज कल्याण कार्यक्रम में भाग लिया।
- ❖ समाज कल्याण करने के लिए राज्य सरकार द्वारा प्रदत्त सेवाएँ एवं केंद्र सरकार द्वारा अन्य समूहों को भी प्रेरित किया गया।

सरकारी एवं गैर-सरकारी संस्था की भागीदारी 1930 तक कुछ पहलुओं मेंदेखने को मिलती है। राष्ट्रीय स्तर के संगठनों का कार्यभार भी गैर सरकारी संस्था के नेतृत्व में था। ये संगठन निम्नलिखित थे

- ❖ American Association on Mental Deficiency (1876)
- ❖ National Society for the Study of Education (1895)
- ❖ National Consumers league (1899)
- ❖ National Child Labour Committee (1904)

5. सामाजिक सुरक्षा अधिनियम 1935 – (Social Security Act,1935)

14 अगस्त 1935 को सामाजिक सुरक्षा अधिनियम को इस उद्देश्य के साथ बनाया गया कि जो बेरोज़गारी, बीमारी, असमर्थता, मातृत्व एवं बाल- समस्याओं ने समाज को चारों ओर से घेरा हुआ है इसका स्थायी समाधान निकाला जाए। इसके अंतर्गत मुख्यरूप से निम्न कार्यक्रमों को चलाया गया-

- ●सामाजिक बीमा
- ●सामाजिक सहायता
- ●स्वास्थ्य एवं
- ●महिला एवं बाल विकास

सामाजिक सुरक्षा के अंतर्गत वृद्धों हेतु 65 वर्ष के पश्चात वृद्धावस्था अवकाश प्रदान किया गया। इसके अलावा यदि पत्नी तथा पति की आयु 62 वर्ष से अधिक है तो 18 वर्ष से कम आयु के बच्चोंको इसका लाभ प्राप्त होगा।

6. कार्यक्रम एवं क्रियान्वयन

अमेरिका में सामाजिक कार्य के क्षेत्र में अनेक कार्यक्रमों का आयोजन जैसे मनोरंजन के क्षेत्र, शिक्षा के क्षेत्र, स्वास्थ्य, धार्मिक आदि क्षेत्रों में किया गया, जिससे समाज कार्य को और प्रभावी बनाया जा सके।

ये कार्यक्रम निम्ननुसार थे-

- **Civil Conservation Crops (C3)-** 1933 में इस कानून को बनाया गया, जिसका उद्देश्य 17 से 25 वर्ष युवकों को नौकरी न होने की स्थिति में एवं जो स्कूल न जा पा रहे हो, ऐसी स्थिति में C3 शिविरों में भर्ती कराया जाता था, ताकि इन्हें आवश्यक सुविधाएँ दी जा सके। 1942 में इसे समाप्त कर दिया गया।
- **National Youth Administration -** इस कार्यक्रम को 1935 में ही मुख्यत: दो उद्देश्यों को ध्यान में रखकर बनाया गया था – प्रथम स्कूल ,कॉलेज एवं स्नातक छात्रों को अपनी पढ़ाई जारी रखने के लिए आर्थिक सहायता एवं पार्ट टाइम नौकरी देकर इनकी सहायता की जाए और दूसरा 18 से 25 वर्ष के बेरोज़गार युवाओं को विभिन्नपरियोजना में कार्यों को कराकर उन्हें अनुभव देना था।1945 में इसे भी समाप्त कर दिया गया।
- **Programe for Rural Rehabilitation (FERA)-** अमेरिका की आर्थिक मंदी से निपटने के लिए राज्य सरकार को केंद्रीय अनुदान लंबी अवधि के लिए Federal Emergency Relief Administration स्थापित किया गया।
- ***मनोरंजनात्मक एवं शिक्षात्मक कार्यक्रम-*** इसके संदर्भ में प्रौढ़ शिक्षा एवं विद्यालयी शिक्षा को अधिक महत्व दिया गया। 1866 में इसी तारतम्य में पहले खेल-मैदान का निर्माण किया गया, जो बालक बालिकाओं के लिए उनके मनोरंजन एवं शिक्षा के क्षेत्र में सहायक हो सके। इसकी प्रभावशीलता को देखते हुए 1885 में राष्ट्रीय स्तर पर इसे प्रारंभ किया गया। आगे चलकर इन्हीं कार्यक्रमों के अंतर्गत खेल-कूद व शारीरिक क्रियाओं को भी शामिल किया गया, जिसमें कला संगीत, अभिनय, नृत्य आदि थे।
- शिक्षा के कार्यक्रम के अंतर्गत प्रौढ़ शिक्षा को अधिक महत्व प्रदान करने के लिए 1870 एवं 1880 के मध्य प्रौढ़ शिक्षा आंदोलन भी चलाया गया। इस आंदोलन का यह परिणाम निकला कि सार्वजनिक पुस्तकालयों एवं विश्वविद्यालयों में निःशुल्क प्रसार सेवाएँप्रारंभ हुई।
- ***व्यवहार परिवर्तन कार्यक्रम -*** युवकों के व्यवहार में परिवर्तन हेतु कई प्रकार के मनोरंजनात्मक कार्यक्रमों तथा शिक्षात्मक कार्यक्रमों को शामिल किया गया, जिससे युवकों के चरित्र का निर्माण हो सके। इस आवश्यकता को ध्यान में रखते हेतु 1875 से 1895 के मध्य बड़े प्रोटेस्टेन्ट समुदाय ने अपना युवक कार्यक्रम संगठित किया। धार्मिक भावनाओं के

विकास के साथ-साथ चरित्र निर्माण एवं व्यवहार निर्माण के लिए भी बॉयज स्काउट, गर्ल्स स्काउट, कैम्फायर गर्ल्स आदि संगठनों का विकास हुआ। इस प्रकार की और अन्य संस्थाओं ने भी इस बातपर जोर दिया कि व्यक्ति का समुदाय तथा सामाजिक परिस्थितियों से संबंधहोता है जो कि उसके व्यवहार को प्रभावित करती है। अतः इन्हीं उद्देश्यों के साथ उपर्युक्त व्यवहार एवं चरित्र निर्माण कार्यक्रमों को संचालित किया जाता था।

- ***उपचार के क्षेत्र में मनोरंजनात्मक कार्यक्रम*** - किसी भी बीमारी के क्षेत्र में व्यक्ति का वातावरण प्रमुख भूमिका निभाता है। अत इसी उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए उपचार के क्षेत्र में मनोरंजन कार्यक्रमों को भी शामिल किया गया। ये कार्यक्रम व्यक्ति को शारीरिक, मानसिक तथा सांवेगिक व्याधियों से मुक्तिदिलाने या प्रभाव को कम करने का प्रयास करते हैं। इन कार्यक्रमों के माध्यम से हृदय रोग, तनाव ग्रस्त बच्चे, मानसिक रोगी, बाल अपराधी आदि क्षेत्रों में मनोरंजन उपचार के साथ इसका प्रयोग किया जाता था। वर्तमान समय में इस क्रियाविधि का उपयोग अस्पतालों में मुख्य रूप से किया जाने लगा है, जिसमें अनेक गतिविधियों के माध्यम से व्यक्ति के सामूहिक सबंधों को दृढ़ता प्रदान होती है, जिससे रोगों का निदान करने में आसानी होती है।
- ***अन्य कार्यक्रम*** – समाज कार्य के क्षेत्र में ऐसे कई संगठन हैं जिसके माध्यम से सामूहिक गतिविधियों को कराया जाता है। जैसे राजनीतिक पार्टियाँ, औद्योगिक संस्थाएँ, श्रमिक संघ इत्यादि। इन संगठनों का उद्देश्य मनोरंजनात्मक कार्यक्रमों द्वारा व्यक्तियों को अपनी रुचियों के अनुसार शिक्षा मनोवृत्ति तथा व्यवहार को नियंत्रित करने के लिए कार्यक्रमों का आयोजन करना है। अतः इस प्रकार से समाज कार्य को विभिन्न कार्यक्रमों के माध्यम से देखा जा सकता है।

ज्ञान शांति मैत्री

अमेरिका में बनाए गए कुछ महत्वपूर्ण विधान एवं कार्य एकनज़र में-

- सन 1911 ई. में नेशनल फेडरेशन ऑफ सेटलमेंट की स्थापना समरूपता बनाए रखने के लिए की गई।
- सन 1896 ई. में प्रथम बाल क्लब की स्थापना की गई।
- सन 1906 ई. तक अनेक क्लबों का निर्माण हुआ और सलाह तथा सहयोग के लिए राष्ट्रीय संगठन बनाया गया।
- सन 1910 में सर बेडेन पावेल द्वारा अमेरिकी बाल स्काउट संघ की स्थापना की गई।
- सन 1912 में लड़कियों के लिए समान संगठन जूलियट लॉ द्वारा बनाया गया, जिसका नाम बालिका गाइड रखा गया।

- कैम्प फायर गर्ल्स का गठन सन् 1918 में डा0 लूथर गुलिक के नेतृत्व में हुआ, जिसका उद्देश्य पैदल सैर, खेल, गाना, मनोविनोद, प्रयोग शाला, विचार विमर्श, सांस्कृतिक तथा शैक्षिक क्रियाओं में भाग लेने के लिए अवसर प्रदान करना था।
- प्रथम विश्व युद्ध के समय वाई. एम.सी. ए. तथा साल्वेशन आर्मी को भी नियुक्त किया गया।
- सन 1923 में क्लीवलैंड में समाजकार्य के स्कूल में प्रथम प्रशिक्षण कोर्स समूह अनुभव कार्य के नाम से प्रारंभ हुआ।
- सन 1926 में एक प्रयोगात्मक सेटलमेंट की नींव प्रशिक्षण के उद्देश्य से रखी गई।
- सन1930 तक सामूहिक कार्य विकास के लिए अनेक कदम उठाए गए तथा संबंधित संगठनों का विकास हुआ।
- पिट्सबर्ग में 4 व 5 नवम्बर 1933 ई0 को विभिन्न संस्थाओं के समूह नेताओं की एक बैठक हुई। यह अपने प्रकार की प्रथम बैठक हुई, जिसमें विभिन्न प्रकार की समितियों का निर्माण हुआ। जैसे-अनुसंधान समिति, प्रशिक्षण समिति, स्तर निर्धारण समिति इत्यादि।
- सन 1935 राष्ट्रीय समाज कार्य कांफ्रेंस का आयोजन।
- सन 1936 में अमेरिकन एसोसिएशन फार द स्टडी आफ द ग्रुप वर्क का गठन, जिसे आज अमेरिकन एसोसिएशन आफ ग्रुप वर्क्स के नाम से जाना जाता हैं।

2.5 सारांश

अमेरिका में समाज कार्य सदैव सामाजिक एवं आर्थिक व्यवस्था के परिवर्तनों से प्रभावित होता रहा है। अमेरिका में हमेशा से ही किसी-न-किसी प्रकार के अभाव हमेशा ही नज़र आए है, चाहे वह प्राचीन सामंतवादी समाज पद्धति के विघटन का समय हो या औद्योगिक समाज व्यवस्था की स्थापना। मानव की आवश्यकता की पूर्ति हेतु समाज एवं सरकार के प्रयासों द्वारा समयसमय पर ऐसे कार्य किए गए, जिनके परिणामस्वरूप समाज में व्याप्त समस्याओं को कम करने का प्रयास किया गया और परिणामस्वरूप समाज कार्य सामाजिक विकास हेतु एक आवश्यक अंग बन गया। समाज में जिस प्रकार से मानवीय आवश्यकताओं में बढ़ोतरी हो रही है वैसे ही समाज में अनेक प्रकार की समस्याओं का भी जन्म हो रहा है और समाज कार्य ने हमेशा ही ऐसी समस्याओं का समाधान प्रस्तुत किया है। अत: समाज कार्य का दायरा दिन-दिनों बढ़ता जा रहा है। इस प्रकार से कहा जा सकता है कि अमेरिका में मानवीय आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए समाज कार्य विकास निजी एवं ऐच्छिक सेवा संस्थाओं के प्रयत्नों के फलस्वरूप हुआ। आगे चलकर समस्त राष्ट्र एवं राज्यों ने अपनी समस्त कल्याणकारी योजनाओं में इसे नीति नियोजन का प्रमुख अंग बना लिया।

2.6 बोध प्रश्न

प्रश्न 01. अमेरिका में शिक्षा एवं व्यवसाय के स्तर पर समाज कार्य के क्षेत्र में आए विकास की चर्चा कीजिए।

प्रश्न 02. अमेरिका में समाज कार्य के विकास क्रम की चर्चा कीजिए।

प्रश्न 03. अमेरिका में समाज कार्य के प्रांरभिक स्तर की चर्चा कीजिए।

प्रश्न 04. अमेरिका में समाज कार्य के क्षेत्र में किए गए प्रमुख कार्यों की चर्चा कीजिए।

प्रश्न 05. सामाजिक सुरक्षा अधिनियम 1935 – (Social Security Act,1935) के प्रमुख प्रावधानों के बारे में चर्चा कीजिए।

2.7 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

1. सिंह सुरेंद्र, मिश्र.पी.डी. (2001). *समाज कार्य* लखनऊ :न्यू रॉयल बुक कंपनी ।
2. डा. राकेश द्विवेदी एंव डा. सरिता गौतम (2014). *समाज कार्य इतिहास दर्शन एवं क्षेत्र* कोटा: वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय।
3. पाण्डेय बालेस्वर (2003). *समाज कार्य,* नई दिल्ली: राज कमल प्रकाशन।
4. सिंह, ए.एन. एवं सिंह, ए.पी. (2008). *समाज कार्य*. लखनऊ: (इंडिया) प्रा.लि.।
5. डीवे, जे. थिंक हाऊवी (1933). *ए रीस्टेटमैंट ऑफ द रिलेशन ऑफ रिफलैक्टिव थिंकिंग टु दएजूकेटिव प्रासेस (संशोधित संस्करण)*. बॉ स्टोन डी.सी. हीथ.
6. फैरिस, एल्यवर्थ (1937). द *नेचर आफ हयुमैन नेचर* मैकग्रा-हिल : बुक कं.इंक.
7. तेज संगीता एवं पाण्डेय तेजस्कर(2010). *समाज कार्य*. लखनऊ : जुबली एच फाउंडेशन।

ज्ञान शांति मैत्री

इकाई 3 प्रशांत एशिया में समाज का इतिहास

इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य

3.1 प्रस्तावना

3.2 एशिया में समाज कार्य का प्रारंभ

3.3 प्राचीन काल में समाज कार्य का विकास

3.4 मध्य काल में समाज कार्य का इतिहास

3.5 आधुनिक काल में समूह कार्य का इतिहास

3.6 प्रशांत क्षेत्र में समाज कार्य का विकास

3.7 सारांश

3.8 बोध प्रश्न

3.9 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

3.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आप –

- प्रशांत एशिया के देशों में समाज कार्य विषय के विकास का वर्णन कर सकेंगे।
- प्रशांत एशिया के क्षेत्रों में समाज कार्य के इतिहास को स्पष्ट कर सकेंगे।
- प्रशांत एशिया के देशों में समाज कार्य के भविष्यका अनुमान लगा सकेंगे।

ज्ञान शांति मैत्री

3.1 प्रस्तावना

लगभग सभी देशों में समाज कार्य का अभ्यास एक व्यवसाय के रूप में किया जा रहा है। यूरोप के देशों यथा यूनाइटेड किंगडम (इंग्लैंड), नीदरलैंड तथा जर्मनी और संयुक्त राज्य अमेरिका से समाज कार्य एक व्यावसायिक विषय के रूप में विश्व में प्रसारित हुआ, उसी समय समाज कार्य के प्रभाव में प्रशांत एशिया भी आया। सभी देशों की भाँति यहाँ भी समाज कार्य का उद्गम हुआ और धीरे-धीरे व्यवसाय का रूप लेता गया। प्रारंभ में यहाँ भी समाज कार्य का विषय दान प्रणाली के आधार पर ही निर्भर था, लेकिन वह धीरे-धीरे व्यवसाय का रूप धारण करने लगा। सभी देश अपने नागरिकों को प्रशिक्षण के माध्यम से इसमें निपुण बना रहे हैं। विश्वके नक्शे पर समाज कार्य व्यावसायीकरण तथा शिक्षा के लिए चितंन 20 वीं सदी से प्रारंभ में एक महत्वपूर्ण मुद्दा बना है। इसने सामाजिक विकास की चुनौतियों को स्वीकार करते हुए अपना प्रभाव प्रस्तुत किया है। समाज कार्य की शिक्षा का प्रारंभ या समाज कार्य को एक व्यवसाय का

रूप प्रदान करने की दिशा में सर्व प्रथम यूरोप ने अपना योगदान दिया और इस तरह समाज कार्य दुनियाँ के सभी देशों में बड़ी ही तेज़ी से फैलने लगा। प्रस्तुत इकाई के माध्यम से समाज कार्य व्यवसाय या समाज कार्य का उद्भव और विकास प्रशांत एशिया में किस तरह होता है, इसका वर्णन प्रस्तुत किया जा रहा है।

3.2 एशिया में समाज कार्य का प्रारंभ

एशिया में समाज कार्य को मुख्य रूप से 4 भागों में बांटा जा सकता है, जिसके अंतर्गत दक्षिण एशिया, दक्षिण पूर्व एशिया, पूर्व एशिया तथा मध्य एशिया है और इस विभाजन के अनुसार इनमें आने वाले देशों की संख्या काफ़ी अधिक है इनमें से कुछ प्रमुख देशों की चर्चा की जा रही है। एशिया के इन देशों में समाज कार्य का उद्भव और विकास किस प्रकार से हुआ है इन सब देशों के बारे मे विस्तृत चर्चा आगे की जाएगी।

सबसे पहले दक्षिण एशिया में समाज कार्य कहाँ से प्रारंभ हुआ और इसका विकास कैसे हुआ? और इसकी वर्तमान स्थिति क्या है ? इस संबंध में चर्चा की जा रही है-

1. दक्षिण एशिया

दक्षिण एशिया के देशों में पाकिस्तान, बांग्लादेश, श्रीलंका, भारत, नेपाल, भूटान तथा मालदीव को सम्मिलित किया जाता है। इन तमाम देशों में अन्य यूरोपीय देशों की भाँति ही समाज कार्य का प्रादुर्भाव हुआ और विकास होता गया। दक्षिण एशिया के इन देशों में समाज कार्य के विकास का वर्णन प्रस्तुत किया जा रहा है।

बांग्लादेश

बांग्लादेश में समाज कार्य का प्रारंभ पाकिस्तान के शासन के दौरान हुआ और उस समय बांग्लादेश में समाज कार्य नये रूप में उभर कर सामने आया। 1950 के दशक के प्रारंभ में तीव्र औद्योगीकरण, नगरीकरण, मलिन बस्ती क्षेत्रों का तीव्र विकास होने के कारण अनेक मनोसामाजिक तथा आर्थिक समस्याएँ जन्म ले रही थी। इस समय ही समाज कार्य ने अपनी महती भूमिका अदा की। समाज कार्य अध्ययन के लिए संस्थान की आवश्यकता तथा संभावना को ध्यान में रखते हुए सर्वप्रथम 1957 में ढाका विश्वविद्यालय में एक समाज कार्य विद्यालय प्रारंभ करने का एक प्रस्ताव किया गया। संयुक्तराष्ट्र विशेषज्ञ डॉ. मूरे ने समाज कल्याण मुद्दों के साथ कार्य किया और बांग्लादेश में व्यावसायिक समाज कार्य की वकालत भी की। आगे चलकर उन्हीं के प्रयासों से केंद्रीय तथा साथ ही प्रांतीय सरकार ढाका विश्वविद्यालय में एक समाज कार्य विद्यालय स्थापित करने के लिए सैद्धांतिक रूप से सहमत हो गए, किंतु समाज कल्याण पर अधिक महत्व देने से असहमत थे। अनेक प्रयासों के परिणामस्वरूप 9 फरवरी 1973 को ढाका विश्वविद्यालय द्वारा एक महाविद्यालय स्थापित किया गया जो कि समाज कल्याण तथा शोध के क्षेत्र में कार्यरत है। ढाका विश्वविद्यालय स्थित समाज कल्याण तथा शोध संस्थान समाज कार्य में

ज्ञान शांति मैत्री

त्रिवर्षीय बी.ए. ऑनर्स उपाधि तथा समाज कल्याण में द्विवर्षीय एम.ए. उपाधि पाठ्यक्रम संचालित करता है। इसके अतिरिक्त राजशाही विश्वविद्यालय के अंतर्गत समाजकार्य महाविद्यालय भी समाज कार्य में ऑनर्स उपाधि संचालित करता है।(हुसैन, 1999)

श्रीलंका

श्रीलंका में व्यावसायिक समाज कार्य की वृद्धि तीन मुख्यकारणों से अत्यधिक धीमी गति से चल रही है। प्रथम कारण राजनीतिक वैचारिक दर्शन है। राजनैतिक स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरांत श्रीलंका एकलोक कल्याण राज्य घोषित किया गया। इसने तब आर्थिक समानता और सामाजिक न्याय को प्राप्त करने पर बल दिया और इसके फलस्वरूप सार्वभौमिक कल्याण सेवाएं देना प्रारंभ किया।1978 में नवीन आर्थिक नीति को अपनाया गया, इसके बावजूद भी शिक्षा तथा स्वास्थ्य देखभाल पर अत्यधिक व्यय हुआ। इसका परिणाम यह हुआ कि राज्य के द्वारा नवीन नीतियों को अनुमति नहीं दी गई और समाज कल्याण कार्यक्रमों को रोक दिया गया, जिससे समाज कार्य के क्षेत्रों में विकास नहीं हो सका।

श्रीलंका में समाज कार्य प्रक्रिया के धीमी गति से चलने का दूसरामुख्य कारण धर्ममूलक समाज रहा है। श्रीलंका में मुख्यरूप से तीन प्रकार के धार्मिक समूह निवास करते है, प्रथम हिंदू, द्वितीय मुसलमान और तृतीय बौद्ध। ये समूह अपनी परंपराओं एवं संस्कृति पर विश्वास करते हैं तथा उसी के आधार पर अपना कार्य करते है । इन सभी धर्मों में दान-देना या निर्धन की सहायता करना या मानव सेवा करना प्रारंभ से ही एक सदाचार माना जाता है। ये लोग प्रतिदिन किसी-न-किसी रूप में समाज के जरूरतमंद व्यक्तियों हेतु कार्य करते रहते हैं। इसी कारण से लोग समाज कार्य को अलग से कोई विधा नहीं मानते हैं। तीसराजो प्रमुख कारण रहा है, उसमें परंपरागत पारिवारिक प्रणाली है, जिसके माध्यम से महिलाओं, बच्चों, विधवाओं, अक्षमों, वृद्धों, निर्धनों आदि को समाज में कार्य करने हेतु प्रारंभ से ही सक्षम बनाया जाता है (रणवीरा, 2005)। श्रीलंका में स्वतंत्रता के पश्चात समाज सेवा विभाग, ग्रामीण विकास विभाग, परिवीक्षा विभाग तथा कुछ स्वैच्छिक संगठनों ने भी समाज के विकास हेतु कार्य किया हैं।

श्रीलंका में व्यावसायिक समाज कार्य शिक्षण की दिशा में प्रथम प्रयास 1952 में किया गया जब सिलोन इंस्टीट्यूट ऑफ सोशल वर्क की स्थापना की गई, जिसका मुख्य उद्देश्य सरकार तथा स्वैच्छिक संगठनों में कार्यरत समाज कल्याण कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षण प्रदान कराना था । तत्पश्चात् 1964 में इसका पुनर्निर्माण किया गया। इसके साथ-साथ विद्यालय द्वारा 1978 में पहली बार समाज कार्य में द्विवर्षीय समाज कार्य पाठ्यक्रम प्रारंभ किया गया । आगे चलकर संसद द्वारा इसे अधिनियम संख्या41 के तहत 1992 में मान्यता प्रदान की गई और यह संस्थान नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ सोशल डवलपमेंट के नाम से स्थापित किया गया। वर्तमान समय में संस्थान के द्वारा समाज कार्य में डिप्लोमा पाठ्यक्रम, परामर्शन में डिप्लोमा पाठ्यक्रम इत्यादि संचालित किए जा रहे हैं।

भारत

भारत में यदि हम समाज कार्य के संदर्भ में अध्ययन करते हैं तो स्पष्ट होता है कि इसका इतिहास प्राचीन है। आदिकाल में भारत में यदि हम समूह कार्य के संदर्भ में अध्ययन करते हैं तो स्पष्ट होता है कि इसका इतिहास प्राचीन है। आदिकाल में समूह कार्य के कुछ हिस्से नज़र में आते हैं इसके बाद मध्ययुगीन काल में समूह कार्य को स्पष्ट देखा जा सकता है। आधुनिक काल में समाज कार्य में कार्यक्रमों एवं क्रियान्वयन में अंतर स्पष्ट होता है। समाज कार्य को समाज कार्य की एक प्रणाली के रूप में जाना जाता है। आधुनिक समाज में समाज कार्य को व्यावसायिकता के क्षेत्र से भी जोड़कर देखा जा रहा है, जिसकी उत्पत्ति वर्तमान में ही हुई है।

आदिकाल और आधुनिक काल में जो समाज कार्य की स्थिति थी, को निम्न बिंदुओं के माध्यम से समझा जा सकता है –

3.3 प्राचीन काल में समाज कार्य का विकास

प्राचीन काल में समाज कार्य आधुनिक समाज कार्य से एकदम भिन्न था। पूर्व में समाज कार्य व्यवस्थित नहीं था और इसे केवल व्यक्ति की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु किया जाता था। समाज कार्य को अन्य सामाजिक संस्थाओं द्वारा किया जाता था और ये संस्थाएँ लोगों के जीवन पर अपना प्रभाव डालती थीं। प्रो. राजाराम शास्त्री ने वैदिक काल की सामुदायिक समाज की व्यवस्था का वर्णन करते हुए लिखा है कि इस व्यवस्था में समुदाय की आवश्यकताओं को पूरा करने का दायित्व प्रत्येक व्यक्ति का था। व्यक्ति की आवश्यकताओं को सामूहिक प्रयास से पूरा किया जाता था। इस काल में विशिष्ट सहायता की आवश्यकता रखने वाले व्यक्तियों का उत्तरदायित्व शासक, धनी तथा साधारण समुदाय के सदस्यों द्वारा आपस में बाँट लिया जाता था। (शास्त्री, 1970)

प्राचीन काल में सहायता का कार्य धर्म के आधार पर था। मंदिरों और आश्रमों की स्थापना, संत-महात्मा के लिए निवास स्थान, मंदिरों में रहने वालों के लिए भोजन कपड़े आदि अन्य वस्तुओं के द्वारा समाज कार्य किया जाता था। जिनके पास स्वयं का घर नहीं था, उन्हें मंदिरों में रखने की व्यवस्था थी। जो वृद्ध एवं बीमार हो, उनकी सहायता करने का उत्तरदायित्व भार जाति और समुदाय परिषदों पर था। ¼Garg½. मठों और मंदिरों के माध्यम से समूह सहायक की परंपरा का संचालन किया जाता था। संघ तथा गण शब्द ऋग्वेद तथा अथर्ववेद में समूह कार्य को प्रतीत करते थे।

आगे चलकर संघ का नाम बौद्ध भिक्षुओं ने अपनाया जो अपने आपको सामूहिक रूप से भिक्षु संघ कहते थे। पौराणिक कथाओं से प्रतीत होता है कि प्राचीन काल में दो प्रकार की संन्यासी बस्तियाँ थीं-प्रथम आवास और दूसरा आराम। ऐसीबस्तियों को गाँव के बाहर बनाया जाता था, जिसे भिक्षु स्वयं बनाते थे और उनकी मरम्मत स्वयं करते थे। इसे आवास कहा जाता था। जब कोई धनी व्यक्ति इन भिक्षुओं को दान

में देता था तथा उसकी स्वयं देखभाल करता था उसे 'आराम' कहा जाता था। आराम की सभी संपत्ति सामूहिक होती थी। इसका उपयोग संघ में सभी सदस्य द्वारा किया जाता था। संघ को दी जाने वाली कोई भी संपत्ति किसी भी व्यक्ति द्वारा व्यक्तिगत रूप से अधिकार में नहीं ली जा सकती थी। बोधिसत्व ने मगध में ही गाँव के तीस व्यक्तियों को एकत्र किया और गाँव की भलाई एवं उन्नति के लिए कार्य करने को प्रेरित किया, जिससे गाँव की सड़कों का निर्माण, बांधों का निर्माण, तालाब आदि कार्यों को किया गया। मौर्य वंश के काल में जनता को ध्यान में रखते हुए उनकी भलाई के लिए अनेक सामूहिक कार्यों को किया गया। (मिश्र, 2008)। हड़प्पा संस्कृति से लेकर बौद्ध काल तक जनता की भलाई के लिए उपदेश दिए जाते थे। मौर्य काल में भी जनता की भलाई के लिए उपदेश दिए गए। अशोक ने भी कहा कि सहायता के लिए मेरी प्रजा किसी भी समय मुझसे आकर मिल सकती है। शिक्षा के क्षेत्र में भी प्राचीन काल में गुरूजनों द्वारा शिक्षा देने की परंपरा कोदेखा जा सकता है। बौद्ध काल में शिल्प संघों का निर्माण कर आर्थिक व्यवस्था को मजबूती प्रदान की गई। लोगों को आभास हो गया कि संयुक्त रूप से कार्य करके अधिक धन अर्जन किया जा सकता है।

अतः प्राचीन काल में इन समस्त उपर्युक्त उदाहरणों के माध्यम से समाज कार्य को समझा जा सकता है। मध्य काल में इसके अंतर्गत अनेक परिवर्तन दिखेंगे।

3.4 मध्य काल में समाज कार्य का इतिहास

समाज कार्य के क्षेत्र में मध्य काल या स्वतंत्रता के पूर्व के काल को उस समय से देखा जा सकता है जब 18वीं शताब्दी के प्रारंभ में ही अनेक सामूहिक प्रयास समाज की आर्थिक, राजनैतिक, सामाजिक और धार्मिक व्यवस्था के सुधार हेतु किए गए।

यह कोशिश बंगाल से रामपुर मिशन के रूप में देखी जा सकती है जिसकी स्थापना 1780 में की गई थी। समाज के क्षेत्र में कार्यरत व्यक्तियों एवं समाज सुधारकों का मत था कि हिंदुओं की सामाजिक दशा में सुधार तभी लाया जा सकता है, जब बालविवाह निषेध कराया जाए, बलिकाओं की भ्रूण हत्या पर रोक लगाई जाए, सती प्रथा को समाप्त किया जाए और विधवाओं का पुर्नविवाह कराया जाए।¼Prasad, 1977: 441½

इन्हीं सामाजिक बुराईयों के क्षेत्र में कार्य करने वाले कुछ प्रमुख व्यक्तियों एवं संस्थाओं को समूह कार्य के क्षेत्र में इस प्रकार देखा जा सकता है-

राजाराम मोहन राय (1774-1843)- एक साधारण परिवार में जन्में राजाराम मोहन राय, जिन्होंने सर्वप्रथम सामाजिक कुरीतियों की ओर समस्त जनता का ध्यान आकर्षित कराया। सन 1828 में ब्रह्म समाज की स्थापना की। इस ब्रह्म समाज की स्थापना का उद्देश्य था कि किस तरह से जाति बंधनों को तोड़ा जाए, सती प्रथा रोकी जाए, बाल विकास के लिए शिक्षा की व्यवस्था की जाए, बाल विधवाओं की स्थिति में सुधार किया जाए और इसके अलावा दान तथा संयम को उत्साहित करने के उद्देश्य से इस

संस्था का निर्माण किया गया था। इन सभी कार्यों को करने के लिए सामूहिकता की भावना अनिवार्य थी तथा इसी कारण इन सभी समाज सुधार कार्यों में समूह कार्य का प्रयोग किया जाता था।

स्वामी दयानंद सरस्वती (1824-1883) - दयानंद सरस्वती को 19वीं शताब्दी के प्रमुख समाज सुधारवादी के रूप में जाना जाता है । इनका जन्म काठियावाड़ के टंकारा नामक गाँव में हुआ था। दयानंद मूर्ति पूजा के कट्टर विरोधी थे। उनका मानना था कि एक पत्थर जो स्वयं की रक्षा नहीं कर सकता वो हमारी रक्षा कैसे कर सकता है? सन 1875 में इन्होंने आर्यसमाज की स्थापना मुंबई में की। सामूहिक कार्य के सिद्धांतों तथा प्रविधियों का उपयोग करते हुए जाति प्रथा, बाल विवाह , धर्म परिवर्तन लोगों के लिए गृह प्रवेश-निषेध नीति आदि के विरोध में आवाज उठाई ।

स्वामी विवेकानंद (1863-1902) - 12 जनवरी 1863 को जन्मे नरेंन्द्र, जो आगे चलकर स्वामी विवेकानंद कहलाए, दलितों की व्यवस्था को देखकर दुखी होते थे। इसी कारण 1897 में रामकृष्ण मिशन की स्थापना की, जिसका उद्देश्य दलितों का कल्याण एवं उनका सामाजिक शैक्षिक विकास करना था । इन्होंने अलग-अलग व्यक्तियों के समूह बनाकर देश सेवा का कार्य किया ।

एनी बेसेन्ट (1847- 1933)- शिक्षा और समाज सुधार के क्षेत्र में एनी बेसेन्ट का नाम अत्यंत ही आदर के साथ लिया जाता है। उनका जन्म 1847 में लंदन में हुआ। वे सामाजिक समस्याओं के प्रति अत्यंत ही चिंतित थी। इसी कारण उन्होंने नेशनल रिफार्मर के संपादक ब्राडलो के साथ मिलकर समाज सुधार के क्षेत्र में अत्यंत महत्त्वपूर्ण कार्य किया । उन्होंने आबादी का नियम एक परिपत्र लिखा, जिसमें जनन-नियंत्रण की आवश्यकता पर अत्यधिक बल दिया गया। सन 1881 में मैडम बलावस्की तथा कर्नल आलकट ने मद्रास में ब्रह्म समाज की स्थापना की। बेसेन्ट ने अपना संपूर्ण जीवन इसी में लगा दिया। थियोसोफिकल सोसाइटी की स्थापना और प्रारंभिक कार्यक्रम में इनका मुख्य योगदान था । सन 1907 में वे भारत में थियोसोफिकल सोसाइटी की अध्यक्षा बन गई। थियोसोफिकल सोसाइटी ने निम्न उद्देश्यों को लेकर समाज में कार्य किया -

- ❖ मानव जाति के लिए एक ऐसे सार्वभौमिक भ्रातृत्व का आधार-बिंदु तैयार करना, जिसमें जाति, धर्म, लिंग, वर्ण आदि का कोई भेद-भाव न हो।
- ❖ धर्म, दर्शन और विज्ञान के तुलनात्मक अध्ययन को प्रोत्साहित करना।
- ❖ प्रकृति के रहस्यपूर्ण नियमों तथा मनुष्यकी अंतर्निहित शक्तियों के विषय में अन्वेषण करना।

एनी बेसेंट ने शिक्षा के क्षेत्र में भी अत्यधिक कार्य किया और शिक्षा के महत्त्व को बताते हुए व्यापक प्रचार-प्रसार किया । 1917 में ऐनी बिसेंट को इंडियन नेशनल कांग्रेस की अध्यक्षा बना दिया गया । उनकी प्रमुख पुस्तकों में ‘आत्म कथा’, ‘प्राचीन ज्ञान’, उपनिषदों का ज्ञान’ आदि मुख्य हैं।

महात्मा गांधी (1869-1947) -गांधी जी ने हमेशा ही समूह कार्य प्रविधि के माध्यम से आंदोलनों को क्रियान्वित किया। यदि हम कहें कि समूह कार्य का वास्तविक रूप गांधी के आंदोलनों से स्पष्ट होता है तो

यह गलत नहीं होगा। गांधी जी ने मानव को एवं मानव गरिमा और आत्मसम्मान को विशेष महत्वदिया। आज वे ही मूल्य सामूहिक समाज कार्य के मूल्य माने जाते हैं। गांधी द्वारा अनेक प्रशिक्षण केंद्रों की स्थापना की गई, जिसमें लोग साथ-साथ कार्य किया करते थे। गांधी स्वयं ही रोगियों, अछूतों, ग्रामीणों के बीच उनके साथ मिलकर कार्य करते थे।

उपर्युक्त प्रमुख व्यक्तियों एवं संस्थाओं के अतिरिक्त कुछ अन्य महत्त्वपूर्ण व्यक्ति एवं संस्थाओं को समूह कार्य योगदान के क्षेत्र में शामिल किया जा सकता है-

- ❖ सन 1815 में राजाराम मोहन राय द्वारा आत्मीय समाज की स्थापना की गई जो बाद में चलकर ब्रह्म समाज कहलाया। यह समाज सती प्रथा के विरुद्ध सेरामपुर मिशनरियों द्वारा प्रारंभ किया गया।
- ❖ ईश्वर चंद्र विद्यासागर ऐसे प्रथम व्यक्ति थे, जिन्होंने विधवा विवाह विरोध के खिलाफ आंदोलन चलाया। उनके सतत प्रयासों से ही हिंदु विधवा पुनर्विवाह अधिनियम1856 पारित किया गया।
- ❖ अगस्त 1848 में ज्योतिराव फुले ने लड़कियों के लिए विद्यालय खोला।
- ❖ सन 1861 में न्यायमूर्ति रानाडे ने विधवा पुर्नविवाह के कारणों और हितों को ध्यान में रखते हुए विधवा विवाह एसोसिएशन की स्थापना की, जिसका उद्देश्य विधवा पुर्नविवाह को प्रोत्साहन देना था।
- ❖ केशवचंद्र सेन ने स्त्री शिक्षा पर अधिक ज़ोर दिया।
- ❖ सन 1867 में प्रार्थना समाज की स्थापना की गई।
- ❖ आर्य समाज की स्थापना 1875 में की गई, जिसका उद्देश्य मूर्ति पूजा, जाति प्रथा, बाल विवाह, छुआ-छूत प्रथा के विरूद्व तथा विधवा पुनर्विवाह करने के पक्ष में था।
- ❖ सन 1882 में शशिपद बेनर्जी द्वारा बंगाल में हिंदु विधवाओं के लिए एक विधवागृह की नींव डाली।
- ❖ सन 1882 में पंडित रमाबाई ने आर्य महिला समाज का गठन किया। इसके साथ भारतीय ईसाई मिशनरियों के दृष्टिकोण और उनकी सोच के समर्थन में महिलाओं की स्थिति के सुधार में कार्य किया।
- ❖ स्त्रियों की शिक्षा पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता पर जनता का ध्यान आकर्षित कराते हुए 1883 में केशचंद्र सेन द्वारा शिक्षा पर विशेष बल दिया गया।
- ❖ सन 1896 में कर्वे द्वारा पूना में विधवा गृह की स्थापना की गई।
- ❖ सन 1892 में युवा सुधारकों ने मद्रास में मद्रास हिंदू समाज सुधार संघ की स्थापना की।

- ❖ सन 1905 में गोपाल कृष्ण गोखले द्वारा 'सर्वेन्ट ऑफ इंडिया सोसाइटी' की नींव डाली गई। इसके द्वारा राजनैतिक कार्यों के साथ -साथ सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक और दलित वर्ग के लिए कार्य आरंभ किए गए।
- ❖ 1906 में वी.आर.शिंदे द्वारा मुंबई में भारत दलित वर्ग मिशन समाज की स्थापना की गई।
- ❖ 1908 में मुंबई संघ द्वारा सेवा सदन की स्थापना की गई। इसका उद्देश्य महिला कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षित करना था।
- ❖ 1917 में समाज सेवा सम्मेलन की पहली बैठक की गई।
- ❖ 1917 में ही एनी बेसेंट एवं मारगैरेट कासिन्स द्वारा मद्रास में प्रांतीय महिला संघ की स्थापना की।
- ❖ 1920 के दशक उपरांत डॉ. भीमराव अंबेडकर ने दलितों के सर्वांगीण विकास हेतु कार्य किए।
- ❖ 1925 में राष्ट्रीय स्तर पर महिलाओं की राष्ट्रीय सभा की गई।
- ❖ एन.एम.जोशी तथा चंद्रावरकर ने मुंबई में सोशल सर्विस लीग की स्थापना की, जो मिल में काम करने वाले लोगों के लिए तथा उनके बच्चों के लिए मनोरंजन का प्रबंध करती थी व रात्रि पाठशालाएँ चलाती थी।

उर्पयुक्त विद्वानों ने मध्य काल में समाज कार्य को लेकर अनेक प्रयास किए, जिनके परिणामस्वरूप आज समूह कार्य को काफ़ी हद तक मान्यता प्राप्त हो रही है, किंतु यह कार्य अधिकतर मानवीय पक्ष आधार पर ही थे। यह कार्य वर्तमान आवश्यकताओं कोध्यान में रखकर ही किए जाते थे। इन प्रयासों में कोई स्पष्ट सिद्धांत प्रणालियाँ नहीं थी। इस दृष्टिकोण को सहायता करने वाले लोगों ने बाद में संशोधित किया जब पश्चिमी देशों में एक व्यवसाय के रूप में समाज कार्य विकसित हुआ और इसका प्रभाव भारत में भी देखा गया।

ज्ञान शांति मैत्री

3.5 आधुनिक काल में समूह कार्य का इतिहास

स्वतंत्रता प्राप्ति पश्चात के काल को हम आधुनिक काल के रूप में देख रहे हैं। इस काल के प्रारंभ से ही सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक एवं विकास जैसे अनेक कार्यक्रमों को समूह कार्य के क्षेत्र में प्रारंभ किया गया। बच्चों, युवाओं एवं वृद्धों के लिए अनेक प्रकार के कार्यक्रमों को चलाया गया। बच्चों के लिए एन.सी.सी., एन.एस.एस., गर्ल्स स्काउट, ब्वायज स्काउट आदि संगठनों को बनाया गया। युवाओं के कल्याण हेतु, युवा कल्याण निदेशालय एवं नगरों में युवक कल्याण समितियाँ बनाई गई। जो महिलाएँ नौकरी करने के लिए जाती थी उनके लिए अलग से मनोरंजन आवास गृहों का निर्माण किया गया। वृद्धों के लिए देवा केंद्रों का निर्माण किया गया, जिसके माध्यम से वृद्ध एक-दूसरे के साथ मिलकर जीवन-यापन कर सकें, तो इस प्रकार से अनेक कार्य स्वतंत्रता के पश्चात होने लगे। यदि व्यावसायिक एवं औपचारिक रूप से देखा जाए तो समाज कार्य का प्रारंभ बीसवीं शताब्दी में ही हुआ जब मुंबई में एक

संस्था सोशल सर्विस लीग ने छह सप्ताह का संक्षिप्त पाठ्यक्रम समाज कार्यकर्ताओं के लिए चलाया। उन्हें प्रशिक्षण देकर समाज की वर्तमान समस्याओं से लड़ने के लिए सक्षम बनाया। तत्पश्चात 1936 में सर दोराबजी ग्रेजुएट स्कूल ऑफ सोशल वर्क की स्थापना मुंबई के एक स्लम क्षेत्र देवनार में की गई। इस संस्था का मुख्य उद्देश्यसमाज कार्य को एक व्यावसायिक सेवा प्रदान करने वाले यंत्र के रूप में विकसित करना है, जिससे समाज कार्य को एक व्यावसायिक रूप प्रदान किया जा सके और कार्यकर्ताओं में व्यावसायिक गुण विकसित किए जा सके। समाज कार्य करते समय समाज कार्य की मुख्य प्रणालियों (सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य, सामाजिक समूह कार्य, सामुदायिक संगठन, सामाजिक क्रिया, समाज कल्याण प्रशासन और सामाजिक शोध) का प्रयोग कर समाज में व्यक्ति, समूह और समुदाय की समस्याओं का उचित समाधान किया जा सके। वर्तमान में यह विद्यालय टाटा इन्स्टीट्यूट ऑफ सोशल साइन्स के नाम से जाना जाता है और यहाँ समाज कार्य से संबंधित बी.एस.डब्ल्यू., एम.एस.डब्ल्यू., एम.फिल. एवं पीएच.डी. तक की औपचारिक शिक्षा प्रदान की जाती है। इसके साथ स्वंतत्र भारत में संस्थाओं का खुलना प्रारंभ हो गया और 1947 में दिल्ली स्कूल ऑफ सोशल वर्क की स्थापना की गई। इसी वर्ष काशी विद्यापीठ में समाज विज्ञान संकाय के अतंर्गत समाज कार्य विभाग खुला जिसमें बी.एस.डब्ल्यू., एम.एस.डब्ल्यू., एम.फिल. एवं पीएच.डी. तक संपूर्ण अध्ययन कार्य कराया जाता है। 1949 में लखनऊ विश्वविद्यालय में समाज कार्य में शिक्षा प्रारंभ हुई । इसके पश्चात देश के अन्य विश्वविद्यालयों, जैसे - आगरा, इंदौर, मद्रास, पटना, कलकत्ता, जबलपुर, महाराष्ट्र (मुंबई, नागपुर, वर्धा इत्यादि) जगह पर समाज कार्य पाठ्यक्रमों को प्रारंभ किया गया, जिसमें औपचारिक शिक्षा के माध्यम से व्यावसायिक एवं क्षेत्र कार्य आधारित शिक्षा प्रदान की जाती है। 1960 में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (यूजीसी) ने अपनी एक समिति नियुक्त की, जिसने अपने प्रतिवेदन में यह संस्तुति की है कि समाज कार्य की शिक्षा अन्य विद्यालयों में पूर्व स्नातक स्तर पर भी होनी चाहिए।

भारत में समाजकार्य के विद्यालयों का विकास मुख्य रूप से स्वतंत्रता के पश्चात हुआ है। 1948 तक केवल टाटा इन्स्टीट्यूट ऑफ सोशल साइन्स में ही समाज कार्य संबंधी शिक्षा दी जाती थी, परंतु 1958 में समाज कार्य के 6 विद्यालय, 1958 में 13, 1961 में 20 और अब लगभग 25 विद्यालय है, जिनमें से 17 में केवल समाज कार्य की शिक्षा दी जाती है और 8 में अन्य प्रकार की संबंधी शिक्षा भी प्रदान की जाती है। (पाण्डेय, 2010 : 60) वर्तमान समय में समाज कार्य के क्षेत्र में अब नयापन आने लगा है और समाज कार्य क्षेत्र में जाकर अभ्यास कार्य कराया जाने लगा है, जिससे विद्यार्थियों को समाज कार्य के संबंध में व्यावहारिक ज्ञान भी प्राप्त हो सके। वे समाज में उत्पन्न समस्याओं का समाधान करने में सक्षम बन सके । आज आवश्यकता है कि समाज कार्य जैसे पाठ्यक्रमों का व्यावहारिक पक्ष मजबूत किया जाए और जिससे समाज कार्य को प्रत्येक संकटग्रस्त व्यक्ति तक पहुँचाया जा सके।

दक्षिण – पूर्व एशिया

दक्षिण-पूर्व एशिया के अंतर्गत इंडोनेशिया, मलेशिया, कंबोडिया, लॉओस, म्यांमार, सिंगापुर, फिलीपींस, थाइलैंड तथा वियतनाम जैसे देश आते हैं। यहाँ हम इंडोनेशिया एवं मलेशिया देशों का विशेष तौर से वर्णन करेंगे, जहाँ समाज कार्य एक विषय के रूप में विकसित हुआ है।

इंडोनेशिया

इंडोनेशिया विश्व का चौथा सर्वाधिक जनसंख्या वाला देश है। जो चीन, भारत तथा संयुक्त राज्य अमेरिका के बाद विश्व का सर्वाधिक जनसंख्या वाला देश है। 17 अगस्त, 1945 को इंडोनेशिया स्वतंत्र हुआ। यह देश सांस्कृतिक विविधताओं से भरा पड़ा है। यहाँ 350 से अधिक मान्यताप्राप्त नस्लीय भाषाई समूह है। इंडोनेशिया में सर्वाधिक 88 प्रतिशत मुसलमान, 8 प्रतिशत ईसाई, 2 प्रतिशत हिंदु तथा 1 प्रतिशत बौद्ध तथा 1 प्रतिशत में अन्य धर्मावलंबी है। इंडोनेशिया में साक्षरता दर 88.5 प्रतिशत से 90.2 प्रतिशत के बीच, जन्मदर 21.1 प्रति 1000 जीवित जन्म दर, मृत्युदर 6.26, शिशु मृत्युदर 46, जीवन प्रत्याशा पुरुषों में 68.8 तथा महिलाओं में 71.8 वर्ष है। अन्य देशों की तरह इंडोनेशिया में सामाजिक समस्याओं का अनुभव करने वाले तथा उत्तर देने की आवश्यकता वाले लोगों की संख्या बढ़ी, जिसके फलस्वरुप समाज कार्य अस्तित्व में आया। स्वतंत्रता के बाद अनेक गैर सरकारी संगठनों ने सामाजिक समस्याओं के निर्मूलन हेतु कार्य किया।

इंडोनेशिया में समाज कार्य को एक व्यवसाय के रूप में 1957 में बांदुंग में समाज कार्य के क्षेत्र में प्रशिक्षण कार्यक्रम प्रारंभ होने पर मान्यता प्राप्त हुई। इसमें मुख्य रूप से दो व्यावसायिक प्रशिक्षण कार्यक्रम शुरु किए गए थे। एक तो सामाजिक कर्मचारियों के लिए प्रांरभिक स्तर का पाठ्यक्रम तथा दूसरा कुशल सामाजिक कार्यकर्ताओं के लिए उच्चस्तरीय पाठ्यक्रम। सामाजिक मामलों के मंत्रालय के कर्मचारियों को एक वर्ष या 2 वर्ष का प्रशिक्षण देने का कार्यक्रम तैयार किया गया। बांदुंग में 1964 में स्कूल ऑफ सोशल वेलफेयर की स्थापना समाज कार्य में स्नातक तथा परास्नातक कार्यक्रम प्रदान करने के लिए की गई। वर्तमान में इंडोनेशिया में लगभग 35 सार्वजनिक तथा निजी विश्वविद्यालय समाज कार्य एवं समाजकल्याण में स्नातक कार्यक्रम प्रदान कर रहे हैं। स्कूल ऑफ सोशल वेलफेयर, स्टेट इस्लामिक यूनिवर्सिटी ऑफ सुनान, काली जागा, जकार्ता समाज कार्य में मास्टर डिग्री प्रदान करते हैं।

मलेशिया

मलेशिया में सर्वाधिक 51.1% मलय, 24.1% चीनी तथा 7% भारतीय तथा 18% गैर मलेशियाई नागरिक रहते है। यह देश 1957 में अंग्रेज़ी शासन से आजाद हुआ। मलेशिया में 1940 ई. तक विभिन्न कल्याण सेवाएँ, जातीय, नस्ल तथा धार्मिक एवं दान संगठनों के माध्यम से दी जाती थी। यहाँ समाज कार्य व्यवसाय देश में जरूरत के अहसास को देखकर 1940 में प्रारंभ हुआ। यूरोपीय कल्याण राज्य की अवधारणा तथा द्वितीय विश्व युद्ध के संकट ने इसको जन्म दिया। 1946 में मलेशिया में ब्रिटिश प्रशासन ने एक अलग विभाग के रूप में समाज कल्याण को विकसित किया। यहाँ समाज कार्य शिक्षण का प्रारंभ

समाज कल्याण मंत्रालय के अधिकारियों तथा कर्मचारियों की प्रशिक्षण की आवश्यकता से हुआ। प्रारंभ में समाज कल्याण अधिकारी अंग्रेज थे जिन्हें सामाजिक सेवा में प्रशिक्षण हेतु दो वर्षीय कार्यक्रम के अध्ययन के लिए लंदन स्कूल ऑफ इकोनॉमिक्स जाना पड़ता था। यहाँ समाज कार्य ज्ञान के बजाए सामाजिक आवश्यकताओं पर जोर देता था। पहली बार1985 में दो स्थानीय लोग स्नातक लंदन स्कूल ऑफ इकोनॉमिक्स तथा इसके बाद दो स्वॉसिया विश्वविद्यालय में प्रशिक्षित हुए। सिंगापुर में मलाया विश्वविद्यालय ने समाज कार्य में सर्टिफिकेट कोर्स, अर्थशास्त्र विभाग के अंदर स्थापित किया। यही पाठ्यक्रम 1952 में दो वर्षीय डिप्लोमा के रुप में उच्चीकृत हुआ। अंग्रेज़ी शासन ने 1952 में समाज कल्याण विभागों के कमचारियों को यहाँ भेजना प्रारंभ किया। मलाया विश्वविद्यालय के अर्थशास्त्र विभाग ने 1957 तथा 1968 में एक वर्षीय परास्नातक डिप्लोमा तथा स्नातक उपाधि पाठ्यक्रम प्रारंभ किया। मलेशिया में नेशनल सांइस विश्वविद्यालय ने 1976 मे सामाजिक आवश्यकताओं को ध्यान मे रखकर स्नातक पाठ्यक्रम “सामाजिक विकास प्रशासन” का प्रारंभ इस क्षेत्र को पुन: स्थापित करने के उद्देश्य से किया।

पूर्व एशिया

पूर्व एशिया के क्षेत्र में चीन एवं जापान के समाज कार्य को देखा जा सकता है। इन क्षेत्रों में समाज कार्य के क्षेत्र में अनेक कार्य किए गए जिनका संक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार से है -

चीन

चीन में समाज कार्य की शुरूआत मुख्यरूप से 1921 में मानी जाती है। जब सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य की प्रक्रिया द्वारा गोद लेने की परंपरा का प्रारंभ हुआ। 1930 के दशक में समाज कार्य के कई विश्वविद्यालयों को प्रारंभ किया गया। चूंकि चीन में कल्यण–क्रियाकलाप राजनीतिक अभिमुखता से प्रभावित थे, इसलिए तीस वर्षों तक चीन का पश्चिमी समाज कार्य से कोई संपर्क स्थापित नहीं हो सका।(लीयंग,1995)। 1984 में प्रथम बार समाज शास्त्र से संबंधित पुस्तक का प्रकाशन किया गया जिसमें समाज कार्य एक व्यावहारिक समाज शास्त्र के नाम से इंगित हुआ1886 में चीनी गणराज्य द्वारा समाज कार्य तथा प्रबंधन शीर्षक के एक विषय को जोड़ने का निर्णय लिया। संपूर्ण चीन में समाज कार्य के व्यावसायिक क्षेत्रों में बढ़ोतरी हेतु एक शैक्षिक संघटन ‘ द चाइना एसोशिएसन ऑफ सोशल वर्क एजुकेशन’ 1994 में स्थापित किया गया। 2002 तक चीन में लगभग 90 से अधिक विश्वविद्यालयों एवं महाविद्यालयों में समाज कार्य से संबंधित पाठ्यक्रमों को प्रारंभ किया जा चुका था।जिसके माध्यम से कार्यकर्ताओं समाज कार्य के क्षेत्र में आगे बढ़ने हेतु प्रोत्साहित किया जाता रहा है।

जापान

जापान के इतिहास पर यदि नज़र डाली जाए तो प्रतीत होता है कि जापान में दान कर्म जैसी धार्मिक गतिविधियाँ हमेशा नज़र आती है। चीन के माध्यम से भारत से आए बौद्ध धर्म के मानने वाले लोगों ने बौद्ध मंदिरों द्वारा जरूरतमंद लोगों को देखभाल मुहैया कराई। आगे चलकर सरकार ने भी इस क्षेत्र में

कार्य करना प्रारंभ किया और इस हेतु नीतियों का निर्माण करना प्रारंभ किया। फलस्वरूप 1929 में''सेंट्रल सोशल वर्क एसोसिएशन'' का निर्माण किया गया, जिसके माध्यम से कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षण प्रदान किया जाने लगा। तत्पश्चात इसे ही जापान का प्रथम समाज कार्य स्नातक विद्यालय माना गया। इसी के पश्चात समाज कार्य का प्रथम अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन पेरिस में हुआ।

जापान ने 1932 में सार्वजनिक सहायता कार्यक्रम की शुरूआत की। द्वितीय विश्वयुद्ध शुरू हुआ और उसके फलस्वरूप 'सेंट्रल सोशल वर्क एसोशिएशन' बंद कर दिया गया। यद्यपि अगस्त1945 में युद्ध समाप्त हो गया था सहशक्तियों ने देश पर कब्जा कर लिया था। महाविद्यालयों तथा विश्वविद्यालयों, जो युद्ध के कारणबंद कर दिए गए थे ने धीरे-धीरे अपने को पुर्नस्थापित करना प्रारंभ किया 1950 में ''डोशिशा विश्वविद्यालय'' ने समाज कार्य में प्रथम स्नातकोत्तर कार्यक्रम शुरू किया। जापान में आर्थिक सुधार के साथ समाज कल्याण सेवाओं का विकास हुआ। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर पश्चिमी देशों तथा समाजवादी देशों के बीच हो रहे शीतयुद्ध के एक परिणाम स्वरूप इसका उद्भव हुआ और धीरे-धीरे समाज कार्य एक व्यवसाय के रूप में विकसित होता गया।(मीडा,1995)।

मध्य एशिया

मध्य एशिया क्षेत्र के अंर्तगत रूस, कजाखस्तान, उजबेकिस्तान, तुर्कमेनिस्तान,अफगानिस्तान इत्यादि देशों को सम्मिलित किया जाता है। इन तमाम देशों में समाज कार्य केवल रूस में ही अपना प्रभाव स्थापित कर पाया। इसके अतिरिक्त अन्य देशों में इसके महत्व को कम ही देखा जा सकता है।

रूस

जिस रूप में समाज कार्य यूरोपीय देशों में देखा जाताहै एवं जिस प्रकार से इन देशों में समाज कार्य को मान्यता प्राप्त है उस प्रकार से कभी भी सोवियत संघ में समाज कार्य का रूप नहीं देखा गया। चिकित्सा एवं शिक्षा के क्षेत्र जैसे विषयों में कार्य करने वाला यहाँ कोई भी प्रशिक्षित कार्यकर्ता नहीं था और न ही किसी संस्था के साथ कार्य करने वाला कोई कार्यकर्ता था। 12 जून 1991 को सोवियत संघ के विघटन पश्चात रूस में समाज कार्य को देखा जा सकता है। रूस में लम्बेसमय से बने आर्थिक संकट और बढ़ते सामाजिक विभेदीकरण को ध्यान में रखते हुए 1991 में शैक्षणिक कार्यक्रम के रूप में समाज कार्य को प्रारंभ किया गया। (अर्सकाइया एट्रअल, 2004) रूस में समाज कार्य के शिक्षण के रूप में पंचवर्षीय 'वैशिष्ट्रय' कार्यक्रम उपलब्ध है इसके साथ-साथ कुछ विश्वविद्यालयों में स्नातक कार्यक्रम एवं तीन विश्वविद्यालयों में एम .ए. कार्यक्रम संचालित किए जा रहे हैं। (अर्सकाइया एटअल, 2004)

3.6 प्रशांत क्षेत्र में समाज कार्य का विकास

प्रशांत क्षेत्र के अंतर्गत मुख्यरूप से निम्न देशों को शामिल किया जाता है- ऑस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड, पापुआ, न्यू गूनिया, ब्रूनी, फिजी, कूक आइलैंड्स, किरिबती, मार्शल आईलैंड, नाउरु, निउ, सोलोमॅन, आइलैंड्स, टोकेलाऊ, टोंगा, तुवालु, वनुआतू, सोमोआ इत्यादि । लेकिन उसमें कुछ ही देश में समाज

कार्य का विकास हुआ है। जिसमें ऑस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड तथा फिजी देश शामिल है। इन देशों में सामाजिक सेवाएँ या कल्याण कार्यक्रम को एक विशेष विभाग के अंतर्गत संचालित किया जाता है। इन देशों में समाज कार्य कैसे प्रकाश में आया और किस प्रकार एक विषय के रूप में शामिल हुआ इसे समझने का प्रयास किया जा रहा है।

ऑस्ट्रेलिया

ऑस्ट्रेलिया विश्व का छठवां विशालतम देश माना जाता है, जोकि सूक्ष्मतम महाद्वीप जनभूमि है। अलग-अलग विद्वानों ने ऑस्ट्रेलिया में समाज कार्य के प्रारंभ के संदर्भ में अपने विचारों के व्यक्त किया है। । मर्चेण्ट (1985) --- कि आस्ट्रेलियाई समाज कार्य इतिहास यथा – लॉरेंस (1965), मॉर्टिन (1983) तथा – (1980) ने सामाजिक कार्मिकों विशेषकर महिलाओं की, जो वृत्तिक समाज कार्य – प्राक तारीखी बनाते हैं, उपेक्षा करते हुए, वृत्तिक संघटनों पर संकेंद्रण किया है।1980 में भी समाज कल्याण के इतिहास में सांप्रदायिक संस्थाओं की कमी का संज्ञान हैं। कैथोलिक कल्याण प्रयासों के सामान्य इतिहास की आवश्यकता से अधिक अपेक्षा की गई है। केनेडी (1985) के अनुसार 1887 से 1898 के दौरान दान कल्याण ऑस्ट्रेलिया में समाज कार्य के प्रारंभ में एक महत्वपूर्ण घटक के रूप में माना जाता है। आस्ट्रेलिया में समाज कार्य की शुरूआत की एक ऐतिहासिक घटना है। वस्तुत: प्रारंभिक काल 1830 के दशक को मानते हैं, जिसमें कैथोलिक धर्मों के द्वारा देखभाल, महिलाओं के लिए सेवाएँ बीमार तथा अनाथ हेतु सेवाओं, पारिवारिक कल्याण सेवाएँ, सामाजिक न्याय तथा वकालती मुद्दों हेतु सेवाओं का विकास किया।1929 में मंदी के समय भी औपचारिक समाज कार्य को देखा जा सकता है।1950 के दशक तक विश्वविद्यालय स्तर पर समाज कार्य स्थापित हो चुका था (कैमिलेरी,2005) । इसके अलावा सिडनी, मेलबर्न, एडिलेड, वेस्टर्न एवं क्वींसलैंड विश्वविद्यालयों में व्यावसायिक समाज को देखा जा सकता है। समाज कार्य में व्यासायिकता हेतु एक मानक मापदंड की उपयोगिता को ध्यान में रखते हुए 1974 में 'नेशनल काउंसिल ऑफ सोशल वेलफेयर' की स्थापना की गई। (नेपियर तथा जार्ज, 2001)। 1975 तक ऑस्ट्रेलिया में लगभग 11 समाज कार्य विद्यालयों को स्थापित किया जा चुका था । वर्तमान समय में ऑस्ट्रेलिया के द्वारा आस्ट्रेलियन सोशल वर्क , कंटेम्पोरेरी सोशल वर्क एजुकेशन , एडवांसेज इन सोशल वर्क एंड वेलफेयर एजुकेशन एवं विमेन इन वेलफेयर एजुकेशन जैसी शोध पत्रिकाएं नियमित रूप से प्रकाशित की जा रही हैं(नेपियर तथा जार्ज,2001)।

न्यूजीलैंड

न्यूजीलैंड में बहुत समय तक समाज कार्य का कोई प्रावधान नहीं था। समाज कार्य क्या होता है, वहाँ के लोग नहीं जानते थे। सबसे पहले 1947 में तत्कालीन मंत्री पीटर फ्रेलर ने समाज कार्य के विद्यालय की स्थापना के लिए स्वीकृति दी और इस प्रकार से यूनिवर्सिटी ऑफ न्यूज़ीलैंड का नाम बदलकर "स्कूल

ऑफ सोशल साइंस' कर दिया गया। अत: 1949 में विद्यालय स्वीकृति प्राप्त कर सका और ब्रितानी शिक्षाविदों, अभ्यासकर्ताओं तथा न्यूज़ीलैंड के रहने विद्वानों ने इसका निर्देशन किया (नश तथा मॅनफोर्ड, 2001)। 14 वर्षों के बाद 1964 में "स्कूल ऑफ सोशल साइंस' के स्नातकों ने 'न्यूजीलैंड एसोशिएशन ऑफ सोशल वर्कर' के निर्माण में नेतृत्व की भूमिका ग्रहण की। समाज कार्य शिक्षण प्रशिक्षण के मामले में परामर्श लेने के लिए 1973 में "न्यूजीलैंड सोशल वर्क ट्रेनिंग काउंसिल' की स्थापना की गई। व्यावसायिक मानक समाज कार्य योग्यता प्राप्ति हेतु परिषद ने संघर्ष किया, किंतु उसे गहरे तर्कों और विवादों के बीच कार्य करना पड़ा 1970 के दशक के माध्यम से व्यावसायिकों तथा मंत्रियों के बीच समाजकार्य के पाठ्यक्रम प्रशिक्षण को लेकर विवाद उद्भूत होने लगा था।1975 में मैसे विश्वविद्यालय के समाजशास्त्र विभाग में समाज कार्य इकाई स्थापित की गई, जिसने प्रथम बार एक सुदूर में अंशकालिक अध्ययन हेतु स्नातक कार्यक्रम (बैचलर ऑफ सोशल वर्क) निरूपित किया। 1986 के पूर्व ' ऑकलैण्ड टीचर्स कॉलेज' ने भी एक व्यावसायिक समाज कार्य पाठ्यक्रम प्रारंभ किया। अनेक अन्य विकसित देशों के समान न्यूजीलैंड में समाजकार्य के इतिहास में अनेक संघर्ष पाए थे।

3.7 सारांश

प्रशांत एशियां समाज कार्य यूरोप के देशोंयथा-यूनाइटेड किंगडम (इंग्लैंड), नीदरलैंड तथा जर्मनी और संयुक्तराज्य अमेरिका के पश्चात व्यावसायिक विषय के रूप में विश्व के सामने विस्तृत हुआ और सभी देशों की भाँति ही यहाँ भी समाज कार्य का उद्गम हुआ और धीरे-धीरे व्यवसाय का रूप लेता गया। एशिया में समाज कार्य का प्रारंभ विभिन्न देशों में हुआ, जिनको मुख्य रूप से 4 भागों में बाँटा जा सकता है, जिसके अंतर्गत दक्षिण एशिया, दक्षिण पूर्व एशिया, पूर्व एशिया तथा मध्य एशिया है।

दक्षिण एशिया

दक्षिण एशिया में बांग्लादेश, श्रीलंका एवं भारत में समाज कार्यको देखा गया है । बांग्लादेश में समाज कार्य का प्रारंभ पाकिस्तान के शासन के दौरान हुआ और उस समय बांग्लादेश में समाज कार्य नए रूप में उभर कर सामने आया। श्रीलंका में व्यावसायिक समाज कार्य अत्यधिक धीमी गति से चला, जिसमें राजनीतिक मूलधारक राज्य वैचारिक दर्शन, धर्ममूलक समाज एवं परंपरागत पारिवारिक प्रणाली को देखा जाता है। भारत में समाज कार्य प्राचीन काल से ही प्रारंभ है जब दान धर्म की प्रथा के आधार पर लोगों की सहायता की जाती थी। आज वर्तमान समय में यहां अत्यधिक परिवर्तन देखा जा रहा है, जिसके द्वारा अनेक प्रणालियों के माध्यम से अनेक क्षेत्रों में यह फैल रहा है।

दक्षिण – पूर्व एशिया

दक्षिण-पूर्व एशिया के अंतर्गत इण्डोनेशिया एवं मलेशिया में समाज कार्य को देखा गया। इंडोनेशिया में समाज कार्य को एक व्यवसाय के रूप में 1957 में बांदुंग में समाज कार्य के क्षेत्र में प्रशिक्षण कार्यक्रम से प्रारंभ किया गया। मलेशिया में समाज कार्य ज्ञान के बजाए सामाजिक आवश्यकताओं पर जोर देता था।

ज्ञान शांति मैत्री

पूर्व एशिया– पूर्व एशिया के क्षेत्र में चीन एवं जापान के समाज कार्य को गया चीन में समाज कार्य की शुरूआत मुख्यरूप से 1921 से मानी जाती है। जब सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य की प्रक्रिया द्वारा समाज के गरीब वर्ग को गोद लेने की परंपरा का प्रारंभ हुआ। जापान में समाज कार्य पर पश्चिमी देशों तथा समाजवादी देशो के बीच हो रहे शीतयुद्ध के एक परिणाम स्वरूप इसका उद्भव हुआ और धीरे-धीरे समाज कार्य एक व्यवसाय के रूप में विकसित होता गया।

मध्य एशिया

मध्य एशिया क्षेत्र के अंर्तगत रूस के समाज कार्य को देखा गया। रूस में समाज कार्य अत्यधिक देरी से प्रारंभ हुआ और इसकी स्थिति दयनीय थी। जिस रूप में समाज कार्य यूरोपीय देशों में देखा जाता है एवं जिस प्रकार से इन देशों में समाज कार्य को मान्यता प्राप्त है, उस प्रकार से कभी भी सोवियत संघ में समाज कार्य का रूप नहीं देखा गया। तत्पश्चात लंबे समय से बने आर्थिक संकट और बढ़ते सामाजिक विभेदीकरण को ध्यान में रखते हुए 1991 में शैक्षणिक कार्यक्रम के रूप में समाज कार्य को प्रारंभ किया गया। प्रशांत क्षेत्र में समाज कार्य का विकास मुख्यरूप से - ऑस्ट्रेलिया एवं न्यूज़ीलैंड में देखा गया। ऑस्ट्रेलिया में समाज कार्य शुरूआत की एक ऐतिहासिक घटना है जिसमें कैथोलिक धर्मो के द्वारा देखभाल, महिलाओं के लिए सेवाएँ बीमार तथा अनाथ हेतु सेवाओं पारिवारिक कल्याण सेवाएँ, सामाजिक न्याय तथा वकालती मुद्दों हेतु सांप्रदायिक सेवाओं का विकास किया। न्यूज़ीलैंड में समाज कार्य को काफ़ी समय तक कोई जानता नहीं था तत्पश्चात इसकी उपयोगिता को ध्यान में रखते हुए अनेक संगठनों का निर्माण किया गया।

अत: इस प्रकार से समाज कार्य दान, धर्म की प्रथाओं से आगे बढ़ते हुए वर्तमान समय में दुनियाँ के तमाम देशों में अपनी भूमिका को स्पष्ट कर रहा है और प्रत्येक क्षेत्र में एक व्यवसाय के रूप में कार्य कर रहा है। दुनियाँ भर में अनेक कार्यकर्ता शिक्षण प्रशिक्षण के माध्यम से विभिन्न क्षेत्रों में कार्य कर रहें है, जिससे समस्याओं को उचित प्रकार से सुलझाने में मदद मिल रही है।

3.8 बोध प्रश्न

1. समाज कार्य विकास में एशियाई देशों की भूमिका को रेखांकित कीजिए।
2. चीन व रूस में समाज कार्य के विकास में देरी के कारणों को स्पष्ट कीजिए।
3. प्रशांत क्षेत्र में समाज कार्य विषय में कौन-कौन सी मुख्य विशेषताएँ स्पष्ट होती है?
4. भारत में वर्तमान समाज कार्य को स्पष्ट कीजिए।
5. आस्ट्रेलिया में समाज कार्य किस प्रकार प्रभावी साबित हुआ?

3.9 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

- प्रो.नील एबेल एवं डां.अशोक सरकार(2009).*समाज कार्य का उद्गम और विकास*.नई दिल्ली: समाज कार्य विद्यापीठ,इग्नू।
- हयूगेस.एल.(1998).*कैथोलिक एण्ड दि केयर ऑफ डेस्टिच्यूट चिल्ड्रेन इन लेट ऑस्ट्रेलिया*.मेलबार्न: थॉमस नेल्सन।
- हुसैन.ए.(1999). *ए ब्रीफ डिस्कसन ऑन सोशल वर्क इन बांग्लादेश*.अबुलहुसैन: सोशल वर्क एचटीएम।
- रणवीरा.ए.(2005). *सिचुएशन ऑफ सोशल वर्क इन श्रीलंका*सिओल : कोरिया एसोसिएशन ऑफ सोशल वर्कर्स ।
- शास्त्री, राजाराम (1970). *समाज कार्य*. लखनऊ: हिंदी समिति सूचना विभाग।
- मिश्रा, प्रयागदीन (2008). *सामाजिक कार्य*. लखनऊ : हिंदी संस्थान ।
- तियांग,टी.एन.(2005). *दि डेवलपमेंट ऑफ सोशल वेलफेयर एण्ड सोशल वर्क इन रीहैबिलिटेशन फॉर पीपुल्स विथ डिसएिबलिटीज,पेपर प्रेजेंटेड एट दि थर्ड कंट्री ट्रेनिंग ऑन वोकेशनल रीहैबिलिटेशन फॉर पर्सन विथ डिसएिबलिटीज,एट नेशनल वोकेशनल रीहैबिलिटेशन सेंटर*.सिबिनाँग : बोगोर इंडोनेशिया।
- योकवाँह (2005).*मलेशिया देन नाउ एंड फयूचर प्रेजेंट एण्डफयुचर ऑफ सोशल वर्क इन एशिया पैसिफिक कंट्रीज*. सियोल: कोरिया एसोसिएशन ऑफ सोशल वर्कर्स ।
- लीयंग, जे.सी.बी. (1995). जायान इन इंटरनेशनल हैंडबुक ऑफ सोशल वर्क एज्केशन. (सं. ईलियट एण्ड नाजनीन एस माया दास एस). लंदन : ग्रीन वुड प्रेस।
- लीयंग, जे.सी.बी. (1995). जायान इन इंटरनेशनल हैंडबुक ऑफ सोशल वर्क एज्केशन. (सं. ईलियट एण्ड नाजनीन एस माया दास एस). लंदन : ग्रीन वुड प्रेस।
- अर्सकाइया.ई.रोमानीयओ पी. एन. एट्रअट (2004).*प्राफेशनल सोशल वर्क इन एशिया*. लोवत्सोवा: सोशल वर्कएण्ड सोसाइटी वॉल्यूम. इशू।
- कैमिलेरी पी.(2005). *सोशल वर्क एजूकेशन इन ऑस्ट्रेलिया*. ऑस्ट्रेलिया: एट दी क्रोस रोड पोर्टलैरी वॉल-5।
- नेपियर तथा जार्ज(2001). *चेजिंग सोशल वर्क एजूकेशन इन आस्ट्रेलिया* .ऑस्ट्रलिया: सोशल वर्क एजूकेशन। वाल 20 नं.1।

- नश तथा मॅनफोर्ड (2001). *अनरिजोल्वड स्ट्रगल्स एजुकेशन सोशल वर्कर्स इन ओटिरो* .न्यूजीलैंड : सोशल वर्क एजुकेशन वॉल-20 नं.1।
- Gars, m.s(1980).Historical background of social work in India
- Prishevar; Prasad (1977).Bandage and freedom ,New Delhi: Rajesh publication.

ज्ञान शांति मैत्री

इकाई 4अफ्रीका व मध्य-पूर्व में समाज कार्य का इतिहास

इकाई की रुपरेखा

4.0 उद्देश्य

4.1 प्रस्तावना

4.2 अफ्रीका में समाज कार्य का उद्भव और विकास

4.3 अफ्रीका के मध्य–पूर्व देशों में समाज कार्य अभ्यास का विकास

4.4 सारांश

4.5 बोध प्रश्न

4.6 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

4.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आप -

- अफ्रीकी देशों में समाज कार्य विषय के विकास का वर्णन कर सकेंगे।
- अफ्रीका के मध्य-पूर्व देशों में समाज कार्य के उद्भव और विकास से अवगत हो सकेंगे।
- अफ्रीका और मध्य–पूर्व देशों में समाज कार्य के संभावितभविष्य की दिशा की पहचान कर सकेंगे।

4.1 प्रस्तावना

अफ्रीकी समाज सदा से ही समाज कार्य के दानव कहे जाने वाले तथ्यों, बीमारी (Disease), अज्ञानता (Ignorance),मलीनता (Squalor), निष्क्रियता (Idleness) से पीड़ित रहा है । इसके साथ-साथ अफ्रीका को भ्रष्टाचार एवं अंर्तजातीय द्वंद्व ने भी घेरा हुआ है । दक्षिण अफ्रीका के लगभग70% गरीब ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करते हैं। ऐसा माना जाता है कि यहाँ पर भ्रष्टाचार एवं अंर्तजातीय द्वंद्व लोगों की निरंकुशता के कारण ही व्याप्त है। (काया 2003; मवासना, 1999)। मध्य पूर्व के मुस्लिम बाहुल्य देशों में महिलाओं के विरूद्ध भेदभाव एवं मानवकृत आपदाएं हमेशा ही बनी रहती हैं। इस तरह अफ्रीका में समाज कार्य शिक्षण की संकटग्रस्त समाज में विद्यार्थियों को ज्ञान देने व अभ्यास की वास्ताविकताओं के लिए तैयार करने की एक कठिन भूमिका है। विभिन्न देशों में समाज कार्य अभ्यास व उसके शिक्षण से संबंधी ज्ञान व सूचनाओं हेतु विशेषकर संबंधित देश के दान व मानवतावादी कार्यों के इतिहास एवं समाज कल्याण प्रणाली के उद्भव विकास सहिष्णु सामाजिक सांस्कृतिक परिस्थिति के साथ विद्यमान सामाजिक समस्याओं तथा उन समस्याओं के अनुवर्तन के समाज कार्य के नवअधिगमों द्वारा एक देश

की सामाजिक स्थितियों में सुधार के लिए संक्रिया के कार्यक्रम निर्माण को समझना अत्यधिक महत्वपूर्ण है। अफ्रीकी देशों में वहाँ के लोगों के आवश्यकता को ध्यान में रखकर समाज कार्य का विकास किया गया।

अफ्रीका के देशों में मुस्लिम बहुल मध्यपूर्व के देश गरीबी, महिलाओं के विरूद्ध भेदभाव, मानवकृत आपदा, विनाश तथा इसी प्रकार के अन्य सभी सामाजिक समस्याओं को ध्यान में रखते हुए समाज कार्य व्यवसाय में प्रशिक्षण की बहुत आवश्यकता महसूस होने के कारण लोग इस तरह के क्षेत्रों में समाज कार्य का विकास किया।

4.2 अफ्रीका में समाज कार्य का उद्भव और विकास -

अफ्रीका के ज़्यादातर समाज कार्य अमेरिका के समाज कार्य पर आधारित थे और उसी ज्ञान के आधार पर संचालित किए जाते थे। किंतु इस आधार पर अफ्रीका के समाज कार्य को बहुत सारी नाकामी मिली। अफ्रीकी देशों में वर्तमान में समाज कार्य अभ्यास को सामाजिक विकास की अपेक्षा व्यक्ति के विकास के आधार पर संचालित किया जा रहा है और व्यक्ति के सामाजिक स्तर को छोड़ कर उसके व्यक्तिगत स्तर पर ध्यान केंद्रित किया जा रहा है।

वर्तमान समय में समाज कार्य को करने का तरीका बदलता जा रहा है। अब विभिन्न पाठ्यक्रमों को समाज कार्य के अंतर्गत संचालित किया जा रहा है । पाठ्यक्रमों में विभिन्न प्रणालियों को शामिल कर पाठ्यक्रम को सुविधाजनक बनाने का प्रयास किया जा रहा है, जिससे व्यक्ति की समस्या का समाधान उचित प्रकार से खोजा जा सके । अफ्रीका के लगभग 13 देशों में भी इसी प्रकार से शिक्षण का कार्य किया जा रहा है जो समाज कार्य की विभिन्न डिग्री एवं डिप्लोमा पाठ्यक्रम के आधार पर संचालित है । अफ्रीका के कुछ प्रमुख देशों में समाज कार्य का उद्भव और विकास किस प्रकार हुआ और वर्तमान समय की क्या स्थिति है? सरकार की क्या भूमिका रही है ? उक्त इकाई के माध्यम से यह तथ्य सामने आएंगे, जिनका विस्तृत वर्णन निम्न प्रकार से प्रस्तुत किया जा रहा है

दक्षिण अफ्रीका

दक्षिण अफ्रीका में लगभग प्रतिशत अश्वेत और 13% प्रतिशत श्वेत और 9% प्रतिशत बर्फ शंकर वर्ण (मिश्रित नस्ल) है। अश्वेत लोगों की अधिकता होने के कारण भी और लंबे समय तक अश्वेतों पर श्वेतों का राज रहा है, जिसके कारण वहाँ के अश्वेत अफ्रीकी शोषित होते आ रहे थे। अफ्रीका में 1980 के दशक से लेकर 1990 के दशक तक जातीय प्रथा को मिटाने का प्रयास अफ्रीकी सरकार ने किया था । उसके बाद भी अफ्रीका में अश्वेत-श्वेत का भेदभाव आज भी विद्यमान है, जिसको वहाँ के लोग जीवन का एक सत्य मानने लगे और इस मानसिक दासता से उनको मुक्ति नहीं मिल पा रही थी। इसलिए 2001 में अफ्रीका में आयु दर की जनगणना की गई थी जिसके अनुसार आज भी श्वेतों की आयु 73 वर्ष और अश्वेतों की आयु 57 वर्ष थी। इसके साथ-साथ श्वेतों में शिशु मृत्युदर प्रति 1000 शिशु जन्म में 13 जो

कि तुलनात्मक रूप से अश्वेतों में 57 प्रति हजार है। साक्षरता के स्तर का यदि आँकलन किया जाए तो श्वेतों में साक्षरता का स्तर 100 प्रतिशत, जबकि अश्वेतों में साक्षरता का स्तर 50 प्रतिशत है । (माइक्रोसॉफ्ट एंकार्टा इनसाइक्लोपीडिया,2001)।

दक्षिण अफ्रीका में समाज कार्य के विकास का अवलोकन किया जाए, तो इसका विकास 17वीं शताब्दीं के मध्य ही नज़र मे आता है, जिसका उद्देश्य सभी के हितों को ध्यान में रखकर उनका सामाजिक कल्याण करना था। इस तरह दक्षिण अफ्रीका में अनेक प्रकार के समाज कल्याण के लिए विभागों की स्थापना की जाने लगी। जैसे कि 1657 में डच सुधार कंपनी (डी.आर.सी) की स्थापना की गई, जिसके द्वारा उन कृषकों को सहायता प्रदान की जाती थी, जो कि अपने फसलों के नष्ट होने जाने के कारण परेशान थे। और इस तरह डी.आर.सी. तथा डी.ई.आई.सी.(डच ईस्ट इंडिया कंपनी) ने विभिन्न विचारों के कारण निर्धन अफ्रीकियों की सेवा करना प्रारंभ कर दिया था। ठीक उसी प्रकार से श्वेतों के लिए भी उस संस्था के द्वारा सहायता प्रदान की जाने लगी पर उससे भी निर्धन अफ्रीकियों की सामाजिक एवं आर्थिक कठिनाई बरकरार रही और इस तरह जब वहाँ के अश्वेत लोग बाहर काम करने जाने लगे तो उनको परिवार लाने पर प्रतिबंध लगा दिया गया, जिसके कारण भी वह लोग गरीब होते गए। इन सब परेशानी को ध्यान में रखते हुए वहाँ के अश्वेत लोगों, विशेषकर शहरी इलाकों की महिलाओं ने मिलकर एक संघठन का निर्माण किया, जो उन्होंने अपने स्वंय बलबूते पर बनाया था और उन्होंने इसका गठन इसलिए किया कि वह निर्धनता को खत्म कर सकें। उन्होंने पुन:एक 'स्टॉक फेल' का गठन किया, जो सर्वाधिक ज्ञान और स्वसहायता का संगठन था, इसमें लगभग सात महिलाएँ थी, जिसमें से प्रत्येक ने कुछ-ना-कुछ दान किया था। और इस तरह जब उनको अपने संकट के समय ज़रूरत महसूस होती थी तो वे अपने निधियों का उपयोग करती थी। इस प्रकार वहाँ अनेक समिति और संगठन का निर्माण होने लगा।(क्राउन तथा नेको, 2005)

1930 में एक औपचारिक समाज कल्याण प्रणाली भी इसमें समाहित हुई इसके साथ ही श्वेत निर्धन समस्या की जाँच हेतु कार्नेगी कमिशन ने1938 में राष्ट्रीय सरकारी समाज कल्याण विभाग की स्थापना का नेतृत्व किया। इस तरह जब हम आधुनिकता की बात करे तो अब नई समाज कल्याण नीति अधिकांश आधुनिक सामाजिक समस्याओं को संबोधित करती है और बगैर किसी जातीय/नस्लीय पृष्ठभूमि के भेदभाव के सभी के हितों पर ध्यान देती है ।(क्राउन तथा नेको, 2005)

अफ्रीका में समाज कार्य को और बेहतर बनाने का श्रेय समाज कल्याणार्थ श्वेत पत्र को जाता है, जिन्होंने 1997 में समाज कार्य अभ्यास को दिशा दी। इसके पश्चात अफ्रीका में समाज कार्य का एक अभ्यास और प्रशिक्षण के रूप में प्रयोग किया जाने लगा। इस संगठन का लक्ष्यथा कि अफ्रीका में समाज कल्याण को एक व्यावसायिक समाज कार्य के नाम से जाना जा सके, ताकि समाज कार्य व्यवसाय की चुनौतियों को एक संघर्ष के रूप में अफ्रीका के लोग स्वीकार करें। इस तरह दक्षिण अफ्रीका में समाज कार्य कई रूप में सामने आने लगा जैसे कि गरीबी, बेरोज़गारी, वृद्ध, मानवाधिकार, बाल अधिकार, अप्रवासन,

ज्ञान शांति मैत्री

शरणार्थी, एच.आई.वी./एड्स, निरक्षरता तथा हिंसात्मक अपराध, खासतौर से यौन शोषण, हत्या, बाल दुराचार, यौन प्रताड़ना आदि। इस स्थिति में दक्षिण अफ्रिका में समाज कार्य परिषद की स्थापना की गई। पूरे अफ्रीका में समाज कार्य के इतिहास के बाद भी दक्षिण अफ्रिका में सामाजिक कार्यकर्ता का एक ऐसा व्यावसायिक संगठन बना, जो सामाजिक कार्यकर्ता का एक समूह बनाने में लगा रहता है। इस प्रकार ये सारे कार्यकर्ता सामाजिक कार्य में भाग लेते हैं और दक्षिण अफ्रीका में समाज कार्य को बढ़ावा देने के लिए प्रयत्नशील है।

जिम्बाम्वे

जब जिम्बाम्वे सरकार ने अपने आप को गुलामी से आज़ाद कराया उसी वक्त समानता के साथ विकास के समाजवादी राज्य नियोजन पर भी बल दिया। इसने शिक्षा, स्वास्थ सुविधाएँ संरक्षण, यातायात, ऊर्जा, बुनियादी खाद्यों, आवास, उपचार सुविधाएँ आदि लिए राज्य अनुदान की योजना तैयार की (इमदाद दी मोल्डोवान तथा मोयो 2007)। 1993 में सामाजिक सुरक्षा प्रणाली को भी लागू किया गया, जिसमें वृद्धावस्था, अक्षमता तथा उत्तरजीविता पेंशन, मातृत्व लाभ तथा 90 दिनों तक नियमित आय का 70 प्रतिशत तथा इसी प्रकार के अन्य प्रावधान किए गए। 1990 के दशक में जिम्बाम्वे में आर्थिक समस्याओं का अनुभव भी किया गया (मोयो2007 पेजख, 80)।

जिम्बाम्वे के राजनैतिक दलों संयुक्त रूप में एक विशेष प्रकार से मार्क्सवादी लगाव का त्याग कर दिया गया और जिम्बाम्वे में नई आर्थिक नीति का अनुगमन करने का निर्णय लिया गया जिससे समाज कार्य के क्षेत्र में एक लाभकारी प्रयास सामने आया। इस तरह से राष्ट्रवादी सरकार द्वारा बनाई गई पुरानी कल्याणकारी संरचना को नई आर्थिक नीति द्वारा आकार और प्रभाव में घटा दी गई। इस तरह से तात्कालिक समस्याओं जैसे गरीबी, बेरोज़गारी, राजनीतिक तथा आर्थिक असुरक्षा एवं स्वास्थ्य संरक्षण का अभाव जैसी समस्याओं को समाज कार्य प्रणाली के माध्यम से समस्या समाधान के लिए तैयार किया गया, जिससे समाज कार्य का प्रभावी रूप सामने आया। इन्हीं प्रयासों के आधार पर 1936 में जिम्बाम्वे समाज कार्य व्यवसाय को प्रारंभ किया गया, जिसका उद्देश्य सामाजिक समस्याओं से निपटने के लिए कार्यकताओं को शिक्षण एवं प्रशिक्षण प्रदान कराना था।1936 में ही जिम्बाम्वे सरकार द्वारा समाज कार्य अधिकारी की आवश्यकता को महसूस किया गया और उन्होंने ब्रिटेन से एक समाज अधिकारी की नियुक्ति कर ली जो कि बाल संरक्षण तथा दत्तक ग्रहण अधिनियम के अंतर्गत कार्य करता था। और इस प्रकार जिम्बाम्वे में समाज कार्य व्यवसाय को प्रारंभ किया गया। इसी क्रम में 1964 में जेसस फादर्स ऑफ रोमन कैथौलिक चर्च ने सामाजिक सेवा विद्यालय की स्थापना की। 1969 में स्कूल ऑफ सर्विसेज का नाम परिवर्तित कर स्कूल ऑफ सोशल वर्क कर दिया गया। 1975 में समाज कार्य में चार वर्षीय स्नातक उपाधि पाठयक्रम को प्रारंभ किया गया, जिसमें बी.एस.डब्ल्यू. में आवासीय समाज कार्य, औद्योगिक समाज कार्य इत्यादि विशेषीकरण के विषयों को शामिल किया गया। आगे चलकर स्कूल ऑफ सोशल वर्क द्वारा अनेक नए-नए पाठयक्रमों, जैसे- 1980 में युवा प्रमाण पत्र, 1982 में नैदानिक समाज कार्य,

1983 में समाज कार्य में एम.ए. तथा 1985 में सामाजिक पुनर्वासन में एम.ए. पाठयक्रमों को प्रारंभ किया गया। अत: इस प्रकार जिम्बाम्वे में समाज कार्य के क्षेत्र में बढ़ोतरी की और वहाँ की प्रमुख समस्याओं के निराकरण हेतु प्रयास किया।

ईजिप्त

ईजिप्त गणराज्य, जो कि 1958 से लेकर 1971 तक संयुक्तअरब गणराज्य का था, उत्तर-पूर्वी अफ्रीका में स्थित है। ईजिप्ट में स्वास्थ्य संगत प्रणाली के कुसंगत होने के कारण और विभाजन में असमान वितरण होने के कारण स्वास्थ्य के क्षेत्र में अनेक समस्याएं उत्पन्न हुई। इन समस्याओं से निपटने हेतु ईजिप्टमें अनेक कल्याणकारी कार्यक्रमों चलाए गए, जिसका संचालन बीमा एवं सामाजिक मामलों के मंत्रालय एवं धार्मिक मामलोंके मंत्रालय द्वारा संचालित किए जाते हैं। स्थानीय ज़कात समितियों के द्वारा निधि को एकत्र कर नासिकर सामाजिक बैंक (एन.एस.बी.) को भेजा जाता है, जिससे अनेक प्रकार के कल्याणकारी कार्यों में मदद मिल सके। इस प्रकार से समाज कार्य विषय ने अपनी उपयोगिता को सार्थक साबित किया एवं सरकार द्वारा समाज कार्य विषय का विकास किया जाने लगा। 1935 में पहली बार ईजिप्ट में सामाजिक आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए समाज कार्य में व्यवसाय आधारित पाठ्यक्रमों को प्रारंभ किया गया, जो कि अमेरिका एवं इग्लैंड के समाज कार्य की भाँति ही संचालित होता था। लगभग 13 विश्वविद्यालयों में समाज कार्य आधारित पाठ्यक्रमों को ईजिप्त में संचालित किया गया, जिसमें प्रमुख रूप से अजहर विश्वविद्यालय का नाम सर्वप्रमुख है। 1935 में हेल्वाना विश्वविद्यालय द्वारा समाज कार्य को प्रारंभ किया गया। 1936 में शोध एवं सेवाओं के क्षेत्र मे विकास होना प्रारंभ हो गया। 1946 में शिक्षा मंत्रालय द्वारा महिला छात्राओं हेतु एक उच्चतर संस्थान की स्थापना की गई। तत्पश्चात यह कार्यक्रम 1975 में महिला एवं पुरूष दोनों के लिए समाज कार्य संकाय के रूप में स्थापित हुआ। वर्तमान समय में हेल्वाना विश्वविद्यालय द्वारा समाज कार्य की प्रमुख प्रणालियों सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य, सामाजिक समूह कार्य एवं सामुदायिक संगठन को लेकर शिक्षण कार्य कराया जा रहा है। साथ ही सामाजिक नियोजन विभाग तथा समाज कार्य विभाग में एम.ए. से लेकर पीएचडी तक की पढ़ाई कराई जा रही है। ऐलेग्जैंड्रिया विश्वविद्यालय का सामाजिक अध्ययन संस्थान समाज कार्य में एम.ए. से लेकर पीएच.डी तक की उपाधि प्रदान करता है (रगब,1995)। 1970 में इस्लामी अध्ययनों हेतु अल-अजहर विश्वविद्यालय का निर्माण किया गया है। अत: इस प्रकार से ईजिप्ट में समाज कार्य को विभिन्न रूपों में देखा जा सकता है, जिसने वर्तमान समय में समाज कार्य के क्षेत्रों में अत्यधिक बढ़ोत्तरी की है।

दक्षिण अफ्रीका के जिम्बाम्वे एवं ईजिप्टके अतिरिक्त बोत्सना, लीबिया इत्यादि देशों में भी समाज कार्य के क्षेत्र में शिक्षण-प्रशिक्षण संबंधी कार्यों को किए जा रहे हैं।

4.3 अफ्रीका के मध्य–पूर्व देशों में समाज कार्य अभ्यास का विकास

अफ्रीका के मध्य-पूर्व के सारे देश एशिया के भाग हैं। एशिया, अफ्रीका और यूरोप की सीमाएँ जहाँ मिलती है, वहीं मध्य-पूर्व स्थित है। इन क्षेत्रों में समाज कार्य का विकास स्वाधीनता के लिए संघर्ष और उपनिवेशवाद की समाप्ति से संबंधित था। इसे दो भागों मे विभक्त कर सकते हैं, पहला उत्तरी पाठ्यवस्तु (इसके अंतर्गत सिद्धांतों तथा प्रणालियों का समाज कार्य शिक्षण में समावेश किया जाता था) और दूसरा उत्तर से आए शिक्षक और अभ्यासकर्ता (इसके अंतर्गत उत्तर में पढ़े हुए और लौट कर शिक्षकों तथा अभ्यासकर्ताओं के रूप में काम करने वाले वृत्तिक लोगों के प्रभाव से है)। इन्हीं दो मूलों के माध्यम से भी उत्तरी समाज कार्य प्रारूपों का प्रभाव मध्य-पूर्व के देशों में पाया गया। मध्य पूर्व के देशों में पिछले कुछ दशकों में 'समाज कार्य का स्वदेशीकरण' और 'समाज का इस्लामी प्रबोधन (पुनरानुकूलन)' के विषय में इन सब देशों में परिचर्चाएँ प्रारंभ हुई है और इन परिचर्चाओं और विमर्शों को वास्तविकता प्रदान करने के लिए यहाँ लगातार प्रयास किए जा रहे है। इन देशों में मुस्लिम समुदायों, इस्लामी धर्म के द्वारा समाज कार्य को सीमित करने और समाज कार्य के परीक्षित ज्ञान से संबंधित विश्वदृष्टिकोण को समेकित करने की चेतावनी है। अतः हम मध्य-पूर्व के देशों में समाज कार्य विषय के विकास पर आगे चर्चा करेंगे।

टर्की

टर्की गणराज्य 29 अक्टूबर 1923 को प्रथम विश्व युद्ध के परिणामस्वरूप सारे साम्राज्य के ध्वस्त होने के बाद ओट्टोमान साम्राज्य के एक भाग के रूप में अस्तित्व में आया। 1928 मे टर्की एक धर्मनिरपेक्ष राज्य बना। यहाँ महिलाओं को मताधिकार 1934 में प्राप्त हुआ और 1946 में एक बहुदलीय प्रणाली स्थापित हुई। यहाँ की संपूर्ण जनसंख्या का 99 प्रतिशत सुन्नी मुसलमान है, जबकि संपूर्ण जनसंख्या का मात्र 0.1 प्रतिशत ईसाई है। यहाँ पर प्रौढ़ जनसंख्या का 96.7 प्रतिशत 2001 तक साक्षर था।

ज्ञान शांति मैत्री

टर्की मे समाज सेवाओं का एक लंबा इतिहास रहा है। इस कार्य मे ओट्टोमानों की धार्मिक स्थापनाओं तथा कतिपय वृत्तिक संगठनों ने हमेशा सक्रिय भूमिका निभाई है। इस देश में 1923 में स्वाधीनता के कारण सामाजिक सेवाओं के मसले को सार्वजनिक संस्थाओं ने अपने कार्यभार में सम्मिलित कर लिया है। यहाँ पर बाल सुरक्षा अभिकरण और समाज सेवाओं का महानिदेशालय प्रांतों में अपने 80 सामयिक निदेशालयों के साथ विशालतम सामाजिक सहायता संगठन है। इस संगठन का कार्य किशोरों, बच्चों, वृद्धों और अक्षम व्यक्तियों साथ ही विभिन्न श्रेणियों के गृहों वाले परिवारों, देखभाल केंद्रों, गोद लेने वाले केंद्रों तथा इसी प्रकार के अन्य को सहायता प्रदान करते हैं।

संयुक्त राष्ट्र ने द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात विकासशील देशों में सामाजिक सेवाओं को बढ़ाने के लिए प्रभावित किया, जिसके कारण संयुक्त राष्ट्र के कुछ सामाजिक कार्यसलाहकार टर्की आए और 1957 में सामाजिक सेवाओं से संबंधित मंत्रालयों, सार्वजनिक और निजी स्वैच्छिक संगठनों के प्रतिनिधियों के साथ बैठक की। इस बैठक के पश्चात यह महसूस किया गया कि समाज कल्याण क्रियाकलापों को

अधिकाधिक जारी रखने के लिए सामाजिक कार्यकर्ताओं को शिक्षित करने की आवश्यकता है, जिसके पश्चात टर्की में स्नातक स्तर पर चार वर्षीय प्रशिक्षण के लिए 1961 में 'सामाजिक सेवा अकादमी' की स्थापना की गई। इसमें सलाहकार के रूप में 'डच प्राविधिक सहायक आयोग' तथा 'फुलब्राइट आयोग' के सदस्य थे।

1983 में 'समाज सेवा अकादमी' ने 'हैसेट्टेप विश्वविद्यालय' और इसने 'समाज कार्य विद्यालय' नाम प्राप्त किया। इसके पश्चात टर्की में पहली बार विद्यार्थी समाज कार्य में स्नातकोत्तर और पीएचडी का अध्ययन करने के योग्य हुए। इसके पश्चात कई विश्वविद्यालयों में समाज कार्य का अध्ययन प्रारंभ किया गया। जैसे 2002 में अंकारा स्थित बोसकेत विश्वविद्यालय, जिसने पंचवर्षीय पाठ्यक्रम जारी रखा।

सऊदी अरब

सऊदी अरब को मध्य-पूर्व का राजतंत्र और इस्लाम की जन्म भूमि के रूप मे जाना जाता है। यहाँ का शासकीय तंत्र पवित्र शरी-अहके इस्लामी कानून पर आधारित है। सऊदी अरेबिया की सभी आबादी मुसलमान है, इनकी राष्ट्रभाषा अरबी है। यह देश विश्व के पेट्रोलियम संग्रहक में सर्वाधिक(26 प्रतिशत) है। इस कारण यह पेट्रोलियम के सर्वाधिक निर्यातक की श्रेणी में आता है। पेट्रोलियम निर्यातक देशों के संगठन (ओ.पी.ई.सी)/(ओपेक) में खास मत रखता है, जिसका कि अंतरराष्ट्रीय तेल मूल्य निर्धारण में खास प्रभाव है।

सऊदी अरब मे सांस्कृतिक पर्यावरण काफ़ी रूढ़िवादी है। महिला और पुरुष को सार्वजनिक कार्यक्रमों में साथ-साथ भाग लेने की अनुमति नहीं है। बाहर से काम करने आए मज़दूर खास कर महिलाओं की स्थिति यहाँ दयनीय है। यहाँ की मुसलमान महिलाओं को रूढ़ि और अशिक्षा के साथ रखा जातहै। साथ ही इन्हें उपेक्षा और घृणा के रूप समझा जाता है। यहाँ बुनियादी मानवाधिकारों को भी नज़रअंदाज़ किया जाता है।

सऊदी अरब में 'जकात' कल्याण के संदर्भ में एक महत्वपूर्ण अवधारणा है, जिसका तात्पर्य ख़ैरात या एक स्वैच्छिक संपदा-कर, जो कोई भी मुसलमान अपनी सामाजिक ज़िम्मेदारी की स्वीकृति में अदा करता हैं, यह एक देश में एक अनिवार्य कर है। यह निर्धारित राशि का2.5 प्रतिशत के वार्षिक दर पर दिया जाता है, जिसका व्यय सामाजिक कल्याण सेवाओं के लिए किया जाता है। यहाँ विकास कल्याण योजनाओं के तहत सामाजिक कल्याण का कार्यकिया जाता है।

सऊदी अरब में गावों में ख़ासतौर पर ध्यान दिया जाता है। नगरों तथा कस्बों वाले कम विकसित जिलों के समुदायों के निर्धनतम भागों के लोगों पर विशेष ध्यान देकर उनका जीवन-स्तर सुधारने का प्रयास किया जाता है।

सऊदी अरब में भी समाज कार्य की शिक्षण व्यवस्था रही है। राज्य में स्नातक आधारभूत शिक्षण स्तर है। समाज कार्य की उपाधि 'समाजकार्य विभाग' और 'समाजशास्त्र या समाज कार्य विभाग' के माध्यम से प्रदान की जाती है। उदाहरणस्वरूप समाज कार्य विभाग, इमाम विश्वविद्यालय रियाध, हर वर्ष चालीस

बी.एस.डब्ल्यू. की उपाधि प्रदान करता है। सामाजिक अध्ययन विभाग, राजा सऊद विश्वविद्यालय, रियाध, प्रतिवर्ष 170 स्नातक छात्रों को उपाधि प्रदान करता है।

इजराइल

इजराइल 1948 में ब्रिटिश हुकूमत से स्वतंत्र हुआ। द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान जर्मन नाजियों द्वारा यूरोप के लगभग 6 मिलियन (विश्व के एक तिहाई यहूदी जनसंख्या से अधिक) को मार डाला। नाजियों द्वारा किए गए जनसंहार से फिलीस्तीन में स्वशासन की माँग व्यापक रूप से भड़क उठी। ब्रिटेनवासियों के यहूदी लोगों के अनेकानेक आतंकवादी हमलों से मुखातिब, युद्ध के सात वर्षों के परिणामस्वरूप, 1947 को ब्रिटेन ने फिलीस्तीन के यहूदी तथा अरब राज्यों में कब्जा रखते हुए फिलीस्तीन को आज़ाद करने का निर्णय लिया । अरबों के विभाजन योजना का विरोध करने के कारण स्वाधीनता संग्राम प्रारंभ हो गया, जिससे अरब यहूदी राज्य स्थापना में असफल रहा । इजराइल में अब लगभग 81 प्रतिशत यहूदी और 19 प्रतिशत अरब है हिब्रू एवं अरबी यहाँ की राष्ट्रभाषा है। बीसवीं सदी के पूर्वार्द्ध के दौरान, इजराइल एक राज्य के रूप में विकसित होने के पहले औपचारिक सामाजिक कल्याण सेवाएं विकसित कर चुका था। अतः इन्होंने अस्थायी सरकार के मातहत 1931 मे समाज कल्याण विभाग की स्थापना के लिए एक अमेरिकी सामाजिक कार्यकर्ता, हेनरिट्टा जोल्ड, को बुलाने का निर्णय लिया। इन्होंने सामाजिक कार्य के लिए कल्याण विभाग पर प्रशिक्षित कार्मिकों को रखने के लिए दबाव डाला। अतः इसके लिए एक वर्षीय प्रशिक्षण पाठ्यक्रम 1934 में प्रारंभ किया। इजराइल में प्रशिक्षण के लिए प्रशिक्षक अमेरिका तथा जर्मनी से आए थे। स्वतंत्रता संग्राम के दौरान 1948 में अरब देशों और होलोकास्ट के शरणार्थियों ने इसकी सीमा द्वारों पर शरणार्थियों की बाढ़ सी ला दी।

इजराइल युवा देश होने के कारण सीमित संसाधनों के कारण संघर्षरत था। साथ ही सीमित प्रशिक्षित सामाजिक कार्यकर्ता होने के कारण व्यवस्था बनाए रखने में असमर्थ था। देश में एक ही समाज कार्य प्रशिक्षण केंद्र था। अतः अधिक सामाजिक कार्यकर्ता रखने पर बल देने हेतु समाज कार्य प्रशिक्षण के लिए फ्रांस और अमेरिका जाने पर बाध्य किया गया। दस वर्षों के पश्चात 1958 में, जेरूशलम में हिब्रू विश्वविद्यालय ने इसराइल में प्रथम विश्वविद्यालय आधारित समाज कार्य विद्यालय खोला। एलिन ब्लैंकी, जो अमेरिका से समाज कार्य में उच्च शिक्षा प्राप्त कर के वापस आए थे, बीआईएस प्रवेश क्षमता का बी.एस.डबल्यू. कार्यक्रम प्रारंभ किया । इसके पश्चात इन्होंने समाज कार्य आधारित एम.एस.डबल्यू. कार्यक्रम भी प्रारंभ भी किया। इन्होंने इसे धीरे-धीरे आगे बढ़ते हुए विश्वविद्यालय आधारित चार समाज कार्य विद्यालय प्रारंभ किए जैसे – समाज कार्य विद्यालय, तेल-अबीब विश्वविद्यालय; समाज कार्य विद्यालय , इलोन विश्वविद्यालय; समाज कार्य विद्यालय, हाइफा विश्वविद्यालय और समाज कार्य विभाग, बेन गुरियन विश्वविद्यालय।

4.4 सारांश

समाज कार्य ने संपूर्ण विश्वमें अपनी अमिट छाप को समाज के सामने प्रस्तुत किया है, जिसमें दुनिया भर के तमाम देश शामिल हो गए है। अफ्रीका एवं मध्यपूर्व के समस्त देशों में समाज कार्य का उद्गम बडे ही सरल रूप में सामने आया था, परंतु समय के साथ-साथ इनमें दिन-प्रतिदिन बदलाव देखने को मिल रहा है। अफ्रीका एवं मध्य-पूर्व के जिन तमाम देशों का हमने जिक्र किया है, उसमें इकाई को दो भागों मे बांटकर इसे समझाने का प्रयास किया है, जो कि अफ्रीका में समाज कार्य का उद्भव और विकास और अफ्रीका के मध्य–पूर्व देशों में समाज कार्य अभ्यास का विकास के रूप में है । अफ्रीका के ज़्यादातर समाज कार्य अमेरिका के समाज कार्य पर आधारित था और उसी ज्ञान के आधार पर संचालित किया जाता था। किंतु इस आधार पर अफ्रीका के समाज कार्य को बहुत सारी नाकामी मिली। अफ्रीकी देशों में वर्तमान में समाज कार्य अभ्यास को सामाजिक विकास की अपेक्षा व्यक्ति के विकास के आधार पर संचालित किया जा रहा है और व्यक्ति के सामाजिक स्तर को छोड़कर उसके व्यक्तिगत स्तर ध्यान केंद्रित किया जा रहा है। अफ्रीका के प्रमुख देशों, जैसे- दक्षिण अफ्रीका, जिम्बाब्वे एवं ईजिप्ट जैसे देशों में समाज कार्य विभिन्न प्रकार से किया जा रहा है । दक्षिण अफ्रीका में समाज कार्य का उद्धेश्य सभी के हितों को ध्यान में रखकर उनका सामाजिक कल्याण करना है। इस तरह दक्षिण अफ्रीका में अनेक प्रकार के समाज कल्याण के लिए विभागों की स्थापना की जाने लागी। जिम्बाम्वे - जिम्बाम्वे में गुलामी के पश्चात शिक्षा स्वास्थ संरक्षण, यातायात ऊर्जा बुनियादी खाद्यों आवास, जल-मल उपचार सुविधाओं तथा इसी प्रकार की अन्य के लिए राज्य अनुदान की योजना तैयार की गई, जिसका उद्धेश्य सामाजिक समस्याओं से निपटने के लिए कार्यकताओं को शिक्षण एवं प्रशिक्षण प्रदान कराना था। ईजिप्ट में ने सामाजिक समस्याओं से निपटने हेतू अनेक कल्याणकारी कार्यक्रमों को चलाया गया, जिसका संचालन बीमा एवं सामाजिक मामलों के मंत्रालय एवं धार्मिक मामलों के मंत्रालय द्वारा संचाजित किए जाते हैं जिसमें स्थानीय दान समितियों का भी अत्यधिक योगदान था। अफ्रीका के मध्य–पूर्व देशों में समाज कार्य अभ्यास का स्वाधीनता के लिए संघर्ष और उपनिवेशवाद की समाप्ति से संबंधित था। इनमें प्रमुख रूप से टर्की, सऊदी अरेबिया एवं इजराइल जैसे देशों को शामिल किया जाता है। टर्की में समाज कार्य के क्षेत्र में ओट्टोमानों की धार्मिक स्थापनाओं तथा कतिपय वृत्तिक संगठनों ने हमेशा सक्रिय भूमिका निभाई है। सऊदी अरेबिया में गावों की ओर ख़ासतौर पर ध्यान दिया गया । नगरों तथा कस्बों वाले कम विकसित जिलों के समुदायों के निर्धनतम भागों के लोगों पर विशेष ध्यान देकर उनका जीवन-स्तर सुधारने का प्रयास समाज कार्य के विभिन्न माध्यामों से किया गया ।इजराइल में भी समाज कार्य काफ़ी दूसरे रूप में किया जाता रहा है। इसराइल युवा देश होने के कारण सीमित संसाधनों के कारण संघर्षरत था इसलिए यहां समाज कार्य सामाजिक कार्यकर्ताओं को विभिन्नविधाओं में प्रशिक्षण के माध्यम से किया जाता रहा है।

अत: इस प्रकार से समाज कार्य वर्तमान समय में विभिन्न अनेक सरकारी प्रयासों, स्वैछिक प्रयासों एवं समाज कार्य विद्यालय और विश्वविद्यालय के माध्यमों से तमाम अफ्रीका व मध्य-पूर्व अफ्रीका के समस्त देशों में अग्रसर है।

4.5 बोध प्रश्न

1. अफ्रीका व मध्य-पूर्व अफ्रीका में समाज कार्य के ऐतिहासिक विकास पर चर्चा कीजिए।
2. अफ्रीका के कौन-कौन से प्रमुख देशों में समाज कार्य प्रभावी रूप से कार्य कर रहा है?
3. मध्य-पूर्व अफ्रीका में समाज कार्य की कौन-कौन सी चुनौतियां नज़र आती है ?
4. अफ्रीका के समाज कार्य संबंधी प्रमुख महाविद्यालय एवं विश्वविद्यालयों को रेखांकित कीजिए।
5. अफ्रीका के तमाम देशों में समाज कार्य व्यवसाय के क्षेत्र में किस प्रकार सुधार की अवश्यकता है?

4.6 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

1. सी.एस.ओ. (2001).*नेशनल पोपुलेसन एंड हाउसिंग सेंसेस गवरमेंट*गैबिरोन: प्रिंटर।
2. मवासाना एल.के.जे.(199). *कॉरप्शन एण्ड सोशल सर्विसेज इन अफ्रीका* .बोत्सना: बोत्सना प्रा.लिमिटेड।
3. काया एच.(2003). *द डेब्ट क्राइसिस एण्ड इट्स इफेक्ट ऑन अफ्रीकन वोमेन चिल्ड्रेन केसेज.* अफ्रीका: सदर्न।
4. क्राउन एम.एवं नेको(2005).*हिस्टोरिकल रिव्यू ऑफ द साउथ अफ्रीकन सोशल वेलफेयर सिस्टम एण्ड सोशल वर्क प्रैक्टिशनर्स व्यूज ऑन इट्स करेण्ट स्टेटस* अफ्रीका:इंटरनेशनल ऑफ सोशल वर्क 48-3,301-312.
5. दत्त,जी. जोलीफ़ एवं शर्मा, डी. एम. (1998).*ए प्रोफ़ाइल पोवर्टी इन इजिप्ट"* वासिंग्टन डी.सी.: इंटरनेशनल फूड पोलोसी रिसर्च इंस्टीट्यूट।
6. गाग्रेट्ट, ई.(1977). द *एडमिनिस्ट्रेसन ऑफ ट्राजिशन* : अफ्रीकन अर्बन सेटलमेंट इन हरोदेशिया मम्बोप्रेस, ग्बेलों।
7. हार्डिग, एस. (2007). *मैन-मेड डिजासटर एंड डेवलपमेंट – द केस ऑफ इराक.* इराक :इंटरनेशनल सोशल वर्क, 50(3), 295-306.
8. इकीन्सी, स.(2003).*गोइंग पोवर्टी एंड सोशल इनेक्वालिटीफॉर डिटेल्स विजिट*.टर्की।
9. लेयर्ड, एस.ई. (2004).*इंटर-एथनिक कोनफ्लिक्ट रोल फॉर सोशल वर्क इन सबसहरण* .अफ्रीका: सोशल वर्क एजुकेसन, 23(6), 693-709.
10. लोवे, एम. (2004). *न्यू एवेन्यूस तोबे ओपेंड फॉर सोशल प्रोटेक्शन इन दी अरब वर्ल्ड* : इजिप्ट: इंटर नेशनल जर्नल ऑफ सोशल वेलफ़ेयर।

ज्ञान शांति मैत्री

11.प्रो.नील एबेल एवं डां.अशोक सरकार(2009).*समाज कार्य का उद्गम और विकास*.नई दिल्ली: समाज कार्य विद्यापीठ,इग्नू।

12.मोल्डोवॉन बी एवं मोयो.(2007).कंट्राडिक्शन इन द *आइडियॉलाजी ऑफ द हेल्पिंग एक्जाम्पिल्स फ्रांम जिम्बांबे एण्ड माल्डोवा*. जिम्बांबे: इण्टर नेशनल सोशल वर्क47-3-359-369.

13.रगब आई.ए.(1995).*मिडिल ईस्ट इंडिया ईजिप्ट इन थॉमस डी.वाटस डोरियल इलियट एण्ड नॉजनीन एस मायादास एड इण्टर नेशनल हैण्डबुक ऑफ सोशल वर्क एजुकेशन* .लंदन: ग्रीनवुड प्रेस।

14.माइक्रोसॉफट एंकार्टा एंसाइक्लोपीडिया,2001।

ज्ञान शांति मैत्री

खंड - 3

समाज कार्य व्यवसाय एवं शिक्षा

ज्ञान शांति मैत्री

इकाई – 1
समाजकार्य एक व्यवसाय के रूप में

इकाई की रूपरेखा

1.0 उद्देश्य
1.1 प्रस्तावना
1.2 स्वैच्छिक बनाम व्यावसायिक अवधारणा
1.3 समाजकार्य का ध्येय और उद्देश्य
1.4 वैश्विक तथा राष्ट्रीय संदर्भ में प्रासंगिकता: व्यवसायवाद पर अंतरराष्ट्रीय बहसें।
1.5 सारांश
1.6 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

1.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप -

1) दान तथा स्वैच्छिक अवधारणा एवं व्यावसायिक अवधारणा में भेद कर सकेंगे ।
2) एक व्यवसाय के आधारभूत तत्वों की पहचान कर सकेंगे।
3) क्या समाजकार्य व्यवसाय है इस विमर्श की विवेचना कर सकेंगे।
4) समाजकार्य के ध्येय और उद्देश्यों को चिन्हित कर सकेंगे।
5) अंतरराष्ट्रीय सामाजिक कार्यकर्ता संघ द्वारा प्रमाणित परिभाषा की व्यापकता तथा जटिलता को समझ सकेंगे।

ज्ञान शांति मैत्री

1.1 प्रस्तावना

समाजकार्य प्राचीन समय से लेकर आज तक विभिन्न रूपों में होता आया है। सामाजिक कार्यकर्ताओं ने देशों के अंदर तथा स्वयं के बीच अपने आप को एक व्यावसायिक के रूप में स्थापित करने के लिए संघर्ष किया है। जब प्राचीन काल में व्यक्ति की सहायता दान तथा प्रत्यक्ष सेवा के माध्यम से की जाती थी, तब लोग परोपकार की भावना से प्रेरित थे। धीरे-धीरे इसका स्थान मानवतावाद ने ले लिया, किंतु वैश्विक विकास के साथ निर्धनों, रोगियों, निराश्रितों एवं अपंगो की सेवा का दायरा बढ़ता गया। वर्तमान में यह आवश्यक हो गया कि ये सेवाएं निपुण तथा प्रशिक्षण प्राप्तव्यक्ति ही कर सकेगा। इन सबको देखते हुए समाज-कार्य व्यवसाय को लेकर बहस छिड़ गई कि क्या समाज कार्य एक व्यवसाय है। समाज कार्य एक व्यवसाय के रूप में अपनी भूमिका को स्पष्ट करने के लिए संघर्षरत है। संभवत एक आंशिक स्पष्टीकरण भूमिका सिद्धांत में पाया जाता है, जो यह प्रस्तावित करता है कि हम सब अपने आपको किस दृष्टिकोण से देखते हैं तथा किस प्रकार अपने पहचान की अनुभूति करते हैं।‘हमें अन्य लोग कैसे देखते है’ की

हमारी अनुभूति से जोड़ती है। सामाजिक कार्यकर्ताओं के लिए जिनकी व्यावसायिक जिम्मेदारियाँ वैयक्तिक सेवा कार्यकर्ताओं तथा कार्यक्रम प्रशासकों तक विस्तृत हैं, उन्हें विभिन्न भूमिकाओं का निर्वहन करना पड़ता है। दूसरी ओर हमारे चारों तरफ ऐसे लोग हैं, जो अमान्यकारी समस्याएं खड़ी करते हैं। समाज में एक तरफ ऐसे लोग हैं, जो अपनी परंपरागत सामाजिक व्यवस्था को नहीं बदलना चाहते हैं, वे अपने सुख एवं सुविधाओं के लिए अपनी जीवन शैली में बदलाव नहीं लाना चाहते, जिससे कि पद दलितों, उपेक्षितों एवं वंचितों के लिए स्थितियां अनुकुल बनाई जा सके। समाज के ऐसे पद दलित वर्ग के लोग सामाजिक कार्यकर्ताओं एवं समाजकार्य को सहायक के रूप में देखते हैं। इन विभिन्न दृष्टिकोणों को एक स्पष्ट सार्वभौमिक तथा परस्पर स्वीकार्य परिभाषा में बोधगम्य रूप में समाहित करना एक चुनौतीपूर्ण कार्य है। फिर भी हम इस अध्ययन में समाजकार्य व्यवसाय के रूप में विभिन्न अवधारणाओं को स्पष्ट करने एवं समझने की कोशिश करेंगे।

1.2 स्वैच्छिक बनाम व्यावसायिक अवधारणा

दान और स्वैच्छिक सेवा की अवधारणा समस्त समाजों में समाज कार्य तथा समाज कल्याण के लिए ऐतिहासिक मूल या जड़ के रूप में विद्यमान रही हैं। किंतु यह समाजकार्य व्यवसाय से भिन्न है। विश्व के समस्त संगठित धर्मों ने दान की परंपरा को महान सदगुण के रूप में रेखांकित किया है। यह विभिन्न धर्मों के उदाहरण में समाहित है-

- ✓ हिंदु धर्म दान को पवित्र मानता है।
- ✓ यहूदी धर्म में किसी पड़ोसी से प्रेम करना एक महत्वपूर्ण कर्तव्य बताया गया है।
- ✓ पहले के विधान ज़रूरतमंद की देखभाल एवं सहायता पर बल देते हैं।
- ✓ ईसाई धर्म में ईसामसीह (जेसस क्राइस्ट), जिनकी अजनबियों ने देखभाल की थी और उन्होंने मातृत्व प्रेम को प्रोत्साहित किया था, का वर्णन मिलता है।
- ✓ इस्लाम धर्म में दान प्रार्थना के समान वर्णित है।
- ✓ बौद्ध धर्म तथा जैन धर्म, निर्धन तथा ज़रूरतमंदों के प्रति करूणा एवं दया के भाव का हिमायती है।
- ✓ संपूर्ण मानवता के लिए स्वैच्छिक सेवा के उदाहरणों से सिक्ख धर्म का इतिहास भरा पड़ा है।
- ✓ पारसी के रूप में जाना जानेवाला जरदुस्त धर्म में एक कहावत प्रचलित है "उश्ता अहमई यहमई केहमाइचित" इसका अर्थ यह है कि जब तक कोई दूसरों को सुख या प्रसन्नता प्रदान करता है, तब तक वह सुखी एवं प्रसन्न रहता है।

संभवत: यह व्यक्तियों या मानव का मूल स्वभाव है कि वह आगे आकर समस्या ग्रस्त या व्यथाग्रस्त व्यक्तियों को सहायता प्रदान करता है और ऐसा वह परोपकारिता को ध्यान में रखकर करता है। किंतु मानव की प्रवृत्ति स्वयं सहायता की होती है और यह स्वैच्छिक अवधारणा को विपरीत दिशा में

कुप्रभावित करती है। स्वैच्छिक कार्य अवधारणा से तात्पर्य है कि ऐसा कार्य जो लोगों द्वारा अपनीइच्छा से या उनकी अपनी सहमति से की जाती है, जिसमें करूणा या दूसरों के हित या भलाई की चिंता की भावना निहित होती है तथा इस कार्य के लिए उन्हें क्षतिपूर्ति के रूप में कोई वेतन नहीं मिलता।

स्वैच्छिक कार्य की अवधारणा को मुख्यत: निम्नलिखित बिंदुओं द्वारा वर्णित किया जा सकता हैं

1) सभी व्यावहारिक एवं संभव विधियों से लोगों की सहायता करना तथा उनके कल्याण को प्रोन्नत करने की प्रेरणा प्रदान करना, यह आवश्यक नहीं है कि इसमें वित्तीय सहायता ही दी जाए।
2) जो सहायता कार्यकर्ता द्वारा दी जाती है, उसके बदले में उसे किसी भी भौतिक लाभ की अपेक्षा नहीं रहती है।
3) कार्यकर्ता में जरूरत के समय दूसरों की सहायता की भावना तथा सामाजिक सरोकार की भावना प्रबल होती है।
4) स्वैच्छिक अवधारणा के तहत सेवा के सदगुण में विश्वास किया जाता है।
5) स्वैच्छिक कार्य की अवधारणा में एक के अधिकारों के ऊपर एक के कर्तव्य की श्रेष्ठता में विश्वास किया जाता है।

भारत में श्रमदान को भी समाजकार्य का नाम देने की प्रवृति विद्यमान रही है। 'श्रम' तथा 'दान' शब्द, जिसमें सामूहिक हित को बढ़ाने के लिए स्वैच्छिक मानवी श्रम भी समाहित है स्वैच्छिक मानवी श्रम से आधारित है। कल्याण को प्रोन्नत करने हेतु लक्ष्यित तथा सामान्य जनहित का परावर्तक श्रमदान समाजकार्य से सिर्फ उद्देश्यों से ही भिन्न या अलग नहीं है, बल्कि यह दर्शन, प्रणालियों, प्रविधियों आदि के संदर्भ में भी इससे भिन्न है। श्रमदान का लक्ष्यसमुदाय के कल्याण के लिए ठोस कार्यों को संपन्नकरना है तथा श्रमदान का दर्शन यह कहता है कि समाज के प्रत्येक व्यक्ति का यह कर्तव्य है कि वह दूसरों तथा समुदाय की भलाई के लिए अपने श्रम का अवदान करे। श्रम दान में विशेषीकृत ज्ञान, प्रविधिक निपुणताओं एवं कौशलों की अपेक्षा नहीं की जाती है तथा व्यक्तियों की आवश्यकताओं खास तौर से अमूर्त आवश्यकताओं, जैसे- प्रेम, स्नेह, अनुराग स्वायत्ता, आदर, मान्यता तथा स्व-वास्तविकीकरण का संकेंद्रण भी नहीं है। जन संबलता सहायता प्रावधान आदि के साधन भी भिन्न हैं क्योंकि श्रमदान का साधन मानव श्रम है।

अब्राहम फ्लेक्जनर (जन्म 1866 ई. यू.एस.ए.) जो अमेरिका में चिकित्साकीय शिक्षा के सुधारक के रूप में जाने जाते हैं। उन्होंने एक प्रभावी दस्तावेज़ लिखा, जिसका शीर्षक था- 'दि फ्लेक्जनर रिपोर्ट' यह बीसवीं सदी में अमेरिकी चिकित्सा शिक्षा पद्धति की सबसे बड़ी आलोचनात्मक रिपोर्ट थी। डॉ. फ्लेक्जनर को १९१५ ई. में नेशनल कान्फरेन्स ऑन सोशल वेलफेयर में बोलने के लिए आमंत्रित किया गया था एवं उनके भाषण को शीर्षक दिया गया था, 'क्या समाजकार्य एक व्यवसाय है?' इस भाषण में फ्लेक्जनर ने व्यवसाय की छह: विशेषताओं की सूची बनाई तथाकान्फरेन्स में उसको स्पष्ट तरीके से रखा।

1. व्यापक वैयक्तिक उत्तरदायित्वों के साथ बौद्धिक संचालनयुक्तता तथा*जटिल समस्याओं हेतु क्या करना* है का निर्णय।
2. विज्ञान और ज्ञान पर आधारित अभ्यास।
3. एक व्यावहारिक तथा निश्चित समापन हेतु ज्ञान का उपयोग।
4. शैक्षिक दृष्टि से गत्यात्मक एक प्रविधि।
5. स्वयं संगठन का रूझान।
6. सहायक वृत्तियाँ अभिप्रेरणा में परहितकारी हो।

फ्लेक्जनर को समझ लेने के बाद अब हम व्यवसाय के सामान्य अर्थ एवं विशेषताओं को समझने की कोशिश करेंगे।

व्यवसाय का अर्थ

व्यवसाय (Profession) शब्द लैटिन भाषा के शब्द profiteri से बना है, जिसका अर्थ है सार्वजनिक रूप से घोषणा करना या प्रतिज्ञा करना। तेरहवी शताब्दी में इस शब्द का प्रयोग धार्मिक परायणता के अर्थ में किया जाता था। चौदहवीं शताब्दी के मध्य तक इस शब्द का प्रयोग knights की वीरता के आदर्श की ओर परायणता के अर्थ में होता था। 16वीं तथा 17वीं शताब्दी में इस शब्द का प्रयोग जीविका के अर्थ में किया जाता था। 19वीं शताब्दी में दैवत्य, वकालत एवं औषधिशास्त्र सबसे महत्वपूर्ण परंपरात्मक व्यवसाय समझे जाते थे।

1839 में मॉरिस नें लिखा था कि व्यवसाय एक ऐसा व्यापार है जो मनुष्य-से-मनुष्य के समान व्यवहार करता है और इस प्रकार ऐसे व्यापार से भिन्न है, जो मनुष्य की बाहरी आवश्यकताओं एवं अवसरों का प्रबंध करता है।

वर्तमान समय में व्यवसाय शब्द से एक संगठित जीविका का अर्थ लगाया जाता है, जिसमें एक विशेष औपचारिक ज्ञान हो और इस औपचारिक ज्ञान का एक विकसित एवं संदेश वाहन योग्यनिपुणता द्वारा मानवीय जीवन के कुछ पहलुओं में एक कला के रूप में प्रयोग किया जाए। व्यवसाय के लिए समुदाय की मान्यता और उसके उपयोगी होने की धारणा आवश्यक है।

कार सान्डर्स एवं विल्सन ने अपनी पुस्तक ***दी प्रोफेशन्स*** में लिखा है कि व्यवसाय के लिए आवश्यक है कि उसमें एक बौद्धिक प्रविधि हो, जो एक विशेष प्रशिक्षण द्वारा प्राप्त की गई हो तथा जिसका प्रतिदिन जीवन के कुछ पहलुओं में प्रयोग किया जा सके। उनका कहना है कि व्यवसाय एक ऐसी वृत्ति है, जिसका आधार दीर्घकालीन और विशिष्ट बौद्धिक प्रशिक्षण पर है और जो एक विशेष सेवा प्रदान करने की योग्यता प्रदान करती है। उन्होंने मुख्यत: दो गुणों पर बल दिया है–

1. एक विशेष बौद्धिक प्रविधि
2. इस प्रविधि का व्यावहारिक प्रयोग

समाजकार्य को यदि ऐतिहासिक रूप से देखा जाए तो कहा जा सकता है कि यह एक ऐसी मानवता है जिसे सदैव अपने उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए एक प्रणाली की खोज रही है। इस खोज के कारण समाजकार्य ने अपने आप को अधिक से अधिक वैज्ञानिक रूप दिया यहाँ तक कि यह एक प्रावैधिक व्यवसाय बन चुका है। जब हम यह कहते हैं कि समाजकार्य एक व्यवसाय है, तो आवश्यक हो जाता है कि पहले व्यवसाय शब्द की विशेषता स्पष्ट की जाए। फिर यह देखा जाए कि समाजकार्य व्यवसाय के मानदंडों पर खरा उतरता है या नहीं।

समाज कार्य का व्यावसायिक स्वरूप

किसी भी व्यवसाय को हम जीविका की संज्ञा तभी दे सकते हैं जब वह ज्ञान विज्ञान पर आधारित हो तथा व्यवसाय के अन्य सभी गुण उसमें मौजूद हो। इस संदर्भ में समाज कार्य पर गंभीरता से दृष्टिपात करने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि समाजकार्य में वे सभी विशेषताएँ व गुण विद्यमान हैं, जिनके आधार पर उसे व्यवसाय के रूप में स्वीकार किया जाता है। समाजकार्य की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित है, जो उसे एक व्यवसाय सिद्ध करती है-

1. वैज्ञानिक ज्ञान व क्रमबद्ध सिद्धांत

समाजकार्य के अंतर्गत प्रदान की जानेवाली समस्त सेवाएं व सहायता प्रक्रिया वैज्ञानिक ज्ञान व विशेष कौशल पर आधारित होती है। समाजकार्य के एक निश्चित ज्ञान के आधार पर सेवा-कार्य तो किया जाता है, साथ ही समाजकार्य अभ्यास के दौरान प्राप्त अनुभवों की सहायता से इस ज्ञान व कौशल में निरंतर वृद्धि भी की जाती है। समाजकार्य के व्यावसायिक अभ्यास व अनुभवों के परिणाम स्वरूप जो ज्ञान हमारे सामने आता है, वह साहित्य सम्मेलनों विज्ञान गोष्ठियों, सेमिनार आदि द्वारा समस्त व्यावसायिक कार्यकर्ताओं तक पहुँचाकर, उस नवीन ज्ञान को व्यावहारिक रूप में प्रयोग के लिए निर्देशित किया जाता है।

2. विशिष्ट प्रणालियाँ, विधियाँ व प्रविधियाँ

समाजकार्य की अपनी विशिष्ट प्रणालियाँ, विधियाँ व प्रविधियाँ होती हैं, इन्हीं प्रणालियों व प्रविधियों का ज्ञान प्रशिक्षण द्वारा सामाजिक कार्यकर्ताओं को प्रदान किया जाता है। साथ ही इन प्रणालियों व प्रविधियों का व्यावहारिक क्षेत्र में प्रयोग करने की कला भी इनको सिखाई जाती है।

3. शैक्षिक व प्रशिक्षण पद्धति

समाजकार्य वृत्ति के शिक्षण व प्रशिक्षण के लिए अनेक उच्च स्तरीय संस्थाएँ हैं तथा इसके अनेक कार्यक्रम देश देशांतर में चलते हैं। भारत में समाजकार्य व्यावसायिक प्रशिक्षण संबंधी शिक्षा पश्चिमी देशों की तुलना में काफ़ी देर से शुरू हुई। भारत में 1936 में मुंबई में पहली बार व्यावसायिक शिक्षण टाटा स्कूल ऑफ सोशल साइंसेस में शुरू की गई। इसके बाद 1947 में वाराणसी में महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ में समाज कार्य शिक्षण प्रारंभ हुई। इसके बाद दिल्ली विश्वविद्यालय, लखनऊ विश्वविद्यालय, इंदौर स्कूल ऑफ सोशलवर्क, मद्रास स्कूल ऑफ सोशल वर्क, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, काशी हिंदू विश्वविद्यालय, पटना

ज्ञान शांति मैत्री

विश्वविद्यालय, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय आदि में भी व्यावसायिक प्रशिक्षण आरंभ हुआ है।

4. व्यावसायिक संगठन व समितियाँ

किसी व्यवसाय के सदस्यों को संगठित होने की आवश्यकता होती है। इसके लिए उनको व्यावसायिक संगठन का सदस्य बनना चाहिए। विभिन्न स्तरों पर समाज कार्य से संबंधित अनेक संगठनों की स्थापना की गई है, जिनमें इंडियन कॉउसिल ऑफ सोशल वेलफेयर, इंटरनेशनल फेडरेशन ऑफ सोशल वर्क मद्रास , इंडियन एसोसिएशन ऑफ साइक्रियाट्रिक सोशल वर्कर्स राँची, इंडियन एसोसिएशन ऑफ सोशल वर्कस इत्यादि जैसी विभिन्न संगठन व समितियाँ कार्य कर रही हैं।

5. सामाजिक मान्यता

किसी भी व्यवसाय का एक गुण यह माना जाता है कि उसे समाज की मान्यता या स्वीकृति प्राप्त होनी चाहिए। यह मान्यता इस आधार पर दी गई हो कि यह व्यवसाय समाज के लिए उपयोगी व हितकारी हो। अर्थात यदि व्यवसाय समाज या समुदाय के लिए हितकारी हो तो उसे व्यवसाय का स्तर दिया जाता है। भारत में समाजकार्य को पाश्चात्य देशों की तुलना में कम मान्यता प्राप्त है फिर भी विभिन्न क्षेत्रों में प्रशिक्षित व योग्य कार्यकर्ताओं की नियुक्तियाँ की जा रही है जैसे-चिकित्सा व मनोचिकित्सा कार्य दल में व औद्योगिक प्रतिष्ठानों में इत्यादि।

6. आचार संहिता

प्रत्येक व्यावसायिक संगठन अपने व्यवसाय के अभ्यासकर्ताओं के लिए कुछ महत्वपूर्ण नियम व प्रतिबंधों का सृजन करते हैं, जिनका पालन करना लगभग प्रत्येक समाज कार्यकर्ता के लिए अनिवार्य होता है। ये नियम व प्रतिबंध मात्र कार्यकर्ताओं को मनमाना व्यवहार करने से ही नहीं रोकते, बल्कि सामाजिक कार्यकर्ताओं के व्यवहार व क्रियाकलाप में एकरूपता लाते हैं। अमेरिका व पाश्चात्य देशों में मान्यता प्राप्त प्रशिक्षित कार्यकर्ताओं के लिए आचार संहिता निर्मित की गई है। भारत में अमेरिका से ग्रहण की गई आचार संहिता को अपनाया गया है।

7. आर्थिक सुरक्षा

सामाजिक कार्यकर्ताओं को आर्थिक सुरक्षा भी उपलब्ध है। जो लोग समाजकार्य के किसी भी क्षेत्र में किसी भी पद पर कार्यरत हैं, उनको उनकी योग्यता आदि के आधार पर वेतन दिया जाता है।

8. लाइसेंसिंग व्यवस्था

यूरोप व अमेरिका में समाज कार्यकर्ताओं को ठीक उसी प्रकार अपने को निबंधित कराना पड़ता है जिस प्रकार एक चिकित्सक या वकील को निबंधन के लिए आवश्यक है कि व्यक्ति के पास शिक्षण व प्रशिक्षण का मानक प्रमाणपत्र है।

9. मानव कल्याण

समाजकार्य का लक्ष्य सुसंगठित समाज की रचना करना व व्यक्ति का समाज में ऐसा समायोजन करना है, जिससे वह अपना व समाज का कल्याण कर सके। इस बात को ध्यान में रखकर ही इसके सिद्धांत व प्रविधियाँ विकसित होती रही है।

उपरोक्त विशेषताओं के होने के बाद भी अनेक वर्षों से यह आम धारणा है कि क्यासमाज कार्य को एक व्यवसाय के रूप में संदर्भित किया जाए। विद्वान लगभग एक शताब्दी से यह विमर्श कर रहे हैं कि क्या समाज कार्य ऊपर वर्णित फ्लेक्जनर की सभी कसौटियों को पूरा करता है? समाजशास्त्री अर्नेस्ट ग्रीनवुड़ ने 1957 में *'एट्रीव्युट्स ऑफ ए प्रोफेशन'* प्रकाशित किया तथा सुझाव दिया कि *'वृत्तियों'* को सामाजिक मान्यता की आवश्यकता होती है। ग्रीनवुड़ ने व्यवसाय की विशेषताओं की निम्नलिखित सूची बताई है –

1. एक क्रमबद्ध ज्ञान
2. सामुदायिक/सामाजिक मान्यता
3. प्राधिकार या विश्वसनीयता
4. सदस्यों का नियमन तथा नियंत्रण
5. एक वृत्तिक आचार संहिता तथा मूल्यों मानकों तथा प्रतीकों की एक संस्कृति।

ग्रीनवुड़ ने यह यह दावा किया कि उत्तरी अमेरिका में समाज कार्य इन कसौटियों को सीमांत तक पूरा करता हुआ दिखा। फिर भी आलोचकों ने यह पूछना जारी रखा कि क्यासमाजकार्य कला हैं या विज्ञान और क्या इसा विचार पर सामाजिक कार्यकर्ताओं मे भतक्यहै? उनके पास एक सहभागी संस्कृति है, अन्यों ने यह भी सुझाव दिया कि सामाजिक तथा आर्थिक न्याय हेतु वे वकालत करें, क्योंकि सामाजिक मान्यता सहजता से प्राप्त नहीं हो सकती।

1.3 समाजकार्य का ध्येय और उद्देश्य

'दी अमेरिकन काउंसिल ऑन सोशल वर्क एजुकेशन' (सी. एस. डब्ल्यू. ई.) के शैक्षिक नीति तथा प्रत्यापन मानकों के प्रस्तावना में कहा गया है कि समाज कार्य व्यवहार मानवीय कल्याण को बढ़ाने, अवसरों, संसाधनों तथा लोगों की उनके वातावरण में क्षमता के सुदृढ़ीकरण द्वारा तथा मानवधिकारों तथा जीवन की गुणवत्ता को सीमित करने वाली दशाओं में सुधार करने वाली नीतियों तथा सेवाओं के सृजन द्वारा प्रोत्साहित करता है। समाज कार्य व्यवसाय गरीबी, दमन तथा विभेदीकरण को समाप्त करने के लिए कार्य करती है। समाज कार्य व्यवसाय समस्त विश्व में सामाजिक तथा आर्थिक न्याय की प्राप्ति हेतु कार्य करती है। व्यक्ति एवं समूह के पर्यावरण के परिप्रेक्ष्यको तथा मानव-विविधता के प्रति आदर से निर्देशित होकर यह मानव कल्याण के लिए कार्य करती है।

समाज कार्य के उद्देश्यों को निम्न लिखित बिंदुओं के अंतर्गत समझा जा सकता है

- मानवीय कल्याण को बढ़ावा देना, निर्धनता, सामाजिक अन्याय, तथा दमन आदि को समाप्त करने की कोशिश करना।

- व्यक्तियों, परिवारों, समूहों, संगठनों तथा समुदायों की सामाजिक क्रियाशीलता तथा अंत क्रियाओं को बढ़ाना।
- लक्ष्य प्राप्ति, संसाधनों के विकास तथा समस्या की रोकथाम व उन्मूलन करना।
- ऐसी सामाजिक नीतियों, सेवाओं तथा कार्यक्रमों का निर्माण व कार्यान्वयन करना, ताकि बुनियादी मानवी जरूरतों को पूरा तथा मानवी क्षमताओं के विकास को संबल प्रदान किया जा सके।
- पैरवी/वकालत तथा सामाजिक और आर्थिक न्याय को प्रोत्साहित करने वाली सामाजिक या राजनैतिक संक्रियाओं द्वारा नीतियों सेवाओं तथा संसाधनों का अनुवर्तन करना
- समाज कार्य व्यवहार को प्रोत्साहित करने वाले शोध ज्ञान तथा कौशल को विकसित करना।
- विभिन्न संस्कृतियों के संदर्भ में समाज कार्य व्यवहार को विकसित करना तथा प्रयुक्त करना।

बहुत समय से समाजकार्य अपनी पेशागत समस्या तथा पहचान के मुद्दे को लेकर संघर्षरत है इसका कारण व्यक्तिगत या सामूहिक क्रियाशीलता तथा सामाजिक नीतियों के दोहरे संकेंद्रण है। विशेषकर उत्तरी अमेरिका में व्यवहार के व्यापक क्षेत्र के अर्थ को समाज कार्य समेकित रूप में अपनी पहचान को और पैना करने में असमर्थ रहा है। समाजकार्य के प्रति समाज की दोहरी भावना के कारण ऐसे कारकों का यौगिकीकरण हुआ है। चूँकि समाजकार्य का मूल जड़ मानवता में समाहित है तथा यहलोगों को पीड़ा या कष्ट में नहीं देखना चाहता, साथ-ही-साथ समाज में कुछ ऐसे लोग भी है जो अपनी यथास्थिति बनाए रखना चाहते हैं तथा समाज में साधन विहिन लोगों को आगे बढ़ने का अवसर नहीं प्रदान करते हैं। ऐसे साधन विहीन लोगों, जिन्होंने सार्वजनिक रूप से निधित सेवाओं हेतु एक स्पष्ट जनादेश के अभाव का नेतृत्व किया है, को संसाधन और शक्ति प्रदान किए जाएँ। समाज कार्य की अपनी अभिलाषाओं तथा उद्देश्यों को प्राप्त करने में ये गत्यात्मकताएँ गंभीर रुकावटों के तौर पर रहीं हैं।

सामाजिक कार्यकर्ता के लिए समाजकार्य के क्षेत्र में काफ़ी विस्तार हुआ है, ज्ञान की गहराई के साथ-साथ बहुत सारे कौशल भी हैं, जिनका उपयोग वह अपने व्यावहारिक कार्य में कर सकता है। साथ ही समाजकार्य में विशेषीकरण भी बढ़ा है। इस परिप्रेक्ष्य में यदि वैविध्य तथा विशेषीकरण के क्षेत्रों को वर्गीकृत करने की क्रमबद्ध तथा सुसंगत योजना नहीं होगी तो विशेषीकरण से व्यवसाय की एकता को खतरा पैदा हो सकता है।

मिनाहन तथा पिंकस (1977) के अनुसार, समाजकार्य के संकेंद्रण को श्रेणीबद्ध करने के कुछ उदाहरण सुसंगत योजना के अभाव को दर्शाते हैं। समाजकार्य की प्रणालियों, जैसे-वैयक्तिक सेवा कार्य, सामूहिक सेवा कार्य, सामुदायिक संगठन, समाज कल्याण प्रशासन, समाजकार्य अनुसंधान, सामाजिक क्रिया,

अभ्यास के क्षेत्रों, समस्या क्षेत्रों, जनसंख्या समूहों रीतिविधिक क्रियात्मकता, भौगोलिक क्षेत्रों, लक्ष्य का आकार परिणाम तथा विशिष्ट उपचार अभिव्यंजनाओं द्वारा विभाजित किए जा रहे हैं। विगत शताब्दीमें, औद्योगीकृत देशों में समाजकार्य कारण या क्रियाशीलता, पर्यावरण सुधार या वैयक्तिक परिवर्तन तथा सामाजिक उपचार या सीधी सेवा पर अपने प्रबलन में अस्थिर रहा है।

अगर इसे सरल शब्दों में कहें तो पर्सन इन इनावायरमेंट (पर्यावरणगत व्यक्ति) के ढ़ाँचे, जिसका समाजकार्य उपयोग करता है, पर विचार करें तो कभी-कभी व्यक्ति अधिक शक्तिशाली संकेंद्रण के रूप में दिखाई देता है तो कभी पर्यावरण। एक व्यवसाय के रूप में समाजकार्य प्रत्यावर्तनीय है फिर भी अवधारणात्मक साँचा स्थिर बना रहा। विशेषीकरण के क्षेत्र के संदर्भ में समाविशिष्होने की इसकी इच्छा के साथ द्विगुणित होने पर यह प्रवाह तथा एक संभ्रांतिक पहचान के रूप में परिणित हुआ है।

पॉपल (1995) का कहना है कि समाजकार्य अपने प्रमुखत्वकी पुष्टि के लिए अधिक अपवर्जक हो रहा है। यह ‘सामाजिक कार्यकर्त्ता’ के शीर्षक को सीमित करता है और उन व्यक्तियों के लिए ‘समाजकार्य’ क्या कहा जाए, जिनके पास समाज औपचारिक समाजकार्य का प्रमाण-पत्र है, लेकिन ये निश्चित कार्य संपादन करते हैं तथा निश्चित भूमिकाएँ निभाते हैं।

भारत में समाजकार्य अपने विकास के एक बिंदुपर है, जहाँ सभी निश्चित मुद्दे विमर्शित हैं। मंडल (1989) लिखते हैं कि भारत में चिकित्सकीय कार्य तथा मन: चिकित्सकीय समाजकार्य का प्रारंभ स्वतंत्रता के बाद प्रारंभ हुआ। यह अन्य विशेषीकरण क्षेत्रों, यथा-परिवार तथा बाल कल्याण,तथा अपराध शास्त्र, एवं सुधारात्मक प्रशासन द्वारा अनुगमित हुआ। देशों का आर्थिक विकास ज्ञान के प्रसार पर निर्भर करता है। इस समय मंडल ने यह निष्कर्ष निकाला कि पश्चिमी समाजकार्य शिक्षण आज भी भारतीय समाज के लिए प्रासंगिक है। साथ ही ऐसे निरोधक तथा शीर्षक आधारित समाजकार्य अभ्यास पर ध्यान दिया जाना चाहिए जो अधिकतम मानव कल्याण कर सके।

एजाज ने 1989 में ‘इंटरनैशनल सोशल वर्क’ नामक शोध पत्रिका में भारत में वैयक्तिक सेवा कार्य की प्रकृति के बारे में लिखा, “भारत में स्वदेशीकरण के अनुकरण के कारण वैयक्तिक सेवा कार्य की भूमिका अल्प ही रही, इसने लोगों का ध्यान कम ही आकर्षित किया। सामाजिक विकास की जरूरतों को पूरा करने के लिए प्रबलन स्थानांतरित होता हुआ दिखाई देता है। भारत में विकासात्मक और आर्थिक समस्याओं के अतिरिक्तनगरीय समस्याएँ, पारिवारिक समस्याएँ, व्यक्तिगत तथा सामाजिक समस्याएँ भी है, जिनसे पूरा भारत घिरा हुआ है।’

समाजकार्य और विशेष तौर पर वैयक्तिक सेवा कार्य ऐसी समस्याओं के निराकरण पर बल देता है। वैयक्तिक सेवा कार्य को सामाजिक उपचार के रूप में प्रभावकारी होने के लिए भारत में लोगों के जीवन को प्रभावित करने वाले सांस्कृतिक तत्वों तथा विभेदों को अवश्य हीं अंतर्निहित करना चाहिए।

पश्चिमी समाजकार्य और भारत में समाजकार्य अगर इन दोनों की दिशा और प्रस्थिति के साथ अधिक नया बनने के लिए हमें दो लेखों, जो क्रमश: 2002 तथा 2003 में प्रकाशित है, को देखना पड़ेगा। पहला लेख

'दि फ्यूचर ऑफ सोशल वर्क प्रैक्टिस' जो एलिजाबेथ क्लॉर्क द्वारा लिखित है, वे उस समय यू. एस. में नेशनल एसोसिएशन ऑफ सोशल वर्कर्स की तत्कालीन अधिशासी निदेशक थीं। इस लेख में क्लार्क लिखती हैं कि प्रतिबिंब, वेतन तथा प्रतिपूर्ति के मुद्दों के अतिरिक्त भविष्य में अमेरिकी समाजकार्य अभ्यास का सामना, एक सामयिक भूषिता में नई जरूरतों को पहचानने तथा प्रतिक्रियात्मकता से होगा। यह राजनीतिक तथा सामाजिक रूझान के ज्ञान की अपेक्षा करता है। क्लॉर्क उदाहरण देकर कहती हैं कि कंजर्वेटिव गवर्नमेन्ट तथा सीमित संसाधनों के समयों में राजनीतिक समाजकार्य तथा संक्रियावाद की अत्यधिक आवश्यकता होगी। क्लार्क यह पुर्वानुमान लगाती है कि कुछ जनसंख्याएँ अन्यों से अधिक सामाजिक तथा आर्थिक रूप से ज़ख्मी रहना जारी रखेंगे तथा उनकी आवश्यकताएँ भविष्य में और धनीभूत होंगी। जर्जर संसाधन विहिन वृद्ध व्यक्ति, ऐसे समूह के एक उदाहरण हैं।

देखभाल की सुलभता में वृद्धि के साथसाथ विभेंदों से द्विगुणित स्वास्थ्य तथा मानसिक स्वास्थ्य सेवाओं को बढ़ाना होगा। लोगों की जरूरतों को पूरा करने के लिए, सामाजिक अभिकरणों को स्थापित करने की जरूरत होगी तथा अधिक से अधिक सामुदायिक तथा निजी संसाधनों को वसूल करनेका भी प्रयास करना होगा। एक व्यावसायिक सेवा सुपुर्दगी से हटकर इसमें समेकित सेवा की प्रकृति होगी जिसके अंतर्गत सामाजिक कार्यकर्त्ता, सूचना और प्रविधि को पहुँचाने में अपनी भूमिका अदा करेंगे।

क्लार्क का विश्वास है कि विधिक समाजकार्य तथा सामूहिक समाजकार्य के विशेषीकरण क्षेत्रों में वृद्धि होगी तथा यह राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय समाजकार्य अभ्यास सामाजिक और आर्थिक विकास में समाजकार्य व्यवसाय की भूमिका के रूपांकन में सहायता करेंगें। वहीं दूसरे लेख में मातृसेवा संघ इंस्टीच्यूट ऑफ सोशल वर्क के संकाय सदस्य अजित कुमार ने 'सोशल वर्क इन इंडिया ए ब्राइट फ्यूचर नामक शीर्षक के माध्यम से लिखा है कि सामाजिक समस्याओं की देखभाल हेतु बाजार के विकास एवं औद्योगिक आधार-विस्तार पर एक विश्वास रहा है। फिर भी इस प्रकार के विकास ने इतिहास की कुछ जटिलताओं के साथसाथ जाति, धर्म, भाषा इत्यादि जैसे भेद-भावों पर भी विजय प्राप्त की गई है। वे प्रतिवेदित करते हैं कि निरक्षरता, निर्धनता, शिशुमृत्यु, बेरोज़गारी, कुपोषण, निराश्रयिता व्यापक स्तर पर समाज में विद्यमान हैं, साथ ही भ्रष्टाचार तथा औद्योगिक संरचना में अक्षमता ने जनसमूहों तथा बुनियादी संसाधनों को सुलभ जल तथा मार्ग की अनिर्मिति में योगदान दिया है। वे यह प्रश्नउठाने हैं कि क्या समाज कार्य के लक्ष्य समाज में विद्यमान अभाव व असमानता के रूप में प्रदर्शित किए जाएंगे और संसाधनों के संग्रहण तथा निवेश की प्राथमिकीकरण की राज्य की क्षमता उत्तरोत्तर क्षीण होगी।

अजित कुमार यह निष्कर्ष निकालते हैं कि संभव है कि बाजार में आर्थिक वृद्धि का परिणाम निर्वासन होगा जिसे वे 'रद्ध वस्तु' या वे व्यक्ति जो औद्योगिकीकरण से लाभान्वित नहीं होते, सामाजिक कार्यकर्ताओं की देखभाल हेतु विकासके अन्य रूप में संदर्भित होते हैं। बहरहाल वे कहते हैं कि सामाजिक कार्यकर्ता लोगों की समस्याओं जो संरचनात्मक शक्तियों के कारण उत्पन्न होती है के उन्मूलन में एक सीमित भूमिका निभा पाने में सक्षम होंगे।

1.4 वैश्विक तथा राष्ट्रीय प्रासंगिक परिप्रेक्ष्य : व्यवसाय वाद पर अंतर्राष्ट्रीय बहसे

यद्यपि समाज कार्य को एक पूर्ण विकसित एवं एकीकृत व्यवसाय कहा जा सकता है फिर भी यह वर्तमान समय में विवादास्पद बना हुआ है। संपूर्ण अंतर्राष्ट्रीय सीमाओं में चाहे वे विकसित देश हो या विकासशील देश में जो क्षेत्र में कार्यरत है उनकी पहचानों तथा गतिविधियों में आज भी विभेद को प्रोत्साहित किया जा रहा है। कुछ विन्यासों में ऐतिहासिक दृष्टि से उत्तरी अमेरिका तथा पश्चिमी यूरोपीय देशों में विकासों से प्रभावित प्रबलन, व्यक्तियों या छोटे समूहों के स्थान समाजकार्य हस्तक्षेप अत्यधिक है तथा व्यापक स्तर पर फैले पर्यावरणीय शक्तियों पर हस्तक्षेप कम हैं।

सामाजिक कार्यकर्त्ताओं को इन उद्देश्योंके बीच संतुलन प्राप्त करना एक उच्च प्राथमिकता का विषय बना हुआ है। व्यक्ति तथा पर्यावरण के पारस्परिक प्रभाव शक्तिशाली ताकतों का प्रतिनिधित्व करते हैं, जिन पर समाजकार्य हस्तेक्षेपों में विचार किया जाना चाहिए। लोग अपने पर्यावरण से काफ़ी प्रभावित होते हैं। हेयर ने इस संदर्भ में लिखा है कि लोगों में, एक प्रदूषित नदी, दमनात्मक सामाजिक नीतियों, एक विद्यालय या बच्चों की संस्था, कार्यस्थल या एक परिवार आदि में भी अपने अनुरूप पर्यावरण को या पर्यावरण को बदल सकने की क्षमता होती है। वस्तुत: ऐसा करने के लिए उनका सशक्तीकरण भी समाजकार्य का एक भाग है।

दि इण्टरनेशनल फेड्रेशन ऑफ सोशल वर्कर्स ने मॉन्ट्रियल कनाड़ा में 2000 में अपनी महासभा में समाजकार्य की नई अंतर्राष्ट्रीय परिभाषा की स्वीकृति हेतु मतदान द्वारा एक छ: वर्षीय प्रक्रिया का समापन किया। इसकी विभिन्न गतिविधियों को परिभाषित करके तथा सामाजिक वातावरण में मानव व्यवहार के सम्मान पर निर्मित परिभाषा ने महत्वाकांक्षी सिद्धांतों के महत्वको संज्ञान में लेते हुए व्यवसाय के मूलभूत मूल्यों की पहचान की।

यह परिभाषा व्यक्तियों के साथ हस्तक्षेप को प्रोन्नत करती है, इसका कारण है कि वे अपने वातावरण के साथ मानवीय सामाजिक तथा भौतिक स्तरों पर अंत:क्रिया करते हैं तथा समाजकार्य मूल्यवान प्रक्रियाओं के रूप में, जन सशक्तीकरण तथा उदारता को प्रोत्साहित करती है। ब्राजील के शिक्षक पाओलो फ्रॉयर के योगदानों को उद्धृत करते हुए सामाजिक कार्यकर्त्ताओं को प्रोत्साहित किया गया कि सामाजिक व्यवस्था के अंतर्गत सामाजिक, राजनीतिक तथा आर्थिक विरोधाभासों को अधिमान्य करने की शैली को वे सीखे तथा उसके अनुसार दमन के विरूद्ध कदम उठायें।

इसका अर्थ समस्याओं का स्थूल मूल्यांकन करना, सांस्कृतिक तथा वैयक्तिक विविधता का सम्मान करना तथा ऐसे प्रत्युत्तरों को विकसित करना, स्थानीय तथा सांस्कृतिक प्राथमिकताओं हेतु उचित हो अंगीकरण के समय वैश्विक सिद्धांतों को अंतर्योजित करना था। आई एफ.एस. डब्ल्यू. की यह परिभाषा तथा इसकी भाषा जो एक अंतर्राष्ट्रीय कार्यदल द्वारा सावधानी के साथ शिल्पित थी इस प्रकार थी-

समाजकार्य व्यवसाय, सामाजिक परिवर्तन, मानवी संबंधों में समस्यानिराकरण तथा जनसशक्तिकरण एवं उदारता को मानव कल्याण हेतु बढ़ाने के लिए प्रोन्नत करती है। सामाजिक प्रणालियों के सिद्धांतों तथा

मानव व्यवहार का उपयोग करते हुए समाजकार्य उन बिंदुओं पर हस्तक्षेप करता है, जहाँ लोग अपने पर्यावरण से अंत: क्रिया करते हैं। मानवाधिकार तथा सामाजिक न्याय के सिद्धांत समाजकार्य का आधार हैं।

टिप्पणी :- समाजकार्य अपने विविध रूपों में लोगों तथा उनके वातावरण के बीच बहुल तथा जटिल व्यवहारों को संबोधित करता है। समाजकार्य का लक्ष्य समस्त लोगों को अपनी पूरी क्षमताओं को विकसित करने के योग्य बनाना, उनके जीवन को समृद्ध बनाना तथा अकर्मण्यता को दूर करना। व्यावसायिक समाज का मुख्य ध्यान समस्या समाधान तथा परिवर्तन करने में होता है। इसलिए सामाजिक कार्यकर्त्ता समाज में उन व्यक्तियों परिवारों तथा समुदायों के जीवन में परिवर्तन लाने वाले एजेंट के रूप में है, जिन्हें वे सेवाएँ देते हैं। समाजकार्य मूल्यों सिद्धांत तथा समाजकार्य अभ्यास का एक अंतर्संबंधित प्रणाली है।

मूल्य :- समाजकार्य मानवतावादी तथा जनतांत्रिक विचारों से बंधा हुआ है। इसके मूल्यसमानता के प्रति आदर, समस्तजन की योग्यता तथा प्रतिष्ठा पर आधारित है। समाजकार्य का प्रारंभ वास्तव में एक शताब्दी पहले हुआ है। समाजकार्य अभ्यास मानवीय क्षमताओं को विकसित करने तथा उनकी जरूरतों को पूरा करने पर संकेन्द्रित रहा है। मानवाधिकार तथा सामाजिक न्याय समाजकार्य के लिए उत्प्रेरणा तथा न्यायोचित्यता के रूप में मददगार रहे हैं। समाजकार्य व्यवहार अभावग्रस्तों एवं निर्धनता उन्मूलन हेतु प्रयास करता है एवं सामाजिक न्याय को बढ़ाने हेतु आहत तथा दमित जन की मुक्ति हेतु प्रयासकरता है। समाजकार्य के मूल्य व्यवसाय के राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय आचार संहिताओं में वर्णित है।

सिद्धांत :- समाजकार्य अपनी पद्धति को विशिष्ट संदर्भ के साथ स्थानीय तथा स्वदेशी ज्ञान के साथ-साथ शोध और अभ्यास मूल्यांकन पर आधारित प्रमाणित ज्ञान के व्यवस्थित निकाय पर आधारित करता है। मानव तथा उसके वातावरण के बीच की अंत: क्रियाओं की जटिलता को तथा मनोसामाजिक एवं दैनिक कारकों समेत, उन पर बहुत से प्रभावों को ड़ालने वाली तथा उनके द्वारा प्रभावित होने वाली, लोगों की दोनों क्षमताओं को यह मान्यता प्रदान करती है। समाजकार्य व्यवसाय मानव विकास तथा व्यवहार तथा जटिल परिस्थितियों के विश्लेषण के साथ-साथ वैयक्तिक, संगठनात्मक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक परिवर्तनों के लिए सामाजिक प्रणालियों के सिद्धांतों से काम चलाता है।

अभ्यास :- समाजकार्य समाज में विद्यमान अवरोधों असमानताओं तथा अन्यायों के विरूद्ध आवाज उठाता है। यह संकटों एवं आपात स्थितियों के साथ ही दैनिक जीवन की वैयक्तिक तथा सामाजिक समस्याओं के प्रति प्रतिक्रिया व्यक्त करता है। समाजकार्य कौशलों प्रविधियों तथा व्यक्तियों एवं उनके पर्यावरण के बीच होने वाले परिवर्तनों एवं संबंधों के साथसाथ सहवर्ती क्रियाकलायों के एक वैविध्य का प्रयोग करता है। समाजकार्य हस्तक्षेप प्राथमिक तौर से व्यक्ति केन्द्रित मनो सामाजिक प्रक्रियाओं से लेकर सामाजिक नीति, नियोजन तथा विकास तक व्याप्त हैं।

समाजकार्य में परामर्श, नैदानिक समाजकार्य, मूल्यांकन, सामूहिक सेवाकार्य, सामाजिक शैक्षिक कार्य, पारिवारिक चिकित्सा व उपचार के साथ ही लोगों तक समुदायगत सेवाओं तथा संसाधनों को पहुँचाने में सहायता करना आदि सम्मिलित है।

समाज कार्य हस्तक्षेप में अभिकरण प्रशासन, सामुदायिक संगठन तथा सामाजिक नीति व आर्थिक विकास को प्रभावित करने वाले सामाजिक तथा राजनीतिक पहलुओं को भी सम्मिलित किया गया है। सामाजिक परिवेश ऐसी किसी भी प्रक्रिया को रोकने का प्रयास करता है, जो किसी भी सामाजिक समूह द्वारा संसाधनों या अधिकारों की सुलभता को नकार सकती है या उनको बहिर्जातीय स्थिति में रखने की कोशिश कर सकती है।

कुछ ऐसे महत्वाकांशी लक्ष्य हमें दिखायी पड़ते है, जिन्हें प्राप्त करना समान रूप से कठिन रहा है। वैश्वीकरण की आधुनिक शक्तियों को हम उदाहरण के रूप में देख सकते है विश्व प्रणालियों की एक विशाल चादर के रूप में सामाजिक कार्यकर्ता, सामाजिक आर्थिक तथा पर्यावरणीय नीतियों की विश्व के एक भाग में पड़ने वाले प्रभावों को पूर्णत समझने के लिए अग्रसर है।

आई. एफ. एस. डब्ल्यू के तात्कालीन अध्यक्ष डेविड़ एन. जान्स दुनिया भर के सामाजिक कार्यकर्ताओं के लिए टिप्पणी करते है कि “हमारी यह आवश्यकता है कि हम जरूरत मंद लोगों की सहायता तथा समर्थन के साथ-साथ आधारभूत मानवतावादी सोच एवं समाजकार्य को राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय कार्य सूची के साथ विश्व स्तर पर जोड़े। समाजकार्य की दृष्टि से यह बहुत ही महत्वपूर्ण है।”

एक चिंता का विषय यह है कि ऐसे वादों पर सुपुर्दगीअनेकों बार भ्रामक सिद्ध हुई है। अंतर्राष्ट्रीय अनुभवों की अर्द्धशती को संक्षिप्त करते हुए डेविड ड्रकर ने प्रश्न किया कि क्या जैसा कि हम गर्व से सतत् यह दावा करते हैं कि हम वास्तव में निर्धन, बहिष्कृत (उपेक्षित) तथा निर्धनता की आधारभूत दशाओं के साथ चिंतन में महत्वपूर्ण रूप से पाए जा सकते है। हमारे शपथ लिए गए मूल्योंके बावजूद क्या हम वास्तव में व्यापक रूप से अपने समाज के चुनिंदा विरुग वाहक के रूप में कार्य करते हैं। क्याहम पश्चिमी सांस्कृतिक उद्बोधन,अन्य से अलग मुक्त बाजार की अनियंत्रित शक्तियों की बाध्यकारी स्थिति से निपटने के लिए प्रभुत्व के साथ कार्य करते है। ड्रकर का कहना है कि सामाजिक कार्यकर्त्ताओं का निर्धनता के साथ सीधा संपर्क भी बहुधा एक प्रकार के निषेधात्मक पहचान के माध्यम से वृहत समाज से होकर गुजरा है। कभी-कभी समाज के निर्धन वर्ग के लोग भी अपने समान ही सामाजिक कार्यकर्त्ताओं को मूल्यांकित करते हैं तथा उनकी सेवाओं को अपर्याप्तधन संपोषित महसूस करते हैं। सामाजिक कार्यकर्त्ता कभीकभी समाज के लिए सीमांत व्यावसायिक बहिर्जातीय तथा अस्वीकार्य भी हो जाते हैं।

एक बहुद्देशीय अध्ययन का अनुसरण करने हुए जो थाईलैंड, साउथ कोरिया, हांग-कांग, पाकिस्तान, फिलीपींस तथा म्यांमार में किया गया था। उनका निष्कर्ष था कि ये प्रतिक्रियाएँ उस समय अधिक्षमता लाभों को प्राप्त कर सकती थी, जब वे सामाजिक कार्यकर्त्ताओं को क्रमबद्ध समस्याओं के लिए अधिक चौकस और संवेदनशील बनाने के लिए कार्यरत थी। यदि ऐसे मुद्दों की प्रतिवेदिता और इनकी नीति और

नियोजन में सामाजिक कार्यकर्त्ताओं का हस्तक्षेप एवं समावेश उपयोगी अवधारणा के अनुगमन हेतु सामान्य बात थी।

1.5 सारांश

इस अध्याय में समाज कार्य के व्यावसायिक रूप को व्याख्यायित करने की कोशिश की गई है। समाज कार्य की स्वैच्छिक तथा वृत्तिक अवधारणाओं को भी इसमें स्पष्ट करने की कोशिश की गई है। विभिन्न धर्मों में स्वैच्छिक क्रियाओं को स्पष्ट किया गया है। समाज कार्य के ध्येय एवं उद्देश्यों को स्पष्ट करते हुए बताया गया है कि समाज कार्य मानव कल्याण को बढ़ाने, निर्धनता एवं दमन तथा अन्य प्रकार के अन्याय का उंमूलन कर सामाजिक न्याय को लाने के लिए प्रतिबद्ध है। यह लक्ष्य प्राप्ति, संसाधनों के विकास तथा समस्या की रोकथाम व उसके उन्मूलन हेतु समाज कार्य व्यक्तियों, परिवारों समूहों संगठनों व समुदायों की सामाजिक क्रियाशीलता तथा अंत:क्रियाओं को बढ़ाता है। समाज कार्य व्यवसाय को लेकर राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर चलने वाले विभिन्न मुद्दों तथा समाज कार्य के अब तक के हस्तक्षेप को भी विभिन्न विद्वानों के कथनों द्वारा व्याख्यायित किया गया है।

1.6 बोध प्रश्न

1. व्यवसाय के अर्थ को स्पष्ट करते हुए इसकी विशेषताओं को रेखांकित करे।
2. समाज कार्य व्यवहार के उद्देश्यों को स्पष्ट करें।
3. सामाजिक कार्यकर्त्ता सामाजिक न्याय की प्राप्ति में किस प्रकार योगदान करते हैं ? स्पष्ट करें।
4. आई. एफ. एस. डब्ल्यू. द्वारा बनाई गयी समाज कार्य नई परिभाषा को परिभाषित करें।

1.7 संदर्भ ग्रंथ एवं उपयोगी पुस्तकें

ड्रकर, डी. (2003). हवेदर इण्टरनेशनल सोशल वर्क. इंटरनेशनल सोशल वर्क, 46 (1), पृ. 53 - 81.

होप्स, जेजी एवं कॉलिंस, पी. एम. (1995). सोशल वर्क प्रोफेशन ओवरव्यू. इनसाइक्लोपीडिया ऑफ सोशल वर्क. वाशिंगटन डी. सी: एन एस डब्ल्यू प्रेस. पृ. 2266 – 2282.

कुमार, ए (2002). सोशल वर्क इन इण्डिया: ए "ब्राइट फ्यूचर"? द इंडियन जर्नल ऑफ सोशल वर्क, 63, पृ 80 – 90

मेयर, सी. (1976). सोशल वर्क प्रैक्टिस. न्यूयॉर्क: फ्री प्रेस

पॉपल, पी. आर. (1995). सोशल वर्क प्रोफेशन: हिस्ट्री. इनसाइक्लोपीडिया ऑफ सोशल वर्क. वाशिंगटन डी सी: एन एस डब्ल्यू प्रेस. पृ. 2283 – 2292.

इकाई-2
समाजकार्य शिक्षा : सिंहावलोकन एवं संभावनाएं

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य
2.1 प्रस्तावना
2.2 अमेरिका में समाज कार्य शिक्षा का इतिहास
2.3 समाज कार्य शिक्षा में विश्वव्यापी मानदण्ड का उद्भव
2.4 समाज कार्य ज्ञान के स्वदेशीकरण के सांकेतिक विचार
2.5 एशिया एवं भारत के संदर्भ में उदाहरण
2.6 सारांश
2.7 बोध प्रश्न
2.8 संदर्भ एवं उपयोगीग्रंथ

2.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद पश्चात आप -

1) आप समाज कार्य शिक्षा को प्रोत्साहित करने वाली प्रवृत्तियों की विवचेना कर सकेंगे।
2) अमेरिका के समाज कार्य शिक्षा के इतिहास को रेखांकित कर सकेंगे।
3) समाजकार्य शिक्षा में विश्वव्यापी मानदण्ड के उद्भव को व्याख्यायित कर सकेंगे।
4) समाजकार्य ज्ञान के स्वदेशीकरण हेतु सांकेतिक विचारों को समझ सकेंगे।
5) समाजकार्य शिक्षा में एशिया एवं भारत के संदर्भों में उदाहृण प्रस्तुत कर सकेंगे।

2.1 प्रस्तावना

अमेरिका में 19वीं शताब्दी के अंतिम वर्षों में समाज कार्य शिक्षाप्रारंभ हुई। इसका कारण यह था कि उस समय सामाजिक विज्ञान का विकास कॉलेजों एवं विश्वविद्यालयों में हो चुका था। उसी समय वहां के लोककल्याणकारी संगठनों ने सरकार पर दबाव बनाया कि एक ऐसे प्रशिक्षण कार्यक्रम या शैक्षिक पाठ्यक्रम या विषयवस्तु को विकसित किया जाए जिसका उद्देश्य लोककल्याणकारी संस्था के संचालन व प्रबंधन पर केन्द्रित हों। 18वीं शताब्दी के मध्य तक कुछ संगठन जैसे दान संगठन समिति, चैरिटी आर्गेनाइजेशन सोसाइटी, एसोसिएशन फॉर इम्प्रूविंग द कंडीशनऑफ द पुअर ने समाज सेवा कार्य से संबंधित प्रशिक्षण स्वयंसेवकों को देना प्रारंभ कर दिया था। लेकिन यह लंबे समय तक नहीं चल सका।

1890 के शुरूआत में अमेरिका में आर्थिक मंदी का दौर शुरू हुआ इसके कारण दान संगठन ने विश्वविद्यालयों एवं कालेजों से आग्रह किया कि वे ऐसे व्यवस्थित समाजकार्य से संबंधित औपचारिक पाठ्यक्रम की शुरूआत करे ताकि अच्छे व नैतिक कर्मचारी तैयार हो सकें जिससे उनकी जरूरतें पूरी हो सके तथा आवश्यकता पड़ने पर एक अच्छा वैतनिक कार्य बल तैयार किया जा सके। इस तरह समाज सेवा की व्यक्तिगत एवं नैतिक अवधारणा की जगह वैज्ञानिक सिद्धांतों पर आधारित सेवा कार्य की अवधारणा को ज्यादा महत्व दिया जाने लगा।

वर्तमान समय में तथ्यों एवं वास्तविक सबूतों पर आधारित अनुभव एवं अभ्यास संबंधी ज्ञान की खोज जारी है। फिर भी समाज कार्य शिक्षा के अंतर्गत दो प्रकार की विचारधाराएं अस्तित्व में हैं। एक विचारधारा का ध्यान समाजकार्य शिक्षा के व्यावसायिक समाजीकरण की ओर केन्द्रित है। जिसमें कुछ हद तक व्यवसाय के निम्न स्तरीय मूल्य व नैतिकता समाहित है लेकिन अब इन मूल्यों एवं नैतिकताओं में सुधार हो रहा है। यह व्यवसाय का हृदय स्थल है, इसलिए इस ज्ञान और कुशलता के अंतर्गत बताया जाता है कि अनुभव एवं प्रयोगों पर आधारित शोध से ही इनकी उन्नति या बढ़ोतरी संभव है। वहीं दूसरी विचाधारा के लोग समाजकार्य शिक्षा में संस्कृति विषयक विलक्षणता को जानने का प्रयास कठोर परिश्रम से करते हैं तथा ये कोशिश करते हैं कि संस्कृति की विलक्षण को जानने के तरीके क्या हैं? अर्थात् कौन-कौन से तरीके हैं, जिससे हम सांस्कृतिक विलक्षणता को जान सकते हैं। समाजकार्य शिक्षण हेतु वैश्विक मानदण्ड के विकास की चुनौती ही इन घटकों को संतुलित करती है तथा संतुलन स्थापित होने के बाद चुनौती खत्म हो जाती है।

2.2 अमेरिका में समाजकार्य शिक्षा का इतिहास

18वीं शताब्दी के अंतिम समय में संयुक्त राज्य अमेरिका में तीन धाराओं या प्रवृत्तियों ने समाज कार्य शिक्षा के विकास को प्रभावित किया। पहली धारा संगठन या संख्या के आरंभ से जुड़ी थी, जैसे, The Association for improving the condition of the poor, (1871)। इन संस्थाओं में कार्य कर रहे लोग स्वयं सेवक तथा उनमें अधिकतर महिलाएं थी। ये लोग आवश्यकताग्रस्त या जरूरतमंद लोगों की सहायता सीधे करते थे। इन संगठनों में कार्य कर रहे तथाकथित स्वयंसेवक सर्वदा प्रभावकारी तरीके से कार्य नहीं कर पाते थे। कुछ तो स्वेच्छानुसार अपने मन से कार्य करते थे। कुछ स्वयंसेवकों के पास विभिन्न सांस्कृतिक पहलुओं के बारे में समझ एवं जानकारी ही नहीं थी। समस्याग्रस्त व्यक्ति किस प्रकार की सेवा को स्वीकार करेंगे? सहायता के साधनों को प्राप्त करने में कुछ तत्वों जैसे नस्ल, जाति, सामाजिक इत्यादि की भूमिका क्या होगी? उस समय सामाजिक वेदना के मूल कारण के रूप में व्यक्तिगत तथा सामाजिक सांस्कृतिक तत्वों के एक-दूसरे पर जटिल क्रिया-प्रतिक्रिया पर अधिक से अधिक विश्वास किया जाता था। लोक कल्याणकारी संगठन या संस्था चाहते थे कि उनके स्वयंसेवक

तथा वैतनिक दोनों प्रकार के कार्यकर्ताओं कोइन संचालक शक्तियों की समझ हो तथा ये वैज्ञानिक सिद्धांतों पर अधिक भरोसा करे।

द्वितीय धारा यह थी कि सामाजिक समस्याओं के समाधान हेतु समाज वैज्ञानिकों के शिक्षा संबंधित सिद्धांतों पर ध्यान केन्द्रित किया जाए। यहां सवाल यह उठता है कि क्या संबंधित सिद्धांतों से व्यक्तियों की समस्या के उत्पन्न होने के कारण समाप्त हो जाएंगे? या सामाजिक आर्थिक दशाएं शैक्षणिक सोच तक पहुंच पाएंगी?

कुछ कॉलेजों एवं विश्वविद्यालयों में नैतिक व सामाजिक विषय एवं व्यावहारिक लोक कल्याणकारी कार्य विषयों से संबंधित पाठ्यक्रम प्रारंभ किए गए।कुछ विश्वविद्यालयों में (यूनिवर्सिटी ऑफ मिसिगन), इस प्रकार के पाठ्यक्रम समाजशास्त्र या अर्थशास्त्र की कक्षा के रूप में प्रारंभ किए गए ।इन कक्षाओं के माध्यम से संगठनात्मक एवं सामुदायिक स्तर पर आम लोगों का ध्यान रखने वाले समाजकार्य विषय से संबंधित पाठ्यक्रम शुरू किए गए। ये पाठ्यक्रम सामाजिक नीति से भी संबंधित थे। मेरी रिचमण्ड नामक विदुषी महिला ने 1917 में समाज कार्य की एक महत्वपूर्ण पुस्तक Social Diagnosis लिखी। वह भी लोक कल्याणकारी संगठनों में शामिल थी। मेरी रिचमण्ड ने व्यावहारिक लोक कल्याणकारी प्रशिक्षण स्कूल को स्थापित करने की मांग की। जिसके परिणामस्वरूप न्यूयार्क चैरिटी आर्गेनाइजेशन सोसाइटी ने एक छह साप्ताहिक प्रशिक्षण कार्यक्रम प्रारंभ किया। इस तरह के अन्य कार्यक्रम भी अमेरिका के महत्वपूर्ण शहरों में आरंभ किए गए। न्यूयार्क चैरिटी आर्गेनाइजेशन सोसाइटी ने शीघ्र ही एक वर्षीय शैक्षिक कार्यक्रम का विकास किया तथा इसका नाम न्यूयार्क स्कूल ऑफ फिलोन्थ्रोपी रखा गया। आगे चलकर इसका नाम न्यूयार्क स्कूल ऑफ सोशल वर्क हो गया तथा 1962 से इसे कोलम्बिया यूनिवर्सिटी स्कूल ऑफ सोशल वर्क के नाम से जाना जाता है। बीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में बहुत सारे समाज कार्य से संबंधित प्रशिक्षण स्कूल शिकागो, वोस्टन, सेंटलुईस तथा फिलाडेल्फिया शहर में शुरू किए गए तथा ये विश्वविद्यालयों से मान्यता प्राप्त करने की कोशिश करते रहे। प्रत्येक शहर में वैयक्तिक कार्य का निपटारा करने वाली एजेंसियों ने इन पाठ्यक्रमों को बहुत प्रभावित किया जो विभिन्न स्कूलों में पढ़ाए जा रहे थे। अर्थात इन पाठ्यक्रमों ने इन संस्थाओं/एजेंसियों से काफ़ी कुछ ग्रहण किया। इसके अतिरिक्त समाज विज्ञान, अर्थशास्त्र तथा मनोविज्ञान के क्षेत्र व मानव विकास ने भी पाठ्यक्रम को प्रभावित किया।

तीसरी धारा या प्रवृत्ति ने स्थापित हुए नियमों को प्रभावित किया। विश्वविद्यालयी समाजकार्य शिक्षा ने महिलाओं केकॉलेजों का काफ़ी विकास किया। विक्टोरियन मॉडल सिद्धांत के तहत महिलाओं ने घरों से बाहर कार्य नहीं किया था। लेकिन 1890 के बाद इस धारणा में अधिक परिवर्तन आया। प्रगतिशील विचारधारा द्वारा यह माना जाने लगा कि महिलाएं भी विभिन्न प्रकार की भूमिकाओं का निर्वहन कर सकती है। यह तब प्रारंभ हुआ जब महिलाओं ने1890 के अंतिम समय में परोपकारी दान संस्थाओं तथा बाल कल्याण संगठनों हेतु कार्य आरंभ करदिया।

सेटलमेंट हाउसेज अथवा आम आदमी से जुड़े समाजसेवी संगठनों ने उन अधिकांश महिलाओं को वैतनिक कर्मचारी के रूप में नियुक्त किया जो अधिक शिक्षा प्राप्त करने को इच्छुक थी तथा ये महिलाएँ ऐसे लोगों के सशक्तिकरण के लिए आवाज उठाना चाहती थी जो लोग शोषितों, वंचितों तथा गरीबों की स्थिति में सुधार लाने के लिए दमनकारी एवं शोषणकारी शक्तियों के विरूद्ध अवाज उठा रहे थे। खासतौर से ये महिलाएं उन नीतियों एवं नियमों का पुरजोर समर्थन करना चाहती थी जो दमनकारी एवं शोषणकारी दशाओं को समाप्त करने में सहायक हो सकतीथी।

ऐसा पहला स्कूल जिसने उपरोक्त पाठ्यक्रम को आरंभ किया विकसित होकर वर्तमान में समाज कार्य शिक्षा के नाम से प्रचलित हुआ। उस समय वह प्रशिक्षण स्कूल के नाम से जाना जाता था। प्रथम पीढ़ी के ये स्कूल वर्ष 1898 और 1929 के बीच स्थापित हुए। 1919 ई. में अमेरिका में एसोसिएशन ऑफट्रेनिंग स्कूल ऑफ प्रोफेशनल सोशल वर्क प्रैक्टिस की स्थापना की गई। प्रारंभ में इसमें 17 चार्टर सदस्य थे। इसके अलावा कनाडा में भी दो स्कूल स्थापित हुए।

आस्टिन का कहना है कि उपरोक्त कार्यक्रमों के निम्नलिखित (गुण) थे-

- ये सब निजी कार्यक्रम थे, सरकारी नहीं।
- इन स्कूलों के पाठ्यक्रम स्वयंसेवी सामाजिक संस्थाओं के कार्यकर्ताओं द्वारा निर्धारित किए गए थे।
- प्राथमिक स्तर पर स्नातक शिक्षा कार्यक्रम के रूप में ये स्थापित किए गए क्योंकि प्रारंभिक स्तर पर अधिकांश विद्यार्थी खासतौर से महिलाएं, उदारवादी कला से संबंधित थी।
- उनके पास नामांकन संबंधी मापदण्ड तथा संगठित पाठ्यक्रम था।
- ये पाठ्यक्रम सामान्य रूप से दो वर्ष की अवधि के लिए थे।
- शिक्षकों के पास समाजकार्य का अनुभव था, उनके लिए समाजविज्ञान की डिग्री होना जरूरी नहीं था।
- शिक्षक अपने विद्यार्थियों को स्वयंसेवी संस्थाओं, अस्पतालों, सार्वजनिक विद्यालयों और बाल निर्देशन आयोग्यशालाओं में प्रकरण संबंधी कार्य करकर प्रशिक्षित कराते थे।

'एसोसिएशन ऑफ ट्रेनिंग स्कूल फार प्रोफेशनल सोशल वर्क प्रैक्टिस' का नाम 1927 ई. में बदलकर अमेरिकन एसोसिएशन ऑफ स्कूल्स ऑफ सोशल वर्क रख दिया गया। इस संगठन ने शैक्षिक मानदण्डों को विकसित किया। ये मापदण्ड उन निर्देशक तत्वों के समान थे जो प्रशासकीय नेतृत्व को उत्तरदाई बनाते थे तथा विश्वविद्यालय की मान्यता प्राप्त करने संबंधी मापदण्ड के रूप में क्रियाशील थे। 1932 में अमेरिकन एसोसिएशन ऑफ स्कूल्स ऑफ सोशल वर्क ने विभिन्न कोर्सों के लिए कम से कम एक वर्ष के

पाठ्यक्रम को लागू किया तथा सिद्धांतों की पढ़ाई के साथ-साथ व्यावहारिक प्रशिक्षण कार्य भी निश्चित रूप से सम्मिलित किया गया। 1939 में पाठ्यक्रमों/कार्यक्रमों से संबंधित बजट, पूर्णकालिक संकायों की संख्या तथा पुस्तकालय की सुविधाभी मानदण्डों के अधीन सम्मिलित किए गए। 1937 ई. से क्रमशः अमेरिकन एसोसिएशन ऑफ स्कूल्स ऑफ सोशल वर्क के सदस्यों को भी अपने कार्यक्रम किसी विश्वविद्यालय या कॉलेज से संबद्ध करने पड़े। 1939 से पहले के प्रचलित एक वर्षीय पाठ्यक्रम दो वर्षीय पाठ्यक्रम में परिवर्तित हो गए जो कि आगे चलकर समाजकार्य में स्नातकोत्तर डिग्री बन गया। वैसे स्कूल जिनके पास अमेरिकन एसोसिएशन ऑफ स्कूल्स ऑफ सोशल वर्क की सदस्यता पाने की योग्यता नहीं थी, उन्होंने एकजुट होकर 1942 में नेशनल एसोसिएशन ऑफ स्कूल्स ऑफ सोशल एडमिनिस्ट्रेशन संघ बना लिया। इन दोनों संगठनों ने वर्ष 1950 ई. तक शैक्षिक मानदण्ड प्रकाशित किया। इन दोनों संगठनों के बीच मतभेदों को सुलझाने के लिए एक दूसरे समूह नेशनल कांउसिल ऑन सोशलवर्क एसोसिएशन की स्थापना की गई। यह संगठन 1952 में समाजकार्य शिक्षा का प्राधिकरण बन गया तथा वर्तमान में यह इकलौता संगठन है जो संयुक्त राज्य अमेरिका में समाज कार्य विषय में स्नातक एवंपरास्नातक स्तर के पाठ्यक्रमों को मान्यता प्रदान करता है। 1960 एवं 1970 के दशक में समाजकार्य शिक्षा से संबंधित संस्थाओं में वृद्धि हुईयह वृद्धि विशेष रूप से सार्वजनिक विश्वविद्यालयों में हुई। बहुत से स्नातक स्तर से नीचे के विशिष्ट प्रकार के समाजकार्य कार्यक्रम सीमित संसाधनों के साथ प्रारंभ किए गए। बीएस. डब्ल्यू पाठ्यक्रम के ष्लिए मानदण्ड 1974 में घोषित किया गया। इसका उद्देश्य पढ़ाई की गुणवत्ता पर नियंत्रण तथा जिम्मेदारी सुनिश्चित करना था। उसके पश्चात प्रत्येक दशक में सी.एस.डब्ल्यू.ई. द्वारा संशोधित संस्करण प्रकाशित किया जाता रहा। इसके तहत कार्यक्रमों को व्यवस्थित करने वाले निर्देश सम्मिलित किए गए जैसे- किस प्रकार के संसाधनों की जरूरत है, समाज कार्य अभ्यास से संबंधितशैक्षणिक विषय के मूल्यांकन के लिए मापदण्ड, सामाजिक वातावरण में मानवीय व्यवहार, समाजिक नीति, शोध कार्य तथा इससे जुड़े समस्त क्षेत्र। इसके अलावा यह भी सुनिश्चित करना था कि सामाजिक एवं आर्थिक न्याय के पहलू भी समाजकार्य पाठ्यक्रम के अंतर्गत सम्मिलित होने चाहिए। साथ ही साथ संवेदनशील एवं असुरक्षित सामाजिक समूहों पर भी ध्यान दिए जाने की आवश्यकता है।

1950 ई. से पहले समाजकार्य शिक्षा में सिर्फ दो डाक्टरेट उपाधि से संबंधित पाठ्यक्रम थे लेकिन यद्यपि क्लीनिकल डाक्टरेट की उपाधि के लिए अन्य प्रोग्राम भी है लेकिन ये प्रोग्राम विशेष रूप से शोध संबंधी दक्षता से संबंधित है तथा ये समाजकार्य के क्षेत्र संबंधित विद्वानों को तैयार करते हैं जो विशेष रूप से BSW और MSW स्तर तक के विद्यार्थियों को पढ़ाने का कार्य करते हैं। डाक्टरेट की उपाधि से संबंधित पाठ्यक्रम में प्रवेश लेने के लिए एम.एस. डब्ल्यू की उपाधि होना जरूरी है परन्तु एम.एस.डब्ल्यू. में प्रवेश हेतु बी.एस.डब्ल्यू. की उपाधि की अनिवार्यता नहीं है। समाजविज्ञान, राजनीति विज्ञान, अर्थशास्त्र, मनोविज्ञान एवं मानव विकास विषय के पाठ्यक्रम के लोग भी एम एस. डब्ल्यू कर सकते हैं। उच्च

स्तरीय एम.एस.डब्ल्यू पाठ्यक्रम के लिए बी.एस.डब्ल्यू उपाधि की आवश्यकता होती है। एम.एस.डब्ल्यू से संबंधित सभी क्षेत्रों में व्यावहारिक प्रशिक्षण प्राप्त करना पड़ता है।

सी.एस.डब्ल्यू ई की वेबसाइट से प्राप्त जानकारी के अनुसार वर्ष 2006 ई. तक 458 मान्यता प्राप्त बी.एस.डब्ल्यू प्रोग्राम, 181 मान्यता प्राप्त एम.एस.डब्ल्यू प्रोग्राम तथा 69 डॉक्टोरल प्रोग्राम अमेरिका के कॉलेजों व विश्वविद्यालय में चल रहे थे। इन संस्थाओं में 27 हजार से ज्यादा बी.एस.डब्ल्यू के, 25 हजार से ज्यादा एम.एस.डब्ल्यू के विद्यार्थी तथा 1600 डाक्टरेट प्रोग्राम के विद्यार्थी अध्ययनरत थे। स्नातक स्तर के विद्यार्थी सबसे अधिक बाल कल्याण के क्षेत्र में कार्य करना चाहते थे। इसके बाद पारिवारिक सेवा, विद्यालय समाजकार्य को वरीयता देते थे। परास्नातक स्तर पर सर्वाधिक विद्यार्थीयों की रूचि, मानसिक स्वास्थ्य कार्यक्रम में थी उसके बाद बालकल्याण, परिवार सेवा तथा विद्यालय अध्ययन के कार्यों में रूचि थी।

2.3 समाजकार्य शिक्षा में विश्वस्यापी मानदण्ड का उद्भव

समाजकार्य शिक्षा में विश्वव्यापी मानदण्ड का उद्भव आई. ए. एस. एस. डब्ल्यू. IASSW एवं IFSW के संयुक्त प्रयास से व्यापक व गहन संचालन प्रक्रिया के फलस्वरूप हुआ। जिसके कारण वैश्विक स्तर पर ग्लोबल स्टेंडर्स फार द एजुकेशन एण्ड ट्रेनिंगऑफ द सोशल वर्क प्रोफेशन जैसे दस्तावेज का उद्भव हुआ। यह दस्तावेज कई स्थानों पर पूर्णतः उपलब्ध व प्रकाशित है। सी पाउल ने विश्वव्यापी मानदण्डों की अधिकांश चुनौतियों के दस्तावेजीकरण के क्रम में इतनी स्पष्टव्याख्या की ताकि सदस्य देश सहमत हो जाएं। इसमें स्पष्ट रूप से कहा गया है कि यह वर्तमान स्तर का एक जटिल व भावात्मक दृष्टिकोण से बहस किए गए पहलुओं पर एक सहमति या समझौता है समाज कार्य के मानदण्ड के विकास कार्य को चुनौतीपूर्ण ढंग से दर्शाया गया है इसका कारण यह है कि स्वदेशीकरण विश्वव्यापकता तथा साम्राज्यवादी सिद्धांतों को सांस्कृतिक नजरिए से समझा गया। विश्वासों एवं क्रियाकलापों की एक व्यवस्था जो विभिन्न स्तरों पर बोधगम्य हो तथा जिसमें कला, नैतिकता, नियम, कानून तथा प्रचलित व्यवहार जो सामाजिक संस्कृति में निहित है इन सबको सम्मिलित रूप से संस्कृति के नाम से संबोधित किया जाता है। राजनीतिक विचारधारा भी संस्कृति के अंतर्गत समाहित है। जिसके आधार पर कोई समूह या समुदाय अपने को राष्ट्र या राष्ट्र के नागरिक के रूप में परिभाषित करता है। संस्कृति यहपहचान का साधन बन गया है। सामाजिक संगठन की गतिशीलता को बनाए रखा है साथ ही साथ यह एक फ्रेमवर्क के रूप में कार्य करता है एवं यह निर्णय करता है कि किसी विचार या क्रियाकलाप को स्वीकार किया जाए या उसको जोखिम समझा जाए। संस्कृति को समझना बहुत आसान है। संस्कृति एक स्थिर समझौता नहीं करने वाले गुणों , रीतिरिवाजों व क्रिया-कलापों का समूह है जो समुदाय को यह आदेश देता है कि वह वैसा ही व्यवहार करे जैसा कि उनसे अपेक्षा की जाती हैं।संस्कृति समुदाय को एक सूत्रमें बांधे रखती है।

फिर भी यह गतिशील है। समुदाय या समूह के विभिन्नसदस्य इस बार प्रभाव डालने एवं नियंत्रण करने हेतु आपस में संघर्ष करते हैं

विश्वव्यापकता तथा स्वदेशीकरण की अवधारणा समाज कार्यशिक्षा को निर्देशित करने वाले सिद्धांतों को पहचानने एवं उस पर सहमत होने की प्रक्रिया के लिए महत्वपूर्ण हो जाते हैं विश्व व्यापकता या सार्वभौमिकता को ऐसे उभयनिष्ट सामान्य सिद्धांतों की खोज करने वाले विचार के रूप में समझा जा सकता है जिसका सिद्धांत उसके सांस्कृतिक संदर्भों एवं मतभेदों को पाटते हुए स्वीकार करने योग्य होता हैं। इन तथ्यों को समझने व इससे अवगत होने के बाद सर्वव्यापी मूल्यों एवं लक्ष्यों से जुड़े समाज कार्य व्यवसाय के संबंध में बहस करना संभव हो गया है। निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि स्वदेशीकरण की अवधारणा, वस्तुनिष्ठ विचारों को महत्वपूर्ण बनाने तथा किसी संस्कृति कीविशेषताओं को जानने का अच्छा माध्यम हैं इसलिए समाजकार्य की प्रकृति एवं क्रिया-कलाप को एक परिवेश से दूसरे परिवेश में आयतित करने की परिकल्पना को नए परिवेश के संदर्भ में उसकी महता का आलोचनात्मक परीक्षण किया जाता है। साथ ही उन राजनैतिक सिद्धांतों पर बल दिया जाता हैं जिसके तहत हम बाहरी या आयतित विचारों की उपयोगिता को देखते हुए उसे लागू करने का निर्णय करते हैं तब निश्चितरूप से यह ध्यान रखना चाहिए कि स्थानीय परिवेश के समाजकार्य शैक्षिक संस्थाएं एवं व्यवसायी जन अपने विचारों के प्रति पूर्ण सम्मान के अधिकारी होते हैं।

गते का कहना है कि जब मानदण्ड या मानकों का हम विकास कर रहे होते हैं तब साम्राज्यवाद से संबंधित विचारों तथ्यों का विश्लेषण व मूल्यांकन करने के बादही उपरोक्त पहलुओं कोसंतुलित करने वाली चुनौतियों को अपेक्षाकृत अच्छे ढंग से समझ कर इन विचारों की ओर संकेतमिलता है कि यह एक ऐसी प्रवृति है जो समाज कार्य के भिन्न स्थानीय व देशज सांस्कृतिकस्वरूप के ऊपर पश्चिमी जगत के दृष्टिकोण का समर्थन करती हैं। मंडेल उल्लेख करते हुए कहते हैं कि भारत में समाज कार्य शिक्षा के उद्भव से संदर्भित उपरोक्त बातें हैं। इस तरह यह निर्धारण अत्यधिक महत्व के साथ किया कि भारतीय शोधकर्ताओं को ही प्रशिक्षक के रूप में अमेरिकी समाज कार्य शिक्षा का विकास करना पड़ा हैं यह 1947 ई. तक यानी स्वतंत्रता प्राप्ति तक माना जाता रहा। अमेरिकन पुस्तकों एवं जर्नलों में व्यापकरूप से भारतीय समाज कार्य शैक्षिक संस्थानों से संबंधित तथ्यों का उल्लेख एवं उपयोग किया गया। आईएफ. एस. डब्ल्यू तथा आई.ए.एस.एस.डब्ल्यू के सदस्यों ने इन अवधारणाओं कोध्यान में रखते हुए एक प्रारूप तैयार किया तथा समाजकार्य की अंतर्राष्ट्रीय परिभाषा को मूर्तरूप देने की कोशिश की।

यह परिभाषा है- समाजकार्य व्यवसाय सामाजिक परिवर्तन को बढ़ावा देता है, मानवीय संबंधों से उत्पन्न समस्या का समाधान करता है तथा मानव कल्याण में बढ़ोतरी के लिए लोगों को सशक्त बनाता है तथा उनकी स्वतंत्रता का समर्थन करता है। समाजकार्य, मानवीय व्यवहार एवं सामाजिक व्यवस्था से संबंधित सिद्धांतों का प्रयोग करते हुए उन बिदुओं पर हस्तक्षेप करता है जहां लोग अपने आस-पास की

परिस्थितियों से संपर्क स्थापित करते हैं। मानवाधिकार व सामाजिक न्याय के सिद्धांत समाजकार्य के आधरभूत तत्व हैं।

उपरोक्त परिभाषा एवं समस्त कथन, सिद्धांत आदि भविष्य में संशोधित एवं पूर्ण संशोधित होते रहेंगे और यह लंबे समय तक चलता रहेगा जब तक कि यह माना जाए कि अब इसका स्वरूप स्थाई हो गया है।

उपरोक्त मानदण्ड समाजकार्य की विश्वव्यापी प्राथिमिकताओं से संबंधित हस्तक्षेप पर विशेष बल देता है तथा इसमें सम्मिलित विचार या दृष्टिकोण निम्नांकित विशेषताओं को संबोधित करते हैं सामाजिक समर्थन, विकासात्मक कार्य, सुरक्षा कार्य, सीमांत व्यक्ति तथा सामाजिक रूप से अलग-थलग पड़े लोग तथा दलित पीड़ित वर्ग के लोगों के लिए चिकित्सा संबंधी सुविधाएं मुहैया कराने का कार्य।

उपरोक्त मानदण्डों के केन्द्रीय विषय में निम्नलिखित का समावेश हैं-

- कार्यक्रम के उद्देश्य व परिणाम
- संस्था का मुख्य उद्देश्य या शिष्टमण्डल का कथन।
- कार्यक्रम के पाठ्यक्रम (क्षेत्र कार्य के व्यावहारिक अनुभव के साथ)
- मुख्य पाठ्यक्रम
- प्रशिक्षित कर्मचारी
- संगठन प्रशासन अधिकार एवं संसाधन
- सांस्कृतिक एवं सैद्धांतिक विविधता एवं लैंगिक समानता।
- समाजकार्य के आचार संहिता तथा मूल्यों को मुख्य पाठ्यक्रम के निर्धारण में शैक्षिक संस्थानों को उन तत्वों या तरीकों की पहचान करनी चाहिए जो स्थानीय क्षेत्रीय राष्ट्रीय एवं अंतराष्ट्रीय स्तर के प्राथमिकताओं के प्रति सम्मानजनक दृष्टिकोण रखते हैं।

समाज कार्य शिक्षा के विश्वव्यापी मानदण्डों के निर्धारण में चार संकल्पनात्मक क्षेत्र निम्न हैं-

- समाजकार्य व्यवसाय में मानव व्यवहार व सामाजिक वातावरण का विकास भी सम्मिलित है।
- समाजकार्य शिक्षा को मानवीय क्रिया कलाप विकास एवं संस्कृति सामाजिक मान्यताएं, धर्म तथा रीति-रिवाज प्रत्येक स्तर पर कैसे प्रभावित करते हैं।
- समाजकार्य व्यवसायी या अभ्यास कर्ता वैसे व्यक्तियों के विकास पर बल देता है जो सूक्ष्मता से अपने विचारों का परीक्षण करने वाला तथा परीक्षणी अभ्यास कर्ता हो यह व्यवसाय आधारित मूल्यों तथा कार्यरत कर्मचारियों के कल्याण व दक्षता के विकास पर

बल देते हुए उनको भी उत्तरदायित्व सौंपने की मानसिकता रखते हुए समाज कार्य व्यवसाय का संचालन करते हैं।

- कार्यकुशलता, अनुमान लगाने की योग्यता, संबंध स्थापित करने तथा सहायता करने का गुण, शोध एवं सेवाकार्य का समर्थन, मान सम्मान का आदान प्रदान, व्यवस्था से भिन्नमेल-मिलाप, किसी को समर्थन या वकालत का गुण, क्षमता निर्माण एवं सशक्तिकरण पर ध्यान, सभी मनुष्य की योग्यता, प्रभाव तथा उपयोगिता की स्वीकार्यता आदि समस्त गुण समाजकार्य के क्रिया कलाप के अंतर्गत सम्मिलित है।

2.4 समाजकार्य ज्ञान के स्वदेशीकरण के सांकेतिक विचार

सार्वभौमिकता से परिवर्तित सांस्कृतिक संदर्भों के विचारों से निकाले गए समाज कार्य ज्ञान व दक्षता की मुख्य अवधारणों को स्वीकार करने के प्रयासों की संभावनाओं को जटिलताओं एवं संवेदनशीलता संबंधी धारणाओं द्वारा चुनौती प्रदान की गई। वैश्विक मानको या मानदण्डों के चारित्रिक गुणों का निर्माण उदारता, संतुलित मानव अधिकार, संबंधित ऐतिहासिक संदर्भ में सामाजिक न्याय, सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक संदर्भों से जुड़े विशिष्ट परिवेशों में हुआ है। राष्ट्र से संबंधित एवं राष्ट्रीय संदर्भ से भिन्न संवादों की निरंतरता को समझना अत्यंत महत्वपूर्ण है।

इतनी गंभीरता से ध्यान दिए जाने के बावजूद भी व्यक्ति या किसी वर्ग की आवश्यकताओं के संदर्भ में गलत अर्थ निकाले जाने का जोखिम बहुत बड़ा हो सकता है, यदि सामाजिक कार्यकर्ता उस व्यक्ति वर्ग या सामाजिक समूह की पृष्ठभूमि के बारे में नहीं जानता। मानकों के फुटनोट में इसके बारे में स्पष्ट कहा गया है कि जब सांस्कृतिक संवेदनशीलता, सांस्कृतिक योग्यता पर आधारित क्रिया कलापों में सहयोग करती है तब स्कूलों को निश्चित तौर पर उन संभावनाओं के प्रति सचेत रहना चाहिए जोसमूह के परिवर्तनीय विचार को सुदृढ़ बनाते हैं। स्कूल को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि समाजकार्य के विद्यार्थी किसी व्यक्ति विशेष के विचार या अनुभव को पूरे समूह के लिए उपयुक्त न समझें। स्कूल को समूह के उभयनिष्ठों एवं अंतर्सामूहिक असमानताओं तथा समानताओं पर विशेष तौर से ध्यान देना चाहिए।

जब सामाजिक कार्यकर्ता, विपरीत परिस्थिति में जीवन-यापन करने वाले लोगों को सशक्त करना चाहता है उस समय ये मुद्दे विशेष रूप से महत्वपूर्ण हो जाते हैं। सामाजिक कार्यकर्ता ऐसे लोगों के नैतिक, पारंपरिक एवं सांस्कृतिकमुद्दो को किस अर्थों में समझता है तथा इनके जरूरतों के प्रति किस प्रकार की प्रतिक्रिया व्यक्त करता है? विश्वव्यापी समाजकार्य शिक्षा मानक भी यह आश्वासन नहीं दे पाता है कि यह पूर्णतः सही मार्ग दर्शन एवं स्थिर व्यवहार उपलब्ध करा सकता है।

डोमीनेली का इस संदर्भ में कहना है कि छोटी-छोटी भिन्नताएं जैसे प्रयोग की भाषाओं में बहुत मौलिक या सूक्ष्म अंतर होता है। यह छोटा या मामूली अंतर भी संस्कृति के अंतर्गत निहित तथा संस्कृति से भिन्न आपसी संचार व्यवस्था को नुकसान पहुंचा सकता हैं अतः दूसरे की इच्छा एवं आवश्यकताओं को स्पष्ट

रूप से नहीं जाना जा सकता। अंततः हम कह सकते हैं कि समाज कार्य के प्रत्येक शिक्षक एवं विद्यार्थियों की प्रत्येक मामलों एवं परिवेशों को ध्यान में रखकर उस पर विचार करते हुए अपनी नैतिक जिम्मेदारी को समझना चाहिए तथा अपनी योग्यता व क्षमता के मुताबिक प्रत्येक मामलों में उचित कार्यवाही करनी चाहिए।

2.5 एशिया व भारत के संदर्भ में उदाहरण

एशिया प्रशांत क्षेत्र में समाज कार्य शिक्षा, प्रशिक्षण तथा संबंधित मानकों से संबंधित अध्ययनमें पाया गया कि उपरोक्त मानदण्ड इतने उपयोगी थे कि इनके सहयोग से समाजकार्य की संभावनाओं के बारे में समझने में सफल हुए तथा उनसे ठोस आश्वासन पाने में भी सफल हुए। इनके माध्यम से इस क्षेत्र में समाज कार्य पाठ्यक्रम का विकास तथा विस्तार कर सकते थे। लेकिन इस बात की सर्वसम्मति नहीं हो पाई कि यहां पर समाज कार्य शिक्षा में पाश्चात्य विचार एवं क्रियाकलाप प्रभावकारी हैं तथा उसके जोखिम को कैसे समाप्त किया जाए? इसके अतिरिक्त संयुक्त विचारधाराओं एवं क्रिया कलापों को लागू करके देखा गया तो पाया गया कि एक अलग किस्म की साम्राज्यवादी विचारधारा अस्तित्व में आने लगी।

भारत में समाजकार्य शिक्षा पर सबसे अधिक प्रभाव अमेरिका का रहा हैं उदाहरणस्वरूप जब पहली बार मुंबई में सर दोराब जी टाटा ट्रस्ट द्वारा 1936 में स्कूल स्थापित किया गया उस समय क्लीफोर्ड मंसर्डट इसके संस्थापक निदेशक थे तथा उन्हीं के नाम पर इस स्कूल का नाम टाटा इंस्टीट्यूटऑफ सोशल साइंसेज क्लीफोर्डमंसर्डट रखा गया। क्लीफोर्ड मंसर्डट एक अमेरिकन मिशनरी से संबंधितथे जिनके पास अमेरिका और भारत दोनों के समाजकार्य से संबंधित अनुभव था। सामान्य पाठ्यक्रम जिस पर स्वतंत्रता पूर्व से पहले बल दिया जाता था वह कुछ क्षेत्रों को सम्मिलित करते हुए विकसित हुआ। इसके अंतर्गत मानसिक एवं शारीरिक स्वास्थ्य से संबंधित विशेषीकृत समाजकार्य, महिला एवं बाल कल्याण, अपराध शास्त्र एवं प्रशासकीय सुधार, सामूहिक कार्य, सामुदायिक संगठन, श्रमिक कल्याण व औद्योगिक संबंध इत्यादि क्षेत्र में अमेरिका में स्थापित प्राथमिकताओं, सामाजिक प्रकरणों पर आधारित समस्याओं के समाधान पर बल दिया जाता था तथा सामाजिक आर्थिक विकास की बुनियादी आवश्यकताओं पर कम ध्यान दिया जाता था।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत में इस पद्धति को अनुपयोगी माना पाया तथा यह देखा गया कि भारत की जरूरतें पश्चिमी विकसित देशों की जरूरतों एवं आवश्यकताओं से भिन्न है। एम़एस. गोरे का कहना है कि भारतीय समाजकार्य शिक्षा प्राय अपने आपको दरिद्रता के परिणाम के रूप से दर्शाती है लेकिन दरिद्रता के उत्पन्न होने के मूलभूत कारणों की व्याख्या नहीं करती। इसके अतिरिक्त अन्य कारण मौजूद है वह है यहां के सामाजिक कार्यकर्ताओं की पृष्ठभूमि। ये पृष्ठभूमि भी समाजकार्य को प्रभावित करती थी भारतीय सामाजिक कार्यकर्ता छोटे शहरों एवं मध्यम वर्गीय परिवार से संबंधित थे। ये लोगों की समस्याओं का

स्थाई हल ढूंढने में नहीं बल्कि उनकी गरीबी को दूर करने के लिए तात्कालिक दवा के रूप में वस्तुओं रूपयों आदि से सहायता करते थे। सामाजिक कार्यकर्ता शहरी क्षेत्रों में समाजसेवा के कार्य को रोज़गार के रूप में देखते हुए कॅरियर बनाने की इच्छा रखते थे अर्थात वे अन्य व्यवसाय की भांति इसे भी रोज़गार की तरह मानते थे। अतः हम कह सकते हैं कि एक देश में अलग-अलग सोच वाले व्यक्ति रहते हैं तथा उनकी सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि में काफ़ी अंतर होता है। यह अंतर समाजकार्य शैक्षिक मानक के संदेशीकरण हेतु महत्वपूर्ण चुनौती के रूप में मालूम होता हैं।

जे. निम्मागड्डा एवं पी आर. बालगोपाल ने सांस्कृतिक बंधनों से मुक्त एवं सफलतापूर्वक स्वीकार किए गए समाजकार्य संबंधी सिद्धांतों का एक उदाहरण दिया है। उन्होंने बताया कि भारत में प्रारंभ में नशा मुक्ति हेतु अमेरिकी सिद्धांत को लागू किया गया था। लेकिन कुछ प्रयोगों के बाद यह स्पष्ट हो गया कि एक वातावरण के सफलतापूर्वक लागू सिद्धांत या तकनीक को बिना किसी सुधार के दूसरे वातावरण में सफलतापूर्वक लागू नहीं किया जा सकता। इसका उदाहरण यह है कि पश्चिमी देशों में शराब पीने में संयम बरतने की व्यक्तिगत स्तर की तकनीक सफलतापूर्वक लागू है। लेकिन भारत में संयुक्त परिवार व्यवस्था में यह तकनीक उतनी सफल नहीं हुई। इस आरोपित तकनीक के असफलता के फलस्वरूप भारत में समाजिक कार्यकर्ता इसकी रोकथाम हेतु अपनी जागरूकता का विश्लेषण करने लगे।

समाजकार्य व्यवसाय में संस्कृति निर्माण के इस कार्य ने आगे का मार्ग प्रशस्त किया तथा इसके लिए ग्रुप थेरेपी तकनीक, जो भारतीय परिवेश के हिसाब से अनुकूल है, सम्मिलित हुई। सामाजिक कार्यकर्ता यह विशेष रूप से जानते हैं कि समूह के नेता की इच्छा ज्यादा प्रभावकारी होगी। यदि समूह का नेता अपने सदस्यों को समझाएगा तो सदस्यों पर इसका गहरा असर पडेगा। भारतीयों की इसी मनोशक्तियों को ध्यान में रखकर सामाजिक कार्यकर्ताओं ने प्रत्येक सत्र में नेताओं को समझाने हेतु सामाजिक शिक्षाओं का प्रयोग किया। बाद में ये सामाजिक कार्यकर्ता ज्ञान बांटने वाले गुरू के रूप में दिखाई देने लगे। सामाजिक कार्यकर्ताओं ने परिवारों के साथ व्यक्तिगत संबंध बनाया तथा 50 मिनट की सलाह की जगह विभिन्न मुद्दों पर सलाह हेतु अधिक समय देने के लिए तैयार हो गए।

अंत में सामाजिक कार्यकर्ताओं ने अमेरिका के 12 स्टेप मॉडल के कठोर नियमों का पालन करना छोड़ दिया। उन्होंने अपनी कार्यक्षमता एवं अनुभव के आधार पर एक ऐसी पद्धति को स्वीकार किया जो कि सेवार्थी परिस्थिति के अनुसार अधिक योग्य थी। कठिन परिस्थितियों में स्वयं प्रतिक्रिया देने की इस क्षमता ने सेवार्थी की अच्छी तरह से सेवा करने के लिए एक आधार उपलब्ध कराया तथा भारतीय समाजकार्य के ज्ञान के जुड़कर ज्ञान के आधार को मजबूती प्रदान की।

व्यावसायिक समाज कार्यकर्ताओं को हमेशा जागरूक रहते हुए यह ध्यान देना चाहिए कि किसी देश में लागू सुधारवादी तकनीकी को अगर अपने देश में लागू किया जाएगा तो इसका असर देश के क्रियाकलापों एवं पीढ़ियों पर क्या पडेगा? कुछ मुद्दे ऐसे भी होते हैं जिनका प्रभाव देश की सीमा के बाहर

भी पड़ता है , जैसे- एड्स, अंतरराष्ट्रीय अपराध जैसे आतंकवाद, अवैध प्रवासन, आर्थिक व व्यापारिक नीतियां, पर्यावरण के मुद्दे जो प्रत्येक व्यक्ति एवं समाजों से संबंधित होते हैं।
औपनिवेशिक काल के बाद समाजकार्य की मांग थी कि पाश्चात्य प्रभाव वाले क्षेत्रों में जहां विचारों को दमित कर दिया गया था, उन विचारों को पुनः जागृत करता था। उनके एजेण्डे का केवल यह उद्देश्यनहीं था कि केवल व्यक्तिगत और सामाजिक परिवर्तन, सामाजिक विविधता एवं सिद्धांतों को ही बढ़ावा दिया जाए बल्कि इसका पुनर्संशोधन में सहयोग उपरोक्त विचारधारा को ध्यान में रखकर किया जाए ताकि यह सकारात्मक रूप से आगे बढ़ सके तथा पहले से स्थापित शासन संबंध अव्यवस्थितहो जाएगा जो कि पहले से प्रभावशाली समाज कार्य विचारधारा से संबंधित था।

2.6 सारांश

प्रस्तुत इकाई के अंतर्गत अमेरिका में समाज कार्य शिक्षा के ऐतिहासिक विकास की चर्चा भी गई है। अमेरिका में समाज कार्य शिक्षा का विकास वहां के शैक्षणिक संस्थाओं में समाज विज्ञा के विकास के माध्यम से हुआ। महिलाओं ने परिवारों से बाहर आकर नई भूमिकाओं का निर्वहन विभिन्न संगठनों के माध्यम से किया। संगठनों की जरूरतों को पूरा करने हेतु प्रशिक्षित कार्यकर्ता तथा पाठ्यक्रमों की आवश्यकता हुई। प्रशिक्षित कार्यकर्ताओं की आवश्यकताओं को महिलाओं ने पूरा किया तथा उनकी नई भूमिका समाज में तय की गई। 1830 के अंत में पहला प्रशिक्षण स्कूल स्थापित हुआ।1919 से 1930 के दशक में स्नातक स्तरीय एवं विश्वविद्यालय स्तरीय समाजकार्य पाठ्यक्रमों की संख्या में तेजी से वृद्धि हुई तथा 1942 तक निम्न स्तरीय समाज कार्य पाठ्यक्रम से संबंधित34 कार्यक्रम स्थापित किए गए। समाज कार्य शिक्षा परिषद 1952 में स्थापित हुआ तथा यह 1970 से इस परिषद ने स्नातक स्तरीय तथा परास्नातक स्तरीय पाठ्यक्रमों तथा मानकों को मान्यता प्रदान करना आरंभ किया। बहुत से डाक्टरेट प्रोग्राम भी शुरू किए गए। साथ ही साथ इस अध्याय में समाज कार्य के वैश्विक विचार एवं एशिया तथा भारत के संदर्भों में समाज कार्य शिक्षा के उदभव, उस पर अमेरिकी समाज कार्य प्रभाव तथा भारत में पुनः अपने स्तर से सिद्धांतों एवं तकनीक के निर्माण आदि की चर्चा की गई है। समाज कार्य व्यावसायिक शिक्षा में शिक्षा एवं प्रशिक्षण संबंधी विश्वव्यापी मापदण्ड का विकास सार्वभौमिकता तथा संस्कृति तत्वों से जुड़े सिद्धांतों को ध्यान में रखकर किया गया। व्यावसायिक समाज कार्य प्रशिक्षक एवं समाज कार्य व्यावसायिक अपने देश की आवश्यकता तथा वास्तविकता तथा आवश्यकता दोनों को दर्शाता है।

2.7 बोध प्रश्न

1. अमेरिका में समाजकार्य के ऐतिहासिक विकास को समझाइए।
2. समाज कार्य शिक्षा में विश्वव्यापी मानक का विकास क्यों चुनौतीपूर्ण था? स्पष्ट करें।
3. अमेरिका में समाज कार्य के शैक्षिक विाकस एवं वृद्धि को रेखांकित करें।

4. सांस्कृतिक संवेदनाशीलता के व्यावहारिक समस्याओं का उल्लेख करें

2.8 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

1) डोमीनेल्ली, एल. (2004). क्रसिंग इंटरनेशनल डिवाइड लैंग्वेज एंड कम्युनिकेशन विदिन इंटरनेशनल सेटिंग *सोशल वर्क एजुकेशन.* 23(5), पृ 515 – 525

2) नोबल, सी. (2004). सोशल वर्क एजुकेशन, ट्रेनिंग एंड स्टेण्डर्डस इन द एशिया पैसेफिक रोजन. *सोशल वर्क एजुकेशन.* 23(5), पृ. 493 – 513

3) सीपाडल, वी (2004). ग्लोबल स्टैण्डर्ड फॉर सोशल वर्क एजुकेशन एंड ट्रेनिंग *सोशल वर्क एजुकेशन.* 23(5), पृ. 493 – 513

4) ऑस्टिन डी. एस. (1997). द इंस्टीट्यूशनल डवलपमेंट ऑफ सोशल वर्क एजुकेशन: द फर्स्ट 100 ईयर्स एंड बियोंड, *जर्नल ऑफ सोशल वर्क एजुकेशन.* 33. पृ. 599 – 612

ज्ञान शांति मैत्री

इकाई 3
दूरवर्ती शिक्षा के माध्यम से समाजकार्य शिक्षा

इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य
3.1 प्रस्तावना
3.2 समाज कार्य में दूरवर्ती शिक्षा
3.3 दूरवर्ती शिक्षा पर समाज कार्य में शोध
3.4 सारांश
3.5 बोध प्रश्न
3.6 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

3.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप -

1) मुक्त विश्वविद्यालय के ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य का वर्णन कर सकेंगे।
2) समाजकार्य में दूरवर्ती शिक्षा के इतिहास को रेखांकित कर सकेंगे।
3) दूरवर्ती शिक्षा में समाज कार्य शोध की व्याख्या कर सकेंगे।

3.1 प्रस्तावना

दूरवर्ती शिक्षा के माध्यम से उपाधि प्रदान करने वाला पहला विश्वविद्यालय 'दी ब्रिटिश ओपेन यूनिवर्सिटी' था। इसकी स्थापना 1969 ई. में की गई थी। इसकी स्थापना का उद्देश्य यह था कि दूर शिक्षा प्रविधि वैसे लोगों को गुणवत्ता युक्त उच्च शिक्षण उपलब्ध करा सकती है जिनको विश्वविद्यालय परिसर या कॉलेजों में नियमित उपस्थित होने का अवसर नहीं है तथा जो लोग किसी कारण वहां उच्च शिक्षा ग्रहण नहीं कर पाए हैं। वे लोग अपने कार्यों को करते हुए अच्छी शिक्षा ग्रहण कर सकते हैं।

एक 'टैली यूनिवर्सिटी' हेतु प्रस्ताव पारित करने का श्रेय इंस्टीट्यूटऑफ इलेक्ट्रिकल इंजीनियर्स के आर सी जी विलियम्स को जाता है। उन्होंने टेली युनिवर्सिटी के प्रस्तावों को प्रसारित व्याख्यानों, परस्पराचारित सामग्रियों तथा विश्वविद्यालयों में वैयक्तिक भ्रमणों के माध्यम से संयोजित किया, जिसने ब्रिटिश ब्रॉड कास्टिंग कार्पोरेशन (बी.बी.सी.) तथा शिक्षा मंत्रालय के पदाधिकारियों को प्रभावित किया। अंतराभिमुखी श्रमिक दल के एक अध्ययन समूह ने'यूनिवर्सिटी ऑफ दी एअर' प्रस्तावित किया। लेकिन उपाधि प्राप्त करने हेतु टेलीविजन एवं दूरदर्शन के समक्ष बैठे रहने की ललक ग्रेट ब्रिटेन में अग्रदूत का कार्य नहीं कर सकी जबकि शैक्षिक सामग्री का दूरदर्शन प्रसारण, संयुक्त राज्य अमेरिका तथा सोवियत

संघ में भी किया गया था। यू. के. (इंग्लैण्ड) में एक सलाहाकार समिति का गठन किया गया। इस समिति ने एक श्वेत पत्र लिखा। इस श्वेत पत्र में 'यूनिवर्सिटी ऑफ दी एयर' नामक खुला विश्वविद्यालय के लिए विस्तत कार्य योजना तैयार की गई थी। लेकिन वहां उस ज्ञान की प्रमाणिकता तथा वास्तविकता पर प्रश्न चिह्न खड़े करने वाले अधिक लोग थे। इन लोगों ने सुझाव दिया कि यह विश्वविद्यालय एक जादूगरी विश्वविद्यालय है तथा इसके शिक्षण की गुणवत्ता कभी भी मानक विश्वविद्यालय के शिक्षण के गुणवत्ता की समान नहीं हो सकती। 1969 ई. में 'दी ब्रिटिश ओपेन यूनिवर्सिटी' के प्रथम कर्मचारी/अधिकारी वर्ग ने प्रथम आधार पाठ्यक्रमों के निर्माण का कार्य प्रारंभ कर दिया तथा 1975 ई. में पहली बार विद्यार्थियों को इसमें प्रवेश दिया गया।

1980 तक मुक्त विश्वविद्यालय में लगभग 5000 से अधिक विद्यार्थी थे तथा प्रत्येक वर्ष लगभग 6000 विद्यार्थी अपने उपाधियों के साथ स्नातक हो रहे थे। 1980 के दशक में विश्वविद्यालय पाठ्यक्रमों तथा विषय क्षेत्रों के संदर्भ में व्यापक विस्तार हुआ। विश्वविद्यालय ने शैक्षिक उपाधियों के समान ही व्यावसायिक प्रशिक्षण पाठ्यक्रमों को प्रदान करना आरंभ किया। कंप्यूटर केप्रयोग से अध्ययन प्रणालियां बहुमाध्यमी बहुसंचार माध्यमी से युक्त होने लगी। इस समय तक परास्नातक स्तर पर पंजीकरण की संख्या 20000 तब बढ़ गई। 1990 के दशक तक सर्टिफिकेट, डिप्लोमा तथा उपाधि कार्यक्रमों की संख्या बढ़ी। तीव्र गति से बदल रही प्रविधि के साथ मुक्त विश्वविद्यालय पूरे विश्व में खोले गए तथा ई-लर्निंग ने विश्वविद्यालयों को दुनिया के समस्त भागों में पहुचने में मदद की। फिर भी'दी ब्रिटिश ओपेन यूनिवर्सिटी' ने बी.बी.सी. के टी.वी. पर प्रसारण करना जारी रखा है। 1990 के दशक का मध्य इस समय में परिचायक/संचालक बना तथा विद्यार्थी सी. डी., आर.ओ.एम. तथा वेब बेस्ड आधारित सामग्रियों की खोज में थे। 1998 तक लगभग 2,00,0000 विद्यार्थी मुक्त विश्वविद्यालय से स्नातक हो चुके थे। इंटरनेट के विकास से मुक्त विश्वविद्यालयों का दायरा विस्तृत हुआ तथा लगभग 180000 से अधिक विद्यार्थी ऑन लाइन कक्षाएं ले रहे हैं।

उस 'यूनिवर्सिटी ऑफ दी एयर' द्वारा सुझाए गए पाठ्यक्रम यानि उस ज्ञान की प्रामाणिकता या वास्तविकता पर प्रश्न चिह्न लगाने वाले अब इस विश्वविद्यालय के शिक्षण मूल्यों से संतुष्ट हैं।

भारत में भी पहला मुक्त विश्वविद्यालय आंध्रप्रदेश में बना था। 1985 में संसद के एक विधेयक द्वारा 'इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय प्रारंभ किया गया। इस संस्था अर्थात् इग्नू के उद्देश्य हैं

1. उच्च शिक्षा के जनतंत्रीकरण हेतु शिक्षार्थी के दरवाजे अर्थात घर तक शिक्षा को पहुंचाना।
2. आयु, क्षेत्र एवं औपचारिक अर्हताओं का बिना विचार किए शिक्षा ग्रहण करने के इच्छुक समस्त लोगों को उच्च गुणवत्तायुक्त शिक्षा का लाभ प्रदान करना।
3. पाठ्यक्रमों को व्यावसायिक तथा व्यावसायिक उद्बोधन प्रदान कर आवश्यकता पर आधारित शैक्षिक कार्यक्रमों को उपलब्ध कराना।
4. दूरवर्ती शिक्षा में मानकों कोस्थापित करना तथा उसे बनाए रखना।

इग्नू राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय 'दी एसोसिएशन ऑफ इंडियन यूनिवर्सिटीज का एक सदस्य है। इंदिरा गांधी ने 'डिस्टेंस एजुकेशन कांउसिल' की स्थापना में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। यह कांउसिल भारत में दूरवर्ती शिक्षा हेतु मानक निर्धारित करती थी। लेकिन वर्तमान में इसे समाप्त कर दिया गया है। इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की देश भर में अध्ययन केन्द्रों कीसहायता से मानकपूर्ण उच्च शिक्षा उपलब्ध करा रहा है।

3.2 समाज कार्य में दूरवर्ती शिक्षा

सामान्य दूरवर्ती शिक्षा के समान ही समाज कार्य में भी दूरवर्ती शिक्षण प्रदान किया जा रहा है। प्रविधि में प्रोन्नयन के कारण समाज कार्य में दूरवर्ती शिक्षण विकसित हुई। विल्सन ने समाज कार्य में दूरवर्ती शिक्षा के विकास की तीन विभिन्न अवस्थाओं पर प्रतिवेदन लिखा है तथा इसको स्पष्ट किया है।

पहली अवस्था में उन्होंने परिसर विहिन कार्यक्रम का उल्लेख किया है जिसके तहत समाज कार्य की कक्षाएं दूर पाठ- स्थल या शिक्षकों द्वारा एक विश्वविद्यालय के मुख्य परिसर से निकल कर या स्थानीय समीपस्थ अनुदेशकों द्वारा पढ़ाई जाती थीं।

दूसरी अवस्था में प्रविधि एवं तकनीक पर ज्यादा जोरदिया गया जैसे 'इण्टरैक्टिव टेलीविजन' (आई. टी. वी.), 'वितरक शिक्षण' आदि।

तीसरी अवस्था वह है जिसमें आज वर्तमान में हम रह रहे हैं। जिसमें कम्प्यूटर आधारित शिक्षण प्रसिद्ध पा रहा है। इनमें से प्रत्येक अवस्था जब समाज कार्य शिक्षा की गुणवत्ता हेतु आगमित होती है उससे कुछ नयापन या नवीकरण तथा सावधानी की अपेक्षा की जाती है।

सैद्धांतिक रूप से वितरित शिक्षण विद्यार्थी तथा शिक्षक की स्थिति (एक दूरी से न कि आमने-सामने) तथा अभियांत्रिकी की मौजूदगी(जैसे सेटेलाइट ट्रांसमिशन, दूरदर्शन या कंप्रेस्ड वीडियो) द्वारा परिभाषित की जाती है।

कंम्प्यूटर से संचालित शिक्षण कक्षा के अंदर या बाहर कम्प्यूटरआधारित प्रविधि का रूप ले सकता है यह समकालीन हो भी सकती है और नहीं भी। पाठ्यक्रम का एक भाग पूरी कक्षा या समस्त पाठ्यक्रम कम्प्यूटर के माध्यम से व्याख्यायित किया जाता है। समाज कार्य शिक्षण पर साहित्य संकेत करते हैं कि वितरित तथा कंप्यूटर से संचालित समाज कार्यशिक्षण के समर्थक तथा आलोचक भी हैं। समाज कार्य शिक्षण से संबंधित अध्ययनों में पाया गया है कि विद्यार्थियों द्वारा आमनेसामने कक्षा शिक्षण को प्राथमिकता दी जाती है। इन अध्ययनों में कहा गया है कि विद्यार्थियों को प्रविधि, ज्ञानार्जन वातावरण, पुस्तकालयी लाभ तथा अन्य विद्यार्थी सेवाएँ या कक्षागत अंतक्रियाओं के साथ समस्या थी। कुछ लोगों का तर्क है कि एक-दूसरे के साथ अंतः क्रिया समाज कार्य का मूल्य है और व्यावसायिक सामाजीकरण तथा भूमिका निर्वहन की स्थापना व्यक्ति निहित होनी चाहिए। प्रभावकारी दूरवर्ती शिक्षण मेंकुछ चीजें

बाधक भी रही हैं जैसे कार्यक्रम को विकसत करने का खर्च, प्रविधिक समोन्नयन एवं पाठ्यक्रम निर्माण हेतु समय का अभाव आदि।

समाजकार्य में आई.टी.वी. तथा ऑनलाइन कक्षाओं के समर्थक है जो विद्यार्थियों की भौगोलिक परिस्थितियों या कार्य तथा परिवारिक जिम्मेदारियों के कारण अपनी पढ़ाई को नही कर पाते हैं की शिक्षा पर बल देते हैं। ग्रामीण या भौगोलिक रूप से अलग समुदायों के लिए दूरवर्ती शिक्षण एक महत्वपूर्ण विकल्प हो सकता है।

वैसे छात्र जो अपने स्वयं समुदाय की कक्षाओं में उपस्थित होते हैं उनकी यह कोशिश हो सकती हैकि वे अपने समुदाय में बने रहें तथा उसमें योगदान करे तथा उसी समय व्यावसायिक रूप से प्रशिक्षित कार्यकर्ताओं की आवश्यकता को पूरा करे। स्टॉक्स तथा फ्रैडोलिनो (2000) ने पाया कि दूर समाज कार्य कक्षा में अंतः क्रिया हेतु बढ़े अवसरों का परिणाम था पाठ्यक्रम में वृहत्तर संलिप्पता तथा छात्रों द्वारा अधिक सकारात्मक अनुभवों की अभिव्यक्ति जब उनकी तुलना उनसे की गयी जिन्होंने समोन्नत अंतः क्रियात्मक विकल्पों के बिना वही कक्षाएँ ली थी। दूरवर्ती शिक्षा की पढ़ाई छात्रों के बीच सहयोग और परस्परावलंबन ला सकती है। इस प्रकार यह पारस्परिक सहायता को बढ़ा सकती है। समाज कार्य काफ़ी लंबे अंतराल से मूल्यों, जैसे वैयक्तिकता एवं अनन्यता हेतु आदर पर आधारित रहा है। छात्र केन्द्रित पढ़ाई एक दूरी पर स्थान प्राप्त कर संचालित किया जा सकता है क्योंकि छात्र ''कब और कहां''पढ़े इसकी जिम्मेदारी लेते है। प्रविधि किसी व्यक्ति की स्वयं की पढ़ने की शैली को समुन्नत कर सकती है इसलिए यह आजीवन पठन को प्रोत्साहित करती है।

3.3 समाज कार्य में दूरवर्ती शिक्षा पर शोध

समाज कार्य के दूरवर्ती शिक्षा पर शोध कुछ दशकों में बढ़ा है। इन शोध अध्ययनों मेंआई. टी. वी. की प्रभाविकता का परीक्षण करने वाले अत्यधिक अध्ययन किए गए हैं जबकि कम्प्यूटर संबंधित/संचालित पाठ्यक्रमों पर शोध मंद गति से बढ़ रहा है। स्नातक स्तर पर एक संपूर्ण ऑनलाइन समाजकार्य पाठ्यवस्तु का मूल्यांकन करने वाला अध्ययन एस विल्के तथा विंटन ने उपलब्धकराया है। इन विभिन्न मूल्यांकनों के केन्द्र में यह निश्चित करने का प्रयास किया गया है कि छात्र एक दूरी से शिक्षा प्राप्ति के परिणाम विश्वद्यािलय या कॉलेज परिसर में नियमित पढ़ने वाले से तुलना करने योग्य है। दूरवर्ती शिक्षा का मूल्यांकन आम तौर पर व्यक्तिनिष्ठ पाठ्य वस्तु में पूर्व परीक्षण एवं उत्तर परीक्षण परिवर्तन की परीक्षा से सुसंगत होता है। आसानी से उनकी तुलना नहीं की जा सकती है क्योंकि वे विभिन्न पाठ्यवस्तुओं तथा प्रशिक्षकों पर ध्यान देते हैं। उदाहरणस्वरूप कुछ अध्ययनों में समान प्रशिक्षकों ने दूरवर्तीतथा नियमित दोनों कक्षाओं को पढ़ाया जबकि अन्यों में इनसे अलग प्रशिक्षक थे।

समाज कार्य शिक्षण में दूरवर्ती शिक्षण के प्रारंभिक अध्ययनों में आईटी.वी. की प्रभावोत्पादकता पर ध्यान केन्द्रित किया। बी. डॉल्टन (2001) द्वारा एक एफ.एम.एस.डब्ल्यू की प्रणालियों की कक्षा का

मूल्यांकन किया गया। इसमें उन्होंनें चार समूह बनाए दो परम्परागत नियमित कक्षा एक दूरवर्ती किंतु परिसर स्थित कक्ष में तथा एक आई. टी. वी. द्वारा व्याख्यान को देखते हुए की तुलना की थी। पैट्रची तथा पैचनर (2001) द्वारा एक एम. एस. डब्ल्यू के शोध प्रणालियों के पाठ्यक्रमों के मूल्यांकन में दो वर्षों तक नियमित छात्रों तथा आई. टी. वी. छात्रों की तुलना की गई थी। जनांकिकीय विशेषताओं के लिए नियंत्रण के बाद पूर्व परीक्षण तक परिवर्तनों पाठ्यवस्तु श्रेणियों तथा पाठ्यवस्तु मूल्यांकनों पर इन समूहों के बीच कोई अंतर देखने को नहीं मिला।

होलिस्टर तथा मैंकगी (2000) ने दूरवर्ती तथा नियमित छात्रों के बीच द्रव्य व्यसन तथा बाल कल्याण पाठ्यक्रमों में तुलनीय उपलब्धि प्राप्त की तथा उनके ज्ञानार्जन के स्वमूल्यांकन के संदर्भ में उन्होंने समूहों के बीच कोई अंतर नहीं पाया। नियमित छात्रों तथा आई. टी. वी. के छात्रों में सामाजिक नीति के स्नातक पाठ्यक्रम में दोनों में समान रूप से महत्वपूर्ण तरीके से समालोचनात्मक विचार कौशलों में संवर्द्धन ही हुआ। स्नातक स्तरीय समाजकार्य अभ्यास एवं कक्षा में श्रेणियों तथा प्रशिक्षकों के अवबोध के संदर्भ में भी परिसर स्थित नियमित छात्रों तथा दूरस्थ छात्रों के बीच कोई भी अंतर नहीं पाया गया। हागा तथा हीतकैम्प ने नियमित छात्रों तथा दूरस्थ छात्रों के बीच तुलनात्मक अध्ययन किया तथा उन्होंने अपने प्रतिवेदन में बताया कि उनमें भिन्नता हैं। उन्होंने स्नातक स्तरीय समाजकार्य उपाधि कार्यक्रम जो चार ग्रामीण स्थलों से संबंधित थे, नियमित छात्रों तथा दूरस्थ आईटी.पी. छात्रों में अंतर पाया गया। उन्होंने बताया कि दूरस्थ छात्रों में असंतोष व्याप्त था और यह असंतोष बुनियादी तौर पर प्राविधिक कठिनाईयों से संबंधित था। एक सप्तवर्षीय अनुगमन अध्ययन किया गया जिसमें दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रम के छात्रों को मुख्यतः ग्रामीण क्षेत्रों में सामाजिक कार्यकर्ता के रूप में नियुक्त किया गया। फ्रेड़ोलिनों तथा सदरलैण्ड ने अपने अध्ययन में आई. टी. वी. द्वारा पूर्णतः संचालित समाज कार्य पाठ्यक्रम एम एस. डब्ल्यू व अन्य मूल्यांकन में पाया कि ज्ञानार्जन समझ में परिसर स्थित या नियमित छात्रों तथा दूरस्थ छात्रों के बीच कुछ अंतर पाया गया। इसके अतिरिक्त समूहों में क्षेत्र एवं स्थानीयता के अवबोध तुलनीय थे।

समाज कार्य में ऑन लाइन शिक्षण की प्रभावोत्पादकता पर अध्ययन प्रकाशित होना शुरू हुआ है जबकि अन्य व्यावसायिक क्षेत्रों में उस विषय का आधार विकसित हो गया है। ऑनलाइन कक्षाओं में छात्रों की संलिप्तता का स्तर उनके शिक्षण के समझ को दुष्प्रभावित करता हुआ दिखाई पड़ता हैं दो समाज कार्य प्राध्यापक प्रोफेसर स्टॉक तथा फ्रेड़ोलीनों ने वर्ष 2000 में एक अध्ययन में पाया कि एक ऑन लाइन समाज कार्य शोध प्रणाली कक्षा में परिचर्चा के दौरान अंतः क्रियाशीलता का स्तर बढ़ा, तब छात्रों ने उस कक्षा परिचर्चा में अधिक सहभागिता की तथा पाठ्यक्रम को अधिक सकारात्मक रूप में देखा। स्टेट यूनिवर्सिटी फ्लोरिड़ा ने 2002 में एक सहकालिक पूर्णतः ऑनलाइन समाज कार्य में परास्नातक कार्यक्रम प्रारंभ किया। उस कार्यक्रम के मूल्यांकन पर एक लेख में बिल्के तथा विंटन(2006) में जनांकिकीय, शैक्षणिक विशेषताओं, ज्ञान, मूल्यों तथा कौशलों, क्षेत्र मूल्यांकनों पाठ्यक्रम तथा प्रशिक्षक मूल्यांकनोंहेतु पहले तथा बाद के परीक्षण के दौरान प्राप्त अंकों के संदर्भ में नियमित तथाऑन

लाइन अध्ययनरत छात्रों का तुलनात्मक अध्ययन किया तथा उन्होंने पहले परीक्षण परिणाम में देखा कि नियमित छात्रों की अपेक्षा अधिकतर ऑन लाइन अध्ययन करने वाले छात्रों ने अपनी स्नातक उपाधियां पहले अर्जित की। उनको काम का अधिक अनुभव था तथा उन्होंने प्रतिसप्ताह अधिक घंटे काम किया। बाद के परीक्षण के दौरान उन्होंने देखा कि ऑन लाइन तथा नियमित छात्रों को नैदानिक कौशल प्रदान किया गया तो दोनों छात्रों के अर्जितांक बढ़ गए। लेकिन एक अपवाद यह भी दिखा कि नियमित छात्रों की अपेक्षा ऑनलाइन छात्रों ने अपने पठन पाठन शिक्षण की सुसाध्यता को निरंतर आंका जबकि उनकी श्रेणियों, संपूर्ण पाठ्यक्रम तथा प्रशिक्षक मूल्यांकनों में कोई अंतर नहीं दिखाई दिया। अपने क्षेत्र प्रशिक्षकों द्वारा नौ में से चार क्षेत्रों में ऑन लाइन छात्रों को नियमित छात्रों से कमतर ऑका गया बांकी आंकलन यथावत उच्च थे।

अमेरिका में 56 समाजकार्य अध्यापकों, जिन्होंने वेष आधारित व्यक्तीय पाठ्यक्रम को प्राप्त किया था, एक के सर्वेक्षण में वेब आधारित शिक्षण को कम प्रभावकारी पाया गया था। सामाजिक वातावरण में मानव व्यवहार सामाजिक, नीति तथा शोध पर पाठ्यक्रम वेब आधारित ढॉचे के लिए अधिक उपयुक्त तथा अधिमानित था जबकि समाज कार्य अभ्यास कक्षाएं उपयुक्त था अभिबोधित थी।

समाजकार्य शिक्षण के वैश्वीकरण में समाजकार्य के ऑन लाइन अध्यापक ने सहायता प्रदान की है। फिर भी सामाजिक आर्थिक तथा राजनीतिक विचारधाराओं को समझने के संदर्भ में चुनौतियां अभी भी उसी रूप में हैं। समाज कार्य के बहुत से विभाग तथा महाविद्यालय भौगोलिक क्षेत्रोंसे परे लोगों को शिक्षित कर रहे हैं। उदाहरण के रूप में हम देख सकते हैं कि यूनिवर्सिटीऑफ हांग कांग तथा युनिवर्सिटीऑफ टैक्सास के शिक्षक, शंघाई में फ्यूडनू यूनिवर्सिटी के साथ छात्रों को मास्टर इन सोशल सर्विस मैनेजमेंट प्रदान करने में सहयोग कर रहे हैं।

विद्वान निष्कर्षतः कहते हैं कि प्रविधि आधारित शिक्षण प्रणालियों का उपयोग करने वाले समाज कार्य शिक्षण में अंतर्राष्ट्रीय सहयोग पर संकेन्द्रण करने वाले अधिक वर्णनात्मक शोध आधारित प्रकाशनों की आवश्यकता है।

3.4 सारांश

प्रस्तुत अध्याय में हमने समाज कार्य के दूरवर्ती शिक्षा के बारे में पढ़ा। सबसे पहले दूरवर्तीशिक्षण प्रारूप का उद्भव ग्रेट ब्रिटेन में दी ब्रिटिश ओपेन युनिवर्सिटी के माध्यम से हुआ। इसको बहुत सारे अवरोधों के बाद मान्यता प्राप्त हुई। कालांतर में दूरशिक्षा ने नवोन्मेबी शिक्षकों एवं तकनीकी उन्नयन से अपनी शिक्षण प्रणाली मे कई बेहतरीन प्रदर्शन किए। अपनी तमाम आलोचनाओं के बावजूद समाज कार्य के क्षेत्र में दूर शिक्षा ने अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

3.5 बोधप्रश्न

1. दूर शिक्षा के माध्यम से समाज कार्य पाठ्यक्रम के इतिहास पर प्रकाश डालिए।
2. समाजकार्य में दूरवर्ती शिक्षा में शोध पर प्रकाश डालिए।
3. ब्रिटेन में दूर शिक्षा के विकास का वर्णन कीजिए।

3.6 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

1) एबेल्स. पी. (संपा.)(2005). डिस्टेंस एजुकेशन इन सोशलवर्क : प्लानिंग, टीचिंग एण्ड लर्निंग. न्यूयार्क : स्प्रिंगर।
2) हॉगा, एम. एवं हीथकैंप, टी. (2000). ब्रिंगिंग सोशल वर्क एजुकेशन टू द प्रॉयरी जर्नल ऑफ सोशल वर्क एजुकेशन. 35. पृ. 309 – 324।
3) विल्के, एस. (1999). इंवाइटेड कमेंट्री : डिस्टेंस एजुकेशन एण्ड एक्रेडिटेशन. जर्नल ऑफ सोशल वर्क एजुकेशन. 35 पृ. 326 – 339।
4) थॉयर, बी. ए., अर्टिल्ड, टी, मॉर्कवर्ड, एम. के. एवं डोजियर, सी.डी. (1998). इवैलुएटिंग डिस्टेंस लर्निंग इन सोशल वर्क एजुकेशन : ए रीप्लिकेशन स्टडी. जर्नल ऑफ सोशल वर्क एजुकेशन. 34. पृ. 291 – 295।

ज्ञान शांति मैत्री

इकाई 4व्यावसायिक समाज कार्य के मूल्य, सिद्धांत और नैतिकता

इकाई की रुपरेखा

4.0 उद्देश्य
4.1 प्रस्तावना
4.2 व्यावसायिक समाज कार्य
4.3 व्यावसायिक समाज कार्य के मूल्य
4.4 व्यावसायिक समाज कार्य सिद्धांत
4.5 व्यावसायिक समाज कार्य में नैतिकता
4.6 सारांश
4.7 बोध प्रश्न
4.8 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

4.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन करने के पश्चात आप -

1) व्यावसायिक समाज कार्य के मूल्य से अवगत हो सकेंगे। साथ ही एन.ए.एस.डब्ल्यू. के कार्य-कलापों को जान सकेंगे।
2) व्यावसायिक समाज कार्य के सिद्धांतों का वर्णन कर सकेंगे।
3) व्यावसायिक समाज कार्य में नैतिकता की पहचान कर सकेंगे।

ज्ञान शांति मैत्री

4.1 प्रस्तावना

जहां समाज ने व्यक्ति को मानवीय अस्तित्व प्रदान किया है, वहीं समाज में निर्धनता, बेकारी जैसी विविध प्रकार की समस्याएँ भी उत्पन्न हुई हैं। इन समस्याओं के समाधान हेतु आदिकाल से ही प्रयास किए जाते रहे हैं। इन्हीं प्रयासों की क्षृंखला में समाज कार्य एक महत्वपूर्ण सामाजिक क्रिया एवं सामाजिक अनुकूलन के मार्ग में आने वाली सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक समस्याओं का वैज्ञानिक ढंग से समाधान प्रस्तुत करता हैं। समाजकार्य एक व्यावसायिक सेवा हैं। इसमें विविध प्रकार के वैज्ञानिक ज्ञान, प्राविधिक निपुणताओं तथा दार्शनिक मूल्यों एवं सिद्धांतों का प्रयोग किया जाता है। यह व्यावसायिक सेवा व्यक्ति को आवश्यकता के अनुसार प्रदान की जाती है। प्रस्तुत इकाई के माध्यम से छात्र/छात्राओं को समाज कार्य के मूल्य, सिद्धांत और नैतिकता के संदर्भ में समझाने का प्रयास किया जारहा है।

4.2 व्यावसायिक समाज कार्य

व्यवसाय शब्द का प्रयोग समान्यत: किसी रोज़गार, व्यापार अथवा कारोबार के संदर्भ में लगाया जाता है। परंतु वास्तव में व्यवसाय शब्द की उत्पत्ति अंग्रेज़ी के प्रोफेशन शब्दसे हुई है। प्रोफेशन शब्द लैटिन भाषा के प्रोफेटरी शब्द से बना है। प्रारंभ में इसका अर्थ जीवन संबंधी किसी बात के लिए'प्रतिज्ञा करने' अथवा किसी बात के संबंध में 'सार्वजनिक रूप से घोषणा करने से लिया किया जाता था'। तेरहवीं शताब्दी में व्यवसाय शब्द का अर्थ क्रमश: धार्मिक परायणता और शूरवीरता के आदर्श के प्रति धारणा में धीरे-धीरे परिवर्तन आया। आगे चलकर 16 वीं और 17वीं तक इसका अर्थ जीविका के संदर्भ में किया जाने लगा। वर्तमान समय में भी समान्यजन इसका अर्थ जीविका संबंधी क्रियाकलापों में ही लगाते हैं। तत्पश्चात विभिन्न विद्वानों के द्वारा व्यवसाय शब्द को परिभाषित करने का प्रयास किया जाने लगा। 1939 में मैरिस ने व्यवसाय को परिभाषित करते हुए कहा कि व्यवसाय एक व्यापार है, जो व्यक्ति से व्यक्ति के रूप में सभी के साथ समान व्यवहार करता है तथा उन व्यापारों से भिन्न है, जो मनुष्य की अपनी व्यावसायिक क्षेत्र अन्य किसी बाहय आवश्यकताओं एवं अवसरों का प्रबंध करते हैं। वर्तमान समय मेंव्यवसाय का अर्थ इसी संदर्भ में लिया जाने लगा है। इसके माध्यम से कार्यक्षमताओं व्यवसायिक कुशलताओं का विकास किया जाता है। समाज कार्य के प्रशिक्षण, हेतु सर्वप्रथम सुप्रसिद्ध संस्थान्यूयॉर्क स्कूल ऑफ सोशल वर्क की स्थापना अमेरिका में की गई। फ्रीडलैण्डर ने भी अपनी पुस्तक कॉन्सेप्ट एण्ड मैथड्स ऑफ वर्क में व्यवसाय की विशेषताओं का उल्लेख किया है।

एक व्यवसाय के रूप में समाज कार्य का अर्थ

किसी भी कार्य को व्यवसाय की संज्ञा तब दी जाती है, जब उसमें ज्ञान-विज्ञान का समावेश हो। समाज कार्य व्यवसायिक सेवा है, जो वैज्ञानिक ज्ञान एवं मानव संबंधों की निपुणता पर आधारित है। यह व्यक्तियों की अकेले या समूह या समुदाय में सहायता करता है, ताकि वे सामाजिक व वैयक्तिक संतुष्टि एवं स्वतंत्रता प्राप्त कर सकें। सामान्यतः व्यवसाय के अंतर्गत औषधि, कानून, प्रौद्योगिकी को सम्मिलित करते हैं और समाज कार्य ने यह रूप किस प्रकार से किया है अथवा उन विषेशताओं को जो इसे व्यवसाय को स्वरूप प्रदान करती हैं किस प्रकार प्राप्त किया है, यह चर्चा का विषय बना गया है। समाजकार्य का व्यावसायिक रूप उस समय से प्रारंभ हुआ, जब यह अनुभव किया गया कि वर्तमान सामाजिक समस्याओं को सुलझाने के लिए विशेष ज्ञान एवं निपुणाओं की आवश्यकता है।

समाज कार्य को व्यावसायिकता प्रदान करने हेतु 1890 के दशक में कुछ परोपकार संगठन समिति के कार्मियों द्वारा इस संदर्भ में कुछ उत्तरदायी कारणों को उजागर किया गया, जिससे कि व्यावसायिक समाज कार्य समझा जा सकाता है, जो कि निम्न प्रकार से हैं-

1. चिकित्सा एवं अभियंत्रण के क्षेत्रों में परिवर्तन किया गया, जिसके अनुसार व्यवसायिक माध्यमों से समाज की समस्या का समाधान किया जा सकता है।

2. इन समितियों में कार्य करने वाले अधिकांश कार्यकर्ता वैयक्तिक थे, जिन्हें अपने जीवन-यापन हेतु धनार्जन की आवश्यकता थी तथा वे अपने कार्य को एक वांछित कार्य एवं अच्छीमज़दूरी देने वाले कार्य के रूप में स्थापित करना चाहते थे।
3. इन समितियों के माध्यम से शिक्षित महिलाओं का एक नया वर्ग सामने आया जो घर से बाहर जाकर अपने जीवन-यापन हेतु कुछ कार्य करना चाहता था। अत इस आधार पर लिंग संबंधी होने वाले भेद-भाव को रोकने में सहायता प्राप्त हुई।

समाज कार्य की व्यसायिक स्थिति को समझने हेतु कुछ विद्वानों द्वारा निम्नसुझाव दिए गए हैं-

फ्लेक्सनर के अनुसार

व्यावसायिक समाज कार्य के संदर्भ में 1915 में अब्राहम फ्लेक्सनर द्वारा समाज कार्य की व्यावसायिक स्थिति का मूल्यांकन किया गया, जिसके पश्चात ही समाज कार्यकर्ताओं के मध्यसमाज कार्य में व्यावसायिकता जैसे शब्दों को समाहित किया जा रहा है। इस दौरान ही फ्लेक्सनर द्वारा 'क्या समाज कार्य एक व्यवसाय'है? पर एक भाषण दिया गया, जिसमें एक व्यवसाय की पहचान करने के अंग की संज्ञा दी। उनके भाषण में व्यवसाय के संदर्भ में निम्नतथ्यों को सामने रखा गया –

व्यवसाय बड़ी मात्रा में वैयक्तिक उत्तरदायित्व के साथ बौद्धिक क्रियाओं के आवश्यक रूप से सबंद होते हैं।

विज्ञान एवं सीखने से कच्चीसामग्री पाते हैं।

इस सामग्री को वे व्यावहारिक एवं निश्चित उद्देश की प्राप्ति हेतु कार्य में लाते हैं।

एक शैक्षणिक संक्रामक प्रविधि को रखते हैं।

स्वयं को संगठित करते हैं एवंसंप्रेरणा में बढ़ते हुए परोपकारी बनते हैं।

वर्ष 1915 में फ्लेक्सनर ने निष्कर्ष निकाला कि समाज कार्य निम्नालिखित कारणों से अभी तक व्यवसाय नहीं था।

1. समाज कार्य के पास एक सही मायने में व्यवसाय की शक्ति उत्तरदायित्व नहीं थे, क्योंकि समाज कार्य ने अन्य व्यवसायों के मध्य मध्यस्थता की।
2. समाज कार्य के माध्यम से जो भी प्रयोगशाला एवं संगोष्ठियाँ होती थी, उन्हीं के माध्यम से इस समस्या का समाधान खोजता है। फिर भी यह उद्देश्यपूर्ण संगठित शैक्षणिक विद्या विशेष पर आधारित नहीं था।
3. यह एक व्यवसाय के लिए आवश्यक विशेषीकृत क्षमता की उच्च मात्रा से युक्तनहीं था, क्योंकि उस समय समाज कार्य अभ्यास का बृहद क्षेत्र था।

ज्ञान शांति मैत्री

ग्रीनवुड का प्रतिरूप

आरनेस्ट ग्रीनवुड (1957) का एटरीब्यूट्स ऑफ ए प्रोफेशन विषय पर अत्युत्तम लेख समाज कार्य की व्यावसायिक स्थिति के मूल्यांकन में एक-दूसरे सीमा चिन्हके रूप में है।

ग्रीनवुड ने व्यवसाय के निम्नालिखित सूचकों का वर्णन किया है:

1. एक व्यवसाय मौलिक ज्ञान से युक्तहोता है तथा सिद्धांत के क्रमबद्ध निकाय को विकसित करता है, जो कि अभ्यास की कुशलताओं को निर्देशित करता है। शैक्षणिक तैयारी बौद्धिक होने के साथ-साथ अभ्यासपरक भी होती है।
2. व्यावसायिक प्राइज़ तथा सेवार्थी व्यावसयिक संबंध में विश्वसनीयता, व्यावसायिक निर्णय तथा सक्षमता के प्रयोग पर आधारित होते हैं।
3. एक व्यवसाय अपनी सदस्यता, व्यावसायिक अभ्यास, शिक्षा एवं निष्पत्ति मानकों को नियमित एवं नियंत्रित करने की शक्ति से युक्तहोता है। यह समुदाय नियामक शक्तियों तथा व्यावसायिक सुविधा का अनुमोदन करती है।
4. एक व्यवसाय लागू करने योग्य, स्पष्ट, क्रमबद्ध एवं बांधने वाली नियामक आचारसंहिता से युक्त होता है। यह आचार-संहिता व्यवसाय के सदस्यों को नीतिगत व्यवहार प्रदर्शित करने हेतु बाध्य करती है।
5. एक व्यवसाय औपचारिक एवं अनौपचारिक समूहों के संगठनात्मक जाल के अंतर्गत मूल्यों, सिद्धांतों तथा प्रतीकों को संस्कृति के द्वारा निर्देशित होता है। इसके माध्यम से व्यवसाय कार्य करता है तथा अपनी सेवाएँ उपलब्ध कराता है।

उपरोक्त लिखित प्रतिरुप का प्रयोग करते हुए वर्ष 1957 में ग्रीनवुड का विचार था कि समाज कार्य पहले से ही एक व्यवसाय है। यह अन्य प्रकार के विभाजन योग्य होने वाले प्रतिरुप के साथ समरुपता के बहुत से बिंदुओं से युक्तहोता है।

समाज कार्य का व्यावसायिक स्वरूप

भारतीय संदर्भ में यदि हम समाज कार्य के संदर्भ में अध्ययन करें तो प्रतीत होता है कि भारतीय समाज कार्य किसी-ना-किसी रूप में अमरिका एवं इग्लैंड के समाज कार्य की ही देन है। व्यावसायिक समाज कार्य अमेरिका एवं इंग्लैंड में अपेक्षाकृत भारतीय समाज कार्य की अपेक्षा अधिक व्यावसायिक मान्यता प्राप्त कर चुका है।

इसके बावजूद भी भारत में भी व्यावसायिक समाज कार्य ने अपने आप का सार्थक साबित किया है, क्योंकि यह एक ज्ञान तथा विज्ञान पर आधारित है तथा व्यवसाय के अन्य सभी गुण उस जीविका में विद्यमान है, जो कि व्यावसायिकता की श्रेणी में आता है। इस संदर्भ में समाज कार्य पर गंम्भीरतापूर्वक दृष्टिपात करने से स्पष्ट हो जाता है कि समाजकार्य में वे सभी गुण व विशेषताएँ विद्यमान हैं, जिनके आधार पर उसे एक व्यवसाय के रूप में स्वीकार किया जा सकता है।

निम्नालिखित आधारों पर समाज कार्य व्यवसाय को और अधिक स्पष्ट रूप से समझा जा सकता है।

- **वैज्ञानिक ज्ञान एवं क्रमबद्ध सिद्धांत:** समाज कार्य के अतंर्गत प्रदान की जाने वाली समस्त प्रणालियों में विभिन्न तकनीकों, कौशलों एवं यंत्रों के माध्यम से व्यक्ति, समूह एवं समुदाय की सहायता की जाती है। यह समस्त प्रणालियां वैज्ञानिक ज्ञान तथा विशेष कला पर आधारित होती है। एवं इनमें एक निश्चित ज्ञान के आधार पर सेवा का कार्य किया जाता है। साथ ही अभ्यास के दौरान प्राप्त अनुभवों की सहायता से इस ज्ञान व कौशल में निरंतर वृद्धि एवं विकास भी किया जाता है।
- **मानव व्यवहार तथा सामाजिक पर्यावरण:** व्यक्तित्व, इसके कारक, सिद्धांत, सामाजिक पक्ष, तथा मनोचिकित्सकीय पक्ष, मानव संबंध, समूह, सामाजिक संस्थाएं, सामाजीकरण, सामाजिक नियंत्रण, पर्यावरण, प्रौद्योगिकी इत्यादि का अध्ययन किया जाता है।
- **समाज कार्य की प्रणालियां तथा प्रविधियां:** समाज कार्य की प्राथमिक एवं सहायक प्रणालियों, वैयक्तिक समाज कार्य, सामूहिक समाज कार्य, सामुदायिक संगठन, समाज कल्याण प्रशासन, सामाजिक क्रिया तथा सामाज कार्य शोध के माध्यम से व्यक्ति , समूह एवं समूदाय और समाज की समस्याओं निराकरण प्रस्तुत किया जाता है।
- **समाज कार्य के क्षेत्र:** समाज कार्य प्रमूख क्षेत्रों, जैसे- बाल विकास, महिला सशक्तिकरण, युवा कल्याण, वृद्धों का कल्याण, ग्राम्य विकास, नगरीय विकास, अनुसूचित एवं जनजातीय कल्याण, परिवार कल्याण, सामाजिक सुरक्षा, अपराधी सुधार इत्यादि के माध्यम से कार्य किए जाते है।
- **समाजिक समस्याएं**: अपराध, बाल अपराध, मद्यपान, मादक द्रव्य व्यसन, भिक्षावृत्ति, वैश्यावृत्ति, बेरोज़गारी, जातिवाद, संप्रदायवाद, भ्रष्टाचार, राष्ट्रीय एकीकरण इत्यादि के माध्यम से व्यावसायिक समाज कार्य, कार्य करता है।
- **निपुणताएं, प्रविधियां तथा यंत्र:** समाज कार्यकर्ता में निपुणताओं का विकास शिक्षण तथा प्रशिक्षण द्वारा किया जाता है। समाज कार्यकर्ता कार्यक्रम की निपुणता द्वारा ही सेवार्थी के साथ उद्देश्यपूर्ण संबंध स्थपित करता है तथा किसी प्रकार्यात्मक समझौते पर पहुंचता है। वह सामाजिक स्थितियों के विश्लेशण में निपुण होता है। उसमें व्यक्तियों तथा समूहों की भावनाओं को समझने तथा उनसे निपटने की क्षमता पाई जाती है। वह सेवार्थी को आत्मनिर्भर बनाने में निपुण होता है। यह समुदाय तथा संस्था के स्रोतों एवं साधनों को समयानुसार उपयोग में लाता है।
- **समाजकार्य शिक्षा:** समाज कार्य की शिक्षा अलग से व्यवस्था की गई है। इसकी शिक्षा स्नातक, स्नातकोत्तर, पी-एच.डी. स्तर की दी जाती है। यह शिक्षा विश्वविद्यालयों के विभागों तथा स्वतंत्र

रूप से कार्यरत समाज कार्य विद्यालयों के माध्यम से दी जाती है। सिद्धांत तथा व्यवहार दोनों प्रकार की शिक्षा दी जाती है। विद्यार्थियों को समाज कार्य अभ्यास के लिए विभिन्न संस्थाओं में भेजा जाता है। उन्हें चिकित्सालयों, श्रम कल्याण केंद्रों, आवास गृहों, विद्यालयों, मलिन बस्तियों, सामुदायिक विकास केंद्रों, निर्देषन केंद्रों आदि में क्षेत्रीय कार्य करने के लिए भेजा जाता है।

- **व्यावसायिक संगठन:-** जैसे-जैसे समाज कार्य का विकास हुआ, वैसे-वैसे इसके व्यावसायिक संगठन भी बनते गए। इन व्यावसायिक संगठनों का कार्य समाज कार्य व्यवसायके स्तर को ऊंचा उठाना तथा कार्यकर्ताओं में उच्चतर योग्यताओं, क्षमताओं एवं निपुणताओं का विकास करना है। ये संगठन कार्यकर्ताओं के हितों की रक्षा करते हैं तथा व्यावसायिक व्यवहार पर नियंत्रण रखते हैं। अमरीका में पाए जाने वाले प्रमुख संगठन ये हैं न्यूयॉर्क शहर के अंतर्गत वर्ष 1911 में इण्टर कालेजिएट ब्यूरो ऑफ ऑकुपेशन नामक व्यावसायिक संगठन की स्थापना की गई। शैक्षणिक समुदाय में स्वीकृति पाने के प्रयास करने के उद्देश्य से समाज कार्य शिक्षकों द्वारा व्यावसायिक संघों के निर्माण ने इस परंपरा को आगे बढ़ाया। ।अमेरिकन एसोसिएशन ऑफ मेडिकल सोशल वर्क्स (1918), द नेशनल एसोसिएशन ऑफ मेडिकल सोशल वर्क्स (1919), द एसोसिएशन फॉर इ स्टडी ऑफ कम्युनिटी ऑर्गेनाइजेशन (1946) जैसे संगठनों का उदय हुआ। आगे चलकर भारत में भी कुछ प्रमुख व्यावसायिक संगठनों को देखा जा सकता है- इण्डियन एसोसिएशन ऑफ द एलुमिनाई स्कूल ऑफ सोशल वर्क (1951), इण्टरनेशनल फेडरेशन ऑफ सोशल वर्क्स (1952, मद्रास), एसोसिएशन ऑफ स्कूल्स ऑफ सोशल वर्क, इण्डियन एसोसिएशन ऑफ ट्रेन सोशल वर्क्स, इण्डियन एसोसिएशन ऑफ साइकिल सोशल वर्क्स, साइकेट्रिक सोशल वकर्स (बंगलुरु), पत्रिका-लखनऊ एसोसिएशन लखनऊ यूनिवर्सिटी जर्नल ऑफ सोशल वर्क, पत्रिका-टाटा इंस्टीट्यूट ऑफ सोशल साइंसेज-इण्डियन जर्नल ऑफ सोशल वर्क।

4.3 व्यावसायिक समाज कार्य के मूल्य

प्रत्येक शास्त्रों विज्ञानों तथा व्यवसायों के कुछ अपने सिद्धांत विशेषताएं तथा मूल्यहोते हैं। उसी प्रकार से समाज कार्य के भी अपने कुछ विशिष्ट मूल्य होते हैं, जिनके आधार पर समाज की समस्याओं को ज्ञात कर समस्या समाधान का प्रयास किया जाता हैं । समाज कार्य एक ऐसा व्यावसायिक कार्य है, जिसके आधार पर किसी समस्या ग्रस्त व्यक्ति की समस्या का समाधान बिना भेद–भाव एवं पूर्वाग्रह के किया जाता है । किंतु समाज कार्य के द्वारा जो सेवाएं समस्याग्रस्त व्यक्ति को प्रदान की जाती है, उसका उद्देश्य केवल व्यक्ति की सहायता करना नहीं होता, वरन् उसको सहायता प्रदान करने का लक्ष्य मानव का कल्याण तथा समाज का उत्थान व विकास करना होता हैं, ताकि व्यक्ति समास्यारहित होकर मानवीय कल्याण व समाज के विकास में अपना योगदान दे सके। इन समस्त आधारों पर कहा जा सकता है कि

समाज कार्य के मौलिक मूल्य प्रजातांत्रिक व मानवोचित होते हैं। कुछ विद्वानों के द्वारा समाज कार्य के निम्न मूल्यों की व्याख्या को प्रस्तुत किया गया है।

मिर्जा आर अहमद द्वारा समाज कार्य के निम्न मूल्यों का उल्लेख किया गया है-

- समाज कार्य आर्थिक एवं राजनीतिक शक्ति के अधिक समतावादी ढंग की सहायता से पुनर्वितरण में विश्वास करता है।
- समाज कार्य उत्पादन की सामाजिक व्यावहारिकता पर विश्वास करता है तथा उत्पादन को सामाजिक उद्देश्य के अधीन मानता है।
- संगठित श्रम का सामुदायिक जीवन में सकारात्मक योगदान होता है तथा उसे ध्वंसात्मक शक्ति के रूप में न मानकर रचनात्मक शक्ति के रूप में स्वीकार किया जाना चाहिए।
- समाज कार्य का विश्वास है कि आर्थिक भूमिका प्रदत्त प्रस्थिति के आधार पर न होकर उपलब्धि के मानक के आधार पर होनी चाहिए।
- समाज कार्य आर्थिक असंतुलन को समाप्त करने में काले धन के स्त्रोतों को बंद करने तथा सार्वजनिक क्षेत्र के आक्रमण से बचाने तथा निष्कपट एवं एवं निश्छल प्रयासों द्वारा समाजवादी राज्य की स्थापना करने में विश्वास रखता है।
- समाज कार्य सामाजिक नियोजन में विश्वास रखता है, जिसे समाजवादी अर्थव्यवस्था द्वारा अधिक से अधिक व्यक्तियों के कल्याण हेतु किया जाता है।
- समाज कार्य ऐसे सेवारत राज्य में विश्वास करता है, जिसका उद्देश्य प्रत्येक व्यक्ति का कल्याण हो तथा जो व्यक्ति के संरक्षण को मौलिक, प्रजातांत्रिक कर्तव्य के रूप में स्वीकार करता है।
- समाज कार्य संरचनात्मक मूल्यों के स्थान पर वितरक मूल्यों में विश्वास रखता है।
- समाज कार्य सामाजिक न्याय में विश्वास रखता है।
- समाज कार्य वितरक न्याय में विश्वास करता है, जिसका तात्पर्य यह है कि प्रत्येक व्यक्ति जो उसके सामाजिक योगदान के अनुपात में ही प्रतिफल मिले।

संयुक्तराष्ट्र संघ ने समाज कार्य के नैतिक एवं दार्शनिक और अन्य मान्यताओं के संदर्भ में निम्न उल्लेख को प्रस्तुत किया है:

- किसी व्यक्ति की सामाजिक पृष्ठभूमि तथा व्यवहार को ध्यान में रखे बिना उसके महत्व, मूल्य और

योग्यता को मान्यता प्रदान करना तथा मानव प्रतिष्ठा एवं आत्म-सम्मान को प्रोत्साहित करना।

- व्यक्तियों वर्गों एवं समुदाय के विभिन्नमतों, जो आदर करने के साथ-साथ जन कल्याण, के साथ उनका सामंजस्य स्थापित करना।
- आत्मसम्मान एवं उत्तरदायित्व पूरा करने की योग्यता बढाने की दृष्टि से स्वावलंबन को प्रोत्साहित करना।
- व्यक्तियों, वर्गों एवं समुदायों को संतोष प्रद जीवनयापन हेतु समुचित अवसरों में बढ़ोतरी करना।
- व्यावसायिक संबंधों की गोपनीयता को बनाए रखना।
- सेवार्थियों को अधिक स्वतंत्र एवं आत्म-निर्भर बनाने में सहायता देने के लिए इन संबंधों का उपयोग करना।
- यथासंभव विषयात्मक एवं उत्तरदायित्व के साथ व्यावसायिक संबंधो का उपयोग करना।

व्यावसायिक समाज कार्य में प्रयुक्त किए जाने वाले अन्य मूल्यों को निम्न रूप से देखा जा सकता है :

- **मानव मात्र की योग्यता व प्रतिष्ठा में विश्वास**

समाज कार्य के अंतर्गत हर व्यक्ति को बराबर का महत्व व समान स्तर प्रदान करके समाज कार्यकर्ता समस्या समाधान में सहायता प्रदान करता है।

कोई मनुष्य दुखी न हो :

समाजकार्य का यह मूल्य "सर्वे भवन्तु सुखिन : सर्वे सन्तु निरामया :" पर आधारित है। अर्थात सभी लोग सुखी हों तथा सभी निरोग हों इसी सिद्धांत के आधार पर समाज कार्य द्वारा मानव जाति के सभी सदस्यों का दुख दूर करने में इस प्रकार सहायता दी जाती है कि वह अपना कष्ट्व दुख दूर करने में सक्षम हो सके एवं आगे भी वह समस्या का निपटारा स्वयं से ही कर सके।

- व्यक्ति के कार्य आंतरिक व बाह्य परिस्थिति से प्रभावित
- क्रियात्मक शक्तियों का पूर्ण विकास करना
- व्यक्ति/ समूह/ समुदाय को समग्र रुप से ग्रहण करना।
- व्यक्ति/ समूह/ समुदाय को आत्म निर्णय का अधिकार।
- व्यक्ति/ समूह/ समुदाय को उन्नति करने का समान अवसर देना।

समाज कार्यकर्ता मूल्योंका प्रयोग उपचार और शिक्षा के संबंध में निम्नलिखित प्रकार से कर सकता है :

1. मूल्यों के विकास में सेवार्थी की सहायता करना।
2. वह अपने मूल्योंको पूर्ण रुप से समझ सके।
3. सेवार्थी की सहायता करना कि वह अपने मूल्योंके संघर्ष को समाप्त कर सके।
4. सेवार्थी की सहायता करना कि वह अपने और समाज के अन्य व्यक्तियों या समूह के मूल्योंके संघर्ष और अंतर को समझ सके।
5. सेवार्थी की सहायता करना कि वह अपने और दूसरों के मूल्योंके संघर्ष के विनाशकारी परिणामों को दूर करसके।
6. सेवार्थी की सहायता करना कि वह अधिक रचनात्मक सामाजिक तथा वैयक्तिक मूल्योंका पता लगाए और उन्हें ग्रहण करें।
7. सेवार्थी की सहायता करना कि वह अपने मूल्योंके अनुसार व्यवहार कर सके और अपने मूल्यों के प्रयोग में लचीलापन उत्पन्न कर सके और कठोरता से सुरक्षित रहे।

4.4 व्यावसायिक समाज कार्य सिद्धांत

व्यावसायिक समाज के कुछ विशिष्ट सिद्धांत होते हैं, जिनकी सहायता से व्यावसायिक कार्यकर्ता अपने लक्ष्य को प्राप्त करता है । व्यावसायिक समाज कार्य के अंतर्गत निम्न सिद्धांतों का उपयोग किया जाता है-

- **स्वीकृति का सिद्धांत (Principle of Acceptance) -**

  समाज कार्य में स्वीकृती के सिद्धांत से तात्पर्य सेवार्थी व कार्यकर्ता के मध्य एक आपसी सहमति से होता है। इस सिद्धांत का सर्वप्रमुख उद्देश्यहोता है कि कार्यकर्ता सेवार्थी हो जैसा है वैसे ही रूप में स्वीकार करे, उसे बदलने का प्रयास न करे। जब कोई समस्या ग्रस्त व्यक्ति किसी कार्यकर्ता के पास जाता है तो उसका व्यवहार असामान्य, असामाजिक या हास्यास्पद हो सकता है। परंतु कार्यकर्ता को उसे वैसे ही स्वीकार करना चाहिए जैसे वह है। स्वीकृति समाज कार्य में सबसे अधिक इस्तेमाल किया जाने वाला शब्द है । प्रत्येक समाज कार्यकर्ता इस शब्द के महत्व से अवगत होता है तथा समाज कार्य में जहाँ पर कार्यकर्ता की सफलता संबंध की प्रकृति पर निर्भर है, स्वीकृति सिद्धांत का विशेष महत्व है । समाज कार्य में सेवार्थी जैसा है उसे, उस रूप में, अपनी शक्तियों तथा सीमाओं के साथ, संभावनाओं तथा दुर्बलताओं, सकारात्मक तथा नकारात्मक भावनाओं के साथ स्वीकार करने के लिए मार्गदर्शित करती है । समाज कार्य में स्वीकृति को जीवन की गुणवत्ता, पेशेवर अभिवृत्ति, केंद्रीय गत्यात्मकता तथा एक सिद्धांत से संबद्ध किया जाता है । समाज कार्य में स्वीकृति शब्द को स्पष्ट करने का प्रयास कुछ विद्वानों ने किया है। वे निम्न प्रकार से हैं -

ज्ञान शांति मैत्री

रेनोल्ड, वेदथा सी के अनुसार,-*जब हम सेवार्थी को जैसा है, वैसा समझ लेते हैं तथा मानव साथी के रूप में उनका सम्मान करते हैं तो हम सेवार्थी को स्वीकृति प्रदान करते हैं।*

कार्यकर्ता सेवार्थी को जैसा है, वैसा ही समझने का प्रयास करता है। वही प्रत्यक्षीकृत करना चाहता है तथा उन्हीं गुणों को समझना चाहना है। इसी आधार पर वह सेवार्थी के साथ संबंध स्थापित करता है। इससे तात्पर्य है कि सेवार्थी में वास्तविकता का जितना विघटन हो, सेवार्थी का प्रत्यक्षीकरण भिन्न हो तथा मूल्यों में कितना भी अंतर क्यों न हो, हम उसे वैसा ही स्वीकार करते है, जैसा वह अपने को प्रदर्शित करता है। इससे यह तात्पर्य नहीं कि सेवार्थी में सुधार या परिवर्तन की आशा नहीं जाती है, बल्कि इसका तात्पर्य यह होता है कि सहायता की कला स्वीकृति तत्व पर आधारित है और वहीं से प्रारंभ की जाए तो विशेष लाभकारी सिद्ध होगी। समाज कार्य का दृढ़ विश्वास है कि सेवार्थी के स्तर से ही कार्य प्रारंभ होना चाहिए, जिससे सफलता प्रत्येक स्तर पर मिलती है। इस अर्थ में स्वीकृति व्यावसायिक मनोवृत्ति का एक सिद्धांत है। स्वीकृति के निम्न लिखित अंग है-

1. सम्मान करना (Respecting)
2. प्रेम करना (Loving)
3. चिकित्सात्मक समझ (Therapeutic Understanding)
4. प्रत्यक्षीकरण (Perception)
5. सहायता (Helping)
6. प्राप्त करना (Receiving)

स्वीकृत क्रिया तीन प्रकार की होती है-

1. प्रत्यक्षीकरण
2. उपचारात्मक समक्ष
3. अभि-स्वीकृति

सेवार्थी की स्वीकृति का तात्पर्य निम्नलिखित बातों से हैं:

1. मानव के रूप में उसकी एकता, क्षमता, योग्यता में विश्वास।
2. व्यक्ति के रूप में जैसा है वैसा तथा सीमाओं सहित स्वीकृति।
3. मनोवृत्ति तथा व्यवहार असहयोगपूर्ण होने पर भी उसको स्वीकार करना।
4. उसकी वास्तविक क्षमताओं को स्वीकार करना।
5. सेवार्थी के रूप में उसे मनाना तथा अपनी भावनाओं एवं रुचियों पर नियंत्रण लगाना।
6. सकारात्मक तथा नकारात्मक भावनाओं की स्वीकृति।

स्वीकृति सिद्धांत की **सीमाएँ**

- मानव व्यवहार की सीमित जानकारी।

- प्रति संक्रमण।
- वैयक्तिक कार्य का सेवार्थी की स्थिति के बारे में निर्णायक हो जाना।
- स्वीकृति तथा मंजूरी के बीच भ्रम
- सेवार्थी के लिए सम्मान में कमी।

- **अनिर्णायक मनोवृत्ति का सिद्धांत**

समाज कार्य की यह दृढ़ धारणा है कि व्यक्ति में आत्म-निश्चय की अंतर्भूत क्षमता होती है। इसी प्रत्यय के आधार पर समाज कार्यकर्ता सेवार्थी को अपना मार्ग स्वयं निश्चित करने के लिए प्रोत्साहित करता है। सेवार्थी को अपनी रुचि के अनुसार वैयक्तिक समाज कार्य प्रक्रिया में भाग लेने की पूरी स्वतंत्रता होती है। उसके अधिकारों तथा आवश्यकताओं को महत्व दिया जाता है। कार्यकर्ता सेवार्थी की आत्म-निदर्शक क्षमता को तीव्र करता है तथा संस्था में उपलब्ध साधनों का ज्ञान कराता है। वैयक्तिक समाज कार्य संबंध का यह विशिष्ट गुण है। कार्यकर्ता इसकी मनोवृत्ति को अपनाता है। इस मनोवृत्ति के आधार वैयक्तिक सेवा कार्य का दर्शन है कि व्यक्ति का समस्या उत्पन्न करने में कोई दोष नहीं है या वह अपराधी नहीं है, बल्कि परिस्थितियाँ इसके लिए उत्तरदायी हैं। यह व्यक्ति की मनोवृत्ति, स्तर तथा क्रिया-प्रतिक्रिया के कार्यों को महत्व देता है।

'निर्णय' का तात्पर्य व्यक्ति को किसी कार्य के लिए उत्तरदायी या उसकी अज्ञानता को निश्चित करने से होता है। यह एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा सेवार्थी को आरोपित करना तथा उसे उसके जीवन की समस्याएँ उत्पन्न करने के लिए ज़िमेदार ठहराना होता है। जैसे एक महिला तनाव व हताशा के लक्षण दर्शाती अपनी बेटी के लिए सहायता मांगने के लिए एक बाल मार्गदर्शक क्लिनिक से संपर्क करती है। इस मामले में निर्णायक होने का अर्थ माँ पर बेटी की स्थिति के लिए आरोप लगाना होगा। वैयक्तिक सेवा कार्य मे भी निर्णय का यह अर्थ लिया जाता है। अर्थात सेवार्थी पर दोषरोपण मौखिक या अन्य किसी प्रकार से करना, जिससे वह अपनी समस्या के लिए स्वंयं सहायता कर सके। सेवार्थी की सहायता करने में यद्यपि उसकी असफलताओं तथा कमियों कोजानना आवश्यक होता है। सेवार्थी की सहायता करने, समुदाय के स्त्रोतों का उपयोग करने, आंतरिक क्षमताओं में समस्या समाधान के लिए वृद्धि करने, उचित समायोजन प्राप्त करने, व्यक्तित्व का विकास वृद्धि करने के लिए वैयक्तिक कार्यकर्ता को सेवार्थी तथा उसकी समस्या दोनों समझना होता है। सहायता को प्रभावपूर्ण बनाने के लिए आवश्यक होता है कि वैयक्तिक कार्यकर्ता सेवार्थी की समस्या के कारणों को जाने इस प्रक्रिया में वैयक्तिक कार्यकर्ता सेवार्थी पर न तो

दोषारोषण करता है न ही उसे अपराधी बताता है और न ही उसे समस्या उत्पन्न करने का कारक निश्चित करना है।

- **सेवार्थी आत्मनिश्चय का सिद्धांत**

समाज कार्य के व्यवसाय का एक सबसे ठोस विश्वास यह है कि व्यक्ति में आत्म-निश्चिय की अंतर्निहित क्षमता होती है । कार्यकर्ता द्वारा सेवार्थी/समूह/समुदाय की स्वतंत्रता का जानबूझकर उल्लंघन करने को गैर-पेशेवर समझा जाता है, क्योंकि यह सदस्यों के प्राकृतिक अधिकार का हनन करता है और समाज कार्य प्रक्रिया उपचार को बाधित करता है ।

प्रत्येक मानव की तरह सेवार्थी को भी अपनी क्षमता का विकास करने का अधिकार होता है । उसका अपने उद्देश्यों को पूरा करने का उत्तरदायित्व के साथ अधिकार जुड़ा होता है अत: सेवार्थी/समूह/समुदाय को अपना मार्ग चुनने तथा उद्देश्य प्राप्त करने के साधन निश्चित करने का अधिकार भी होता है । सेवार्थी/समूह/समुदाय यद्यपि परेशान, हताश तथा हतोत्साही होता है, परंतु वह अपनी स्वतंत्रता तथा अधिकार नहीं खोना चाहता है । वह संस्था में सहायता तथा सहयोग के लिए आता है। वह कार्यकर्ता को सहायता प्रदान करने वाला तथा समस्या समाधान करने की विधि बनाने वाला मानता है । कार्यकर्ता से आशा करता है कि समस्या समाधान के साधन तथा स्रोत बताए उसकी क्षमता में ज्ञान प्रदान करके सहायता करे । सामाजिक उत्तरदायित्व सांवेगिक समायोजन तथा व्यक्तित्व विकास तभी होता है, जब व्यक्ति को अपना निर्णय लेने तथा विकल्प चुनने की स्वतंत्रता होती है । वैयक्तिक कार्यकर्ता इस तथ्य को पूरी तरह से समझता है तथा सेवार्थी अपना निर्णय लेने की स्वतंत्रता देता है ।

- **गोपनीयता का सिद्धांत**

समाज कार्य मानव जीवन के विभिन्न पहलुओं में विभिन्नतरीके उपयोग में लाए जाते हैं। जीवन के बहुत से पहलू ऐसे होते है, जिनमें व्यक्ति बहुत ही गोपनीयता रखता है । गोपनीयता सिद्धांत को दो रूपों में देखा जा सकता है-

- व्यावसायिक आचार संहिता के रूप में।
- वैयक्तिक सेवा कार्य संबंध के तत्व के रूप में ।

गोपनीयता का अर्थ , सेवार्थी की उन गोपनीय सूचनाओं से हैजो वह कार्यकर्ता से बताता है, उन्हें गोपनीय रखने से है । यह सेवार्थी के मूल अधिकार से संबंधित है साथ ही वैयक्तिक कार्यकर्ता का उत्तरदायित्व है तथा वैयक्तिक सेवा कार्य का मूलाधार है ।

जब सेवार्थी संस्था में आता है तो यह समझकर आता है कि वैयक्तिक कार्यकर्ता को अनेक गोपनीय बाते बतानी हैं। परंतु यह भी चाहता है कि उसकी बातों को अन्य लोग न जाने,

क्योंकि ऐसा होने से उसकी मानहानि होगी तथा वैयक्तिक भावनाओं को ठेस पहुँचती है। इसीलिए पहले वह गोपनीय बातें नहीं बताता है । जब उसे विश्वास हो जाता है तो वह गोपनीय तथ्यों को स्पष्ट करता है । इनकी अभिव्यक्ति के बिना सेवार्थी द्वंद के समाधान में सहायता की आशा नहीं कर सकता । यह सूचना बहुत निजी हो सकती है । सेवार्थी को अनैतिक तथा सामाजिक दृष्टि से अनभिज्ञ व्यवहारों से संभव हो, और यदि लोगों को पता चल जाए तो सेवार्थी की सामाजिक छवि धूमिल हो सकती है, इसलिए वैयक्तिक कार्य द्वारा गोपनीयता के सिद्धांत का अभ्यास आवश्यक है।

सामाजिक कार्यकर्ता का नैतिक उत्तरदायित्व

गोपनीय सूचना के तीन श्रेणियाँ बताई हैं-

1) नैसर्गिक गोपनीयता
2) प्रतिज्ञात्मक गोपनीयता
3) समझौतात्मक गोपनीयता

वैयक्तिक कार्य संबंध में ये तीनों प्रकारकी गोपनीयता शामिल होती है । सदैव एक मान्यता है कि वैयक्तिक कार्यकर्ता सेवार्थी की गोपनीयता को रखने को बाध्य होगा । यद्यपि कार्यकर्ता को संस्था के ढाँचे में रहकर कार्य करना होता है। सेवार्थी द्वारा प्रदान की गई सूचना अकेले सेवार्थी के पास नहीं रहती, बल्कि संस्था में रहती है । संस्थामें सभी लोग सेवार्थी की गोपनीयता की रक्षा के लिए बाध्य होंगे

- **सेवार्थी, समूह अथवा समुदाय की मनोदंशा के अनुसार कार्य करने का सिद्धांत–**

समाजिक कार्यकर्ता का दायित्व होता कि वह सेवार्थी/समूह/समुदाय की आवश्यकताओं एवं क्षमताओं के अनुसार कार्य को करे,जिससे की लक्ष्य को आसानी से प्राप्त किया जा सके। कार्यकर्त्ता व्यक्ति अथवा समूह के साथ वही से कार्य आरंभ कर देते हैं जिस स्थिति में वे रहते हैं। कार्यकर्त्ता को जब व्यक्ति समूह आदि की मनोदशा पता नहीं हो तो उन्हीं के कहने का अवसर देता है। और बातों को ध्यान से सुनकर आगे की रणनीतियों को बनाता है।

- **संचार का सिद्धांत**

संचार का सिद्धांत समाज कार्य में अत्यंत महत्वपूर्ण सिद्धांत के रूप में जाना जाता है । इस सिद्धांत के माध्यम से कार्यकर्ता संबंधित व्यक्ति/समूह/समुदाय तक अपने तथ्यों को स्पष्ट रूप से पहुंचाता है। संचार प्रेषक का प्राप्तकर्ता को सूचना भेजने की प्रक्रिया है, जिसमे जानकारी पहुंचाने के लिए किसी ऐसे माध्यम का प्रयोग किया जाता है, जिससे संप्रेषित सूचना प्रेषक और प्राप्तकर्ता दोनों समझ सके। यह एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसके द्वारा प्राणी विभिन्न माध्यमों के द्वारा सूचना का आदान प्रदान कर सकते हैं । सामाजिक कार्यकर्ता द्वारा संचार के निम्नसाधनों का प्रयोग कार्य के

दौरान कर सकता है। जैसे- बोली, गान और कभी-कभी आवाज़ का स्वर एवं गैर-मौखिक, शारीरिक माध्यम जैसे हाव-भाव, संकेत भाषा, स्पर्श, नेत्र संपर्क, लेखन। इस प्रकार से इस सिद्धांत का प्रयोग बड़ी ही सावधानी के साथ करना चाहिए, जिससे कि कार्यकर्ता एवं व्यक्ति/समूह/समुदाय के मध्य उचित कार्यवाही की जा सके।

- **भावनाओं के उद्देश्यपूर्ण प्रकटन का सिद्धांत**

  मनुष्य एक तार्किक प्राणी है। उसमें ज्ञान का भंडार है तथा कार्य करने की इच्छा व अनिच्छा होती है। इच्छाएँ या भावनाएँ व्यक्ति की प्रकृति व स्वभाव एक अंग है तथा व्यक्तित्व विकास के लिए इनका स्वस्थ विकास होना आवश्यक होता है। सहायता के आधुनिक व्यवसाय में एक सुनिश्चित भावनात्मक जीवन की महत्ता को प्रमुख रूप में मान्यता प्रदान की जाती है। मनोचिकित्सा और मनोविज्ञान दोनों विज्ञानों में व्यक्तित्व की संरचना में भावनाओं की सामान्यस्वस्थ भूमिका का अध्ययन किया गया है। इन विज्ञानों ने सामाजिक कार्य को मानव प्रगति और विकास के बारे में ज्ञान का एक आयाम दिया है। इससे समाज कार्य सहायता प्रक्रिया और अधिक प्रभावी हुई है।

  व्यक्ति की मनोवैज्ञानिक मूलभूत आवश्यकता को अंतर्गत प्रेम, सुरक्षा, प्रस्थिति, भावनाओं का स्पष्टीकरण, उपलब्धि तथा आत्मनिर्भरता के रूप में पहचाना गया है। समूह में कार्य करना, समूह स्वीकृत लेना, समूह के तरीकों को व्यवहार में लाना यह सभी मनोसामाजिक आवश्यकताएँ है। इन आवश्यकताओं का स्तर व्यक्ति-दर-व्यक्ति घटता-बढ़ता रहता है। यदि इन भावनाओं का उद्देश्यपूर्ण प्रगटन नहीं होता है तो निराशा उत्पन्न होती है। सभी निराशा की स्थिति हानिकारक नहीं होती है, लेकिन निराशा के कारण हानिकारक मनोसुरक्षात्मक उपाय प्रयोग होने लगते हैं, तो असामान्य व्यावहारिक प्रतिक्रियाएँ होने लगती है। यद्यपि यह सत्य है कि इन आवश्यकताओं की सीमा प्रत्येक व्यक्ति में भिन्न-भिन्न होती है, परंतु वे सभी मानव मात्र की आवश्यकताएँ है। सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के संबंध में आवश्यकता एवं भावनाओं के स्पष्टीकरण पर बल दिया गया है। बीज्टिक का कहना है कि भावनाओं की उद्देश्यपूर्ण अभिव्यक्ति का अर्थ सेवार्थी द्वारा नकारात्मक भावों की अभिव्यक्ति की आवश्यकता की पहचान है।

- **वैयक्तिकरण का सिद्धांत :**

  व्यक्ति का वास्तविक अर्थ वैयक्तिकरण से ही स्पष्ट होता है। 1930 में बरजाइना रॉबिन्सन ने वैयक्तिकरण के सिद्धांत को समाज कार्य की मुख्य प्रणाली के लिए महत्वपूर्ण बताया (वैयक्तिक सेवा कार्य)। मेरी रिचमण्ड ने भी प्रभावपूर्ण सेवा कार्य के लिए वैयक्तिकरण पर बल दिया । यह सिद्धांत प्रत्येक व्यक्ति की विशिष्ट विशेषताओं को समझने पर बल देता है।

बोइथियस के अनुसार व्यक्ति तार्किक प्रकृति का वैयक्तिक सारतत्व है। मानव प्रकृति जाति में समान होती है, लेकिन प्रत्येक व्यक्ति की वैयक्तिक पहचान होती है। प्रत्येक व्यक्ति अपने वंशानुक्रम, पर्यावरण, अंतर्भूत ज्ञानात्मक क्षमताओं, योग्यताओं आदि से भिन्नहोता है। प्रत्येक व्यक्ति के अलग-अलग अनुभव तथा अलग-अलग आंतरिक बाह्य उत्तेजक होते हैं, जो उसके संवेग तथा स्मृतियों, विचारों, भावनाओं तथा व्यवहार को प्रभावित करते हैं। प्रत्येक व्यक्ति की प्रकृति अपनी शक्तियों को विशिष्ट प्रकार से संगठित करके उन्हें निर्देशित करती है, जिससे वे दूसरे व्यक्ति की प्रवृत्ति से भिन्नहो जाते हैं। यदि यद्यपि शारीरिक रूप से सभी व्यक्ति समान होते हैं। परंतु उनकी शारीरिक, मानसिक, सांवेगिक आदि क्षमताओं में अंतर होता है। जब तक इन विशेषताओं को अलग-अलग नहीं समझा जाएगा, तब तक सेवार्थी समस्या का उचित समाधान ढूँढ़ा नहीं जा सकेगा और ना ही उचित समायोजन स्थापित कर सकेगा। इससे यह स्पष्ट होता है कि व्यक्ति-व्यक्ति में अंतर होता है। प्रत्येक सेवार्थी/समूह/समुदाय भिन्न विशेषताएँ रखता है। अत: उसकी आवश्यकताएँ भी दूसरों से किसी-न-किसी रूप में भिन्न होती है। अत:समाज कार्य सहायता में भी भिन्नता होना अनिवार्य है, जिससे व्यक्ति विशेष की सहायता संभव हो सके और सेवार्थी/समूह/समुदाय अपनी योग्यताओं और स्रोतों को समस्यासमाधान के लिए उपयोग में ला सके। प्रत्येक व्यक्ति को यह अधिकार है कि उसको एक व्यक्ति के रूप में समझा जाए, न कि मानव प्राणी के रूप में अंतरों को महत्व दिया जाए। इसी मूलाधार पर वैयक्तिकरण का सिद्धांत आधारित है।

- **आवश्यक साधनों का उपयोग –**

  समाज कार्य के माध्यम से जो सहायता सेवार्थी/समूह/समुदाय को प्रदान की जाती वह सहायता का माध्यम संबंधित व्यक्ति के वातावरण से ही महत्वपूर्ण होता है कार्यकर्ता का दायित्व होता है कि वह आवश्यक साधनों की खोज करें और उनका उपयोग किस प्रकार से हो सकता है, इसका प्रयास करे, ताकि जो भी आवश्यकता ग्रस्त व्यक्ति है उसकी समस्या का समाधान उचित प्रकार से किया जा सके।

- **व्यावसायिक संबंध निर्माण का सिद्धांत –**

  समाज कार्य एक व्यावसायिक सेवा है। अत: यह आवश्यक है कि यह सेवा प्रत्येक व्यक्ति को बिना पूर्वाग्रह या पक्षपात के प्रदान करनी चाहिए। यही व्यावसायिक संबंध निर्माण सिद्धांत का मूलाधार है।

  समाज कार्य के मूल्यों और सिद्धांतों का अध्ययन करने के पश्चात, कौस द्वारा दिए गए समाज कार्य के मूल्यों और सिद्धांतों को स्पष्ट रूप से समझा जा सकता है।

कौस द्वारा समाज कार्य के दस मूल्यों/ सिद्धांतों की व्याख्या को प्रस्तुत किया गया है, जो कि निम्न प्रकार से है :

1. मनुष्य की योग्यता एवं उसकी गिरमा को बनाए रखना।
2. संपूर्ण मानवीय विभव उपलब्धबनाने की मानवीय प्रवृति संबंधी क्षमता को बनाए रखना।
3. मतभेदों के संदर्भ में सहनशीलता को बनाये रखना।
4. स्वतंत्रता।
5. मनुष्य एवं प्रकृति के कारण होने वाले खतरों से अपने अस्तित्व की सुरक्षा करना।
6. मौलिक मानवीय आवश्यकताओं की संतुष्टि करना।
7. आत्म–निर्देशन देना।
8. अनिर्णयात्मक मनोवृति का विकास करना।
9. रचनात्मक-सामाजिक सहयोग को बनाए रखना।
10. कार्य की महता तथा खाली समय का रचनात्मक उपयोग करना।

4.5 व्यावसायिक समाज कार्य में नैतिकता

प्रत्येक व्यावसाय की अपने कुछ महत्वपूर्ण मानदंड या प्रतिबंध होते है जिनके आधार पर ही कोई भी व्यावसायिक संगठन अपने व्यवसाय के कार्यकर्ताओं के लिए महत्वपूर्ण नियमों का सृजन करता है, जिनका पालन करना प्रत्येक कार्यकर्ता के लिए अनिर्वाय होता है । यह प्रतिबंध व नियम केवल कार्यकर्ताओं को मनमाना व्यवहार करने से नहीं रोकते, वरन् समस्त सामाजिक कार्यकर्ताओं के व्यवहार, क्रियाकलापों अभ्यास की प्रक्रिया आदि में एकरूपता लाने का प्रयास करते हैं। नेशनल एसोसिएशन ऑफ सोशल वर्क(एन.ए.एस.डब्ल्यू.) एवं अमेरिकन एसोसिएशन ऑफ सोशल वर्कर्स ने 1920 में समाज कार्य के व्यावसायिक रूप एवं अभ्यास में समानता लाने हेतु, एक समान नैतिकता को स्वीकार करने हेतु सभी कार्यकर्ताओं को अनिर्वाय कर दिया। भारतीय संदर्भ में देखे से स्पष्ट होता है कि समाज कार्य हेतु भारत में कोई अलग से नैतिकता का निर्माण नहीं किया गया है, वरन अमेरिका द्वारा चलाई जा रही नैतिकता को स्वीकार किया गया है।

नेशनल एसोसिएशन ऑफ सोशल वर्क (एन.ए.एस.डब्ल्यू.) की नैतिकता एवं विषय संहिता:

वर्ष 1999 में NASW प्रतिनिधि के सदस्यों के द्वारा एक समान आचार संहिता को निर्माण किया गया, जिसके आधार पर समाज कार्य व्यवसाय हेतु कुछ मानदंडों का निर्धारण किया गया हैं।NASW मुख्य रूप से समाज कार्य के मूल्य, सिद्धांतो एवं नैतिकता की व्याख्या को प्रस्तुत करता हैं।

NASW की नीति विषयक संहिता को निम्न उद्देश्यों के माध्यम से समझा जा सकता है :

- नैतिक संहिता मूल गुणों को सत्यपित करती है, जिन पर सामाजिक कार्य का लक्ष्य आधारित है।

- नैतिक संहिता विस्तृत नैतिक सिद्धांत को संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत करती है, जिसका उपयोग कार्यकर्ता के द्वारा समाज कार्य में दिशा निर्देशन हेतु किया जाता है।
- नैतिक संहिता को इस आधार पर बनाया गया है कि प्रत्येक कार्यकर्ता इसके महत्व को समझे और इसका उपयोग करे।
- नैतिक संहिता ऐसे मानदंडों का निर्माण करता है जिसके माध्यम से कोई भी इसके उत्तरदायित्व का भार वहन कर सकता है । साथ ही उस पर नियंत्रण भी रख सकते हैं ।
- नैतिक संहिता, समाज कार्य के क्षेत्र में कदम रखने वाले व्यक्तियों हेतु एक लक्ष्य निर्धारण एवं नीति विषयक मानदंड के प्रति जागरूकता का कार्य करती है।
- नैतिक संहिता मानदंडों के बारे में स्पष्ट करता है, ताकि समाज कार्य के लिए व्यवसायी स्वयं इसका मूल्यांकन कर सके तथा यह जान सके कि सामाजिक कार्यकर्ता किसी प्रकार के अनैतिक कार्य से तो जुड़ा नहीं है। वर्तमान समय में NASW इसकी निगरानी रखता है।

4.6 सारांश

प्रस्तुत इकाई में व्यावसायिक समाज कार्य के मूल्य, सिद्धांत और नैतिकता के संदर्भ में जानने का प्रयास किया गया है, जिसके अनुसार व्यावसायिक समाज कार्यकर्ता द्वारा इन इनके द्वारा बताएं गए समस्त मानदंडों का निर्धारण एवं पालन कर व्यावसायिक कार्य को संपन्न किया जाता है और आवश्यक सेवाएँ समाज में आवश्यकताग्रस्त व्यक्ति को प्रदान की जाती है।

4.7 बोध प्रश्न

1. व्यावसायिक समाज कार्य के अर्थ को स्पष्ट करते हुए इसके स्वरूप का वर्णन कीजिए।
2. मूल्य से क्या तात्पर्य है ? विभिन्न विद्वानों द्वारा दिए गए समाज कार्य के मूल्योंकी व्याख्या कीजिए।
3. समाज कार्य के विभिन्न सिद्वांतों की व्याख्या कीजिए।
4. NASW की नीति विषयक संहिता के उद्देश्यों को स्पष्ट कीजिए।

4.6 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

❖ प्रसाद मणिशंकर, सत्य प्रकाश, कुमार अरूण, कुमार संजय, सैफ मो.खान एवं सिंह अभव कुमार (2103). *यूजीसी नेट/जेआरएफ/स्लेट समाज कार्य*.दिल्ली: अरिहंत पब्लिकेशन (इण्डिया)लिमिटेड।

ज्ञान शांति मैत्री

- तेज, संगीता. पाण्डेय तेजस्कर (2010). *समाज कार्य.* लखनऊ: जुबली एच फाउन्डेशन।
- इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विशवविद्यालय(2009).*समाज कार्य का उदगम और विकास* .दिल्ली: समाज कार्य विद्यापीठ।
- मिश्रा, प्रयागदीन (2003). *सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य.*लखनऊ : हिंदी संस्थान।
- https://hi.wikipedia.org/wiki Retrived on 10/08/2016
  - https://en.wikipedia.org/wiki/National_Association_of_Social_Worke Retrived on 10/08/2016

खंड - 4

भारत में समाज कार्य का उद्भम और विकास

ज्ञान शांति मैत्री

इकाई – 1 भारत में समाज कार्य का एतिहासिक विकास

इकाई की रूपरेखा

1.0 उद्देश्य

1.1 प्रस्तावना

1.2 प्राचीन काल में समाज कार्य का विकास

1.3 मध्ययुगीन काल में समाज कार्य का इतिहास

1.4 आधुनिक काल में समाज कार्य का इतिहास

1.4 सारांश

1.5 बोध प्रश्न

1.6 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

1.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आप –

1. विभिन्न कालों में समाज कार्य के विकास का वर्णन कर सकेंगे।
2. प्रत्येक काल में समाज कार्य के बदलते स्वरूप का अनुमान लगा सकेंगे।

1.1 प्रस्तावना

भारत में यदि हम समाज कार्य के संदर्भ में अध्ययन करते हैं तो स्पष्ट होता है कि इसका इतिहास प्राचीन काल से ही रहा है। इसके बाद मध्ययुगीन काल में समाज कार्य को विभिन्न रूपों में देखा जा सकता है। आधुनिक काल में समाज कार्य में कार्यक्रमों एवं क्रियान्वयन में अंतर स्पष्टहोता है। प्रत्येक काल में समाज कार्य की कार्य प्रणाली में अंतर को स्फ्ट होता है । समाज कार्य किस प्रकार से अपने समाजिक सेवा के रूप से आगे बढ़ते हुए समाज कार्य और व्यासायिक समाज कार्य के रूप में आगे बढ़ा है उक्त इकाई के माध्यम से यह प्रदर्शित होता है।

1.2 प्राचीन काल में समाज कार्य का विकास

प्राचीन काल में समाज कार्य आधुनिक समाज कार्य से एकदम भिन्न था। पूर्व में समाज कार्य व्यवस्थित नहीं था और इसे केवल व्यक्ति की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु किया जाता था।समाज कार्य को अन्य सामाजिक संस्थाओं द्वारा किया जाता था और ये संस्थाएँ लोगों के जीवन पर अपना प्रभावडालती थीं। प्रो. राजाराम शास्त्री ने वैदिक काल की सामुदायिक समाज की व्यवस्था का वर्णन करते हुए लिखा है कि इस व्यवस्था में समुदाय की आवश्यकताओं को पूरा करने का दयित्व प्रत्येक व्यक्ति का था। व्यक्ति की

आवश्यकताओं को सामूहिक प्रयास से पूरा किया जाता था। इस काल में विशिष्ट सहायता की आवश्यकता रखने वाले व्यक्तियों का उत्तरदायित्व शासक, धनी तथा साधारण समुदाय के सदस्यों द्वारा आपस में बाँट लिया जाता था। (शास्त्री, 1970)

प्राचीन काल में सहायता का कार्य धर्म के आधार पर था। मंदिरों और आश्रमों की स्थापना, संत-महात्मा के लिए निवास स्थान, मंदिरों में रहने वालों के लिए भोजन कपड़े आदि अन्य वस्तुओं के द्वारा समाज कार्य किया जाता था। जिनके पास स्वयं का घर नहीं था, उन्हें मदिरों में रखने की व्यवस्था थी। जो वृद्ध एवं बीमार हो, उनकी सहायता करने का उत्तरदायित्व भार जाति और समुदाय परिषदों पर था। (Garg).

मठों और मंदिरों के माध्यम से समूह सहायक की परंपरा का संचालन किया जाता था। संघ तथा गुण शब्द ऋग्वेद तथा अथर्ववेद में समूह कार्य को प्रतीत करते थे।

आगे चलकर संघ का नाम बौद्ध भिक्षुओं ने अपनाया जो अपने आपको सामूहिक रूप से भिक्षु संघ कहते थे। पौराणिक कथाओं सेप्रतीत होता है कि प्राचीन काल में दो प्रकार की संन्यासी बस्तियाँ थीं- प्रथम आवास और दूसरा आराम। ऐसी बस्तियों को गाँव के बाहर बनाया जाता था, जिसे भिक्षु स्वयं बनाते थे और उनकी मरम्मत स्वयं करते थे इसे आवास कहा जाता था। जब कोई धनी व्यक्ति इन भिक्षुओं को दान में देता था तथा उसकी स्वयं देखभाल करता था उसे 'आराम' कहा जाता था। आराम की सभी संपत्ति सामूहिक होती थी। इसका उपयोग संघ में सभी सदस्य द्वारा किया जाता था। संघ को दी जाने वाली कोई भी संपत्ति किसी भी व्यक्ति द्वारा व्यक्तिगत रूप से अधिकार में नहीं ली जा सकती थी। बोधिसत्व ने मगध में ही गाँव के तीस व्यक्तियों को एकत्र किया और गाँव की भलाई एवं उन्नति के लिए कार्य करने को प्रेरित किया, जिससे गाँव की सड़कों का निर्माण, बांधों का निर्माण, तालाब आदि कार्यों को किया गया। मौर्य वंश के काल में जनता को ध्यान में रखतेहुए उनकी भलाई के लिए अनेक सामूहिक कार्यों को किया गया। (मिश्र, 2008)। हड़प्पा संस्कृति से लेकर बौद्ध काल तक जनता की भलाई के लिए उपदेश दिए जाते थे। मौर्य काल में भी जनता की भलाई के लिए उपदेश दिए गए। अशोक ने भी कहा कि सहायता के लिए मेरी प्रजा किसी भी समय मुझसे आकर मिल सकती है। शिक्षा के क्षेत्र में भी प्राचीन काल में गुरूजनों द्वारा शिक्षा देने की परंपरा को देखा जा सकता है। बौद्ध काल में शिल्प संघों का निर्माण कर आर्थिक व्यवस्था को मज़बूती प्रदान की गई। लोगों को आभास हो गया कि संयुक्त रूप से कार्य करके अधिक धन अर्जन किया जा सकता है।

अतः प्राचीन काल में इन समस्त उपर्युक्त उदाहरणों के माध्यम से समाज कार्य को समझा जा सकता है। मध्य काल में इसके अंतर्गत अनेक परिवर्तन दिखेंगे।

1.3 मध्य काल में समाज कार्य का इतिहास

समाज कार्य के क्षेत्र में मध्य काल या स्वतंत्रता के पूर्व के काल को उस समय से देखा जा सकता है जब 18वीं शताब्दी के प्रारंभ में ही अनेक सामाजिक कार्यकताओं के द्वारा किसीन-किसी रूप में समाज की आर्थिक, राजनैतिक, सामाजिक और धार्मिक व्यवस्था के सुधार हेतु किए गए।

यह कोशिश बंगाल से रामपुर मिशन के रूप में देखी जा सकती है जिसकी स्थापना 1780 में की गई थी। समाज के क्षेत्र में कार्यरत व्यक्तियों एवं समाज सुधारकों का मत था कि हिंदुओं की सामाजिक दशा में सुधार तभी लाया जा सकता है जब बालविवाह निषेध कराया जाए, बलिकाओं की भ्रूण हत्या पर रोक लगाई जाए, सती प्रथा को समाप्त किया जाए और विधवाओं का पुर्नविवाह कराया जाए।(Prasad, 1977: 441)

इन्हीं सामाजिक बुराईयों के क्षेत्र में कार्य करने वाले कुछ प्रमुख व्यक्तियों एवं संस्थाओं को समाजकार्य के क्षेत्र में इस प्रकार देखा जा सकता है-

राजाराम मोहन राय (1774-1843)- एक साधारण परिवार में जन्में राजाराम मोहन राय, जिन्होंने सर्वप्रथम सामाजिक कुरीतियों की ओर समस्त जनता का ध्यान आकर्षित कराया। सन 1828 में ब्रह्म समाज की स्थापना की। इस ब्रह्म समाज की स्थापना का उद्देश्य था कि किस तरह से जाति बंधनों को तोड़ा जाए, सती प्रथा रोकी जाए, बाल विकास के लिए शिक्षा की व्यवस्था की जाए, बाल विधवाओं की स्थिति में सुधार किया जाए और इसके अलावा दान तथा संयम को उत्साहित करने के उद्देश्य से इस संस्था का निर्माण किया गया था। इन सभी कार्यों को करने के लिए सामूहिकता की भावना अनिवार्य थी तथा इसी कारण इन सभी समाज सुधार कार्यों में समाज कार्य प्रविधि का किसी-ना-किसी रूप में प्रयोग किया जाता था।

स्वामी दयानंद सरस्वती (1824-1883) - दयानंद सरस्वती को 19वीं शताब्दी के प्रमुख समाज सुधारवादी के रूप में जाना जाता है । इनका जन्म काठियावाड़ के टंकारा नामक गाँव में हुआ था। दयानंद मूर्ति पूजा के कट्टर विरोधी थे उनका मानना था कि एक पत्थर जो स्वयं की रक्षा नहीं कर सकता वो हमारी रक्षा कैसे कर सकता है? सन 1875 में इन्होंने आर्यसमाज की स्थापना मुंबई में की। सामूहिक कार्य के सिद्धांतों तथा प्रविधियों का उपयोग करते हुए जाति प्रथा, बाल विवाह , धर्म परिवर्तन लोगों के लिए गृह प्रवेश-निषेध नीति आदि के विरोध में आवाज उठाई।

स्वामी विवेकानंद (1863-1902) - 12 जनवरी 1863 को जन्मे नरेन्द्र, जो आगे चलकर स्वामी विवेकानंद कहलाए, दलितों की व्यवस्था को देखकर दुःखी होते थे। इसी कारण 1897 में रामकृष्ण मिशन की स्थापना की, जिसका उद्देश्य दलितों का कल्याण एवं उनका सामाजिक शैक्षिक विकास करना था। इन्होंने अलग-अलग व्यक्तियों के समूह बनाकर देश सेवा का कार्य किया।

एनी बिसेन्ट (1847- 1933)- शिक्षा और समाज सुधार के क्षेत्र में एनी बिसेन्ट का नाम अत्यंत ही आदर के साथ लिया जाता है। उनका जन्म 1847 में लंदन में हुआ। वे सामाजिक समस्याओं के प्रति अत्यंत ही

चिंतित थी। इसी कारण उन्होनें नेशनल रिफार्मर के संपादक ब्राडलो के साथ मिलकर समाज सुधार के क्षेत्र में अत्यंत महत्त्वपूर्ण कार्य किया । उन्होंने आबादी का नियम एक परिपत्र लिखा, जिसमें जनन-नियंत्रण की आवश्यकता पर अत्यधिक बल दिया गया। सन 1881 में मैडम बलावस्की तथा कर्नल आलकट ने मद्रास में ब्रह्म समाज की स्थापना की। बिसेन्ट ने सारा जीवन इसी में लगा दिया। थियोसोफिकल सोसाइटी की स्थापना और प्रारंभिक कार्यक्रम में इनका मुख्य योगदान था । सन1907 में वे भारत में थियोसोफिकल सोसाइटी की अध्यक्षा बन गई। थियोसोफिकल सोसाइटी ने निम्न उद्देश्योंको लेकर समाज में कार्य किया -

- ❖ मानव जाति के लिए एक ऐसे सार्वभौमिक भ्रातृत्व का आधार-बिंदु तैयार करना जिसमें जाति, धर्म, लिंग, वर्ण आदि का कोई भेद-भाव न हो।
- ❖ धर्म, दर्शन और विज्ञान के तुलनात्मक अध्ययन को प्रोत्साहित करना।
- ❖ प्रकृति के रहस्यपूर्ण नियमों तथा मनुष्य की अंतर्निहित शक्तियों के विषय में अन्वेषण करना।

एनी बिसेंट ने शिक्षा के क्षेत्र में भी अत्यधिक कार्य किया और शिक्षा के महत्त्व को बताते हुए व्यापक प्रचार-प्रसार किया । 1917 में ऐनी बिसेंट को इंडियन नेशनल कांग्रेस की अध्यक्षा बना दिया गया । उनकी प्रमुख पुस्तकों में 'आत्म कथा', 'प्राचीन ज्ञान', उपनिषदों का ज्ञान' आदि मुख्य हैं।

महात्मा गांधी (1869-1947) -गांधी जी ने हमेशा ही समाज के आवश्यकता ग्रस्त व्यक्तियों की सहायता किसी-न- किसी रूप में करने का प्रयास किया है। गांधी जी ने मानव को एवं मानव गरिमा और आत्मसम्मान को विशेष महत्व दिया । आज वे ही मूल्य समाज कार्य के मूल्य माने जाते हैं। गांधी द्वारा अनेक प्रशिक्षण केंद्रो की स्थापना की गई जिसमें लोग साथ-साथ कार्य किया करते थे । गांधी स्वयं ही रोगियों, अछूतों, ग्रामीणों के बीच उनके साथ मिलकर कार्य करते थे । गांधी द्वारा अनेक रचनात्मक कार्यक्रमों के माध्यम से समाज कार्य को विभिन्न रूपों में करने का प्रयास किया गया। जिसमें से मुख्यरूप से कौमी एकता , अस्पृश्यता –निवारण, शराबबंदी, खादी, ग्रामोद्योग, गांवों की सफाई, नई या बुनियादी तालीम, बडों की तालीम, स्त्रियां , आरोग्य के नियमों की शिक्षा, प्रांतीय भाषाओं, राष्ट्रभाषा, आर्थिक समानता, किसान, मज़दूर, आदिवासी, कोढी एवं विद्यार्थी के माध्यम से समाज के प्रत्येक क्षेत्र में कार्य करने का प्रयास किया ।

उपर्युक्त प्रमुख व्यक्तियों एवं संस्थाओं के अतिरिक्त कुछ अन्य महत्त्वपूर्ण व्यक्ति एवं संस्थाओं को समाज कार्य योगदान के क्षेत्र में शामिल किया जा सकता है-

- ❖ सन 1815 में राजाराम मोहन राय द्वारा आत्मीय समाज की स्थापना की गई जो बाद में चलकर बह्म समाज कहलाया । यह समाज सती प्रथा के विरूद्ध सेरामपुर मिशनरियों द्वारा प्रारंभ किया गया।
- ❖ ईश्वर चंद्र विद्यासागर ऐसे प्रथम व्यक्ति थे जिन्होंने विधवा विवाह विरोध के खिलाफ आंदोलन चलाया। उनके सतत प्रयासों से ही हिंदू विधवा पुनर्विवाह अधिनियम1856 पारित किया गया ।

- अगस्त 1848 में ज्योतिराव फुले ने लड़कियों के लिए विद्यालय खोला।
- सन 1861 में न्यायमूर्ति रानाडे ने विधवा पुर्नविवाह के कारणों और हितों को ध्यान में रखते हुए विधवा विवाह एसोसिएशन की स्थापना की जिसका उद्देश्य विधवा पुर्नविवाह को प्रोत्साहन देना था।
- केशवचंद्र सेन ने स्त्री शिक्षा पर अधिक जोर दिया।
- सन 1867 में प्रार्थना समाज की स्थापना की गई।
- आर्य समाज की स्थापना 1875 में की गई जिसका उद्देश्य मूर्ति पूजा, जाति प्रथा, बाल विवाह, छुआ-छूत प्रथा के विरूद्ध तथा विधवा पुनर्विवाह करने के पक्ष में था।
- सन 1882 में शशिपद बेनर्जी द्वारा बंगाल में हिंदू विधवाओं केलिए एक विधवा गृह की नींव डाली।
- सन 1882 में पंडित रमाबाई ने आर्य महिला समाज का गठन किया। इसके साथ भारतीय ईसाई मिशनरियों के दृष्टिकोण और उनकी सोच के समर्थन में महिलाओं की स्थिति के सुधार में कार्य किया।
- स्त्रियों की शिक्षा पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता पर जनता का ध्यान आकर्षित कराते हुए 1883 में केश्वचंद्र सेन द्वारा शिक्षा पर विशेष बल दिया गया।
- सन 1896 में कार्वे द्वारा पूना में विधवा गृह की स्थापना की गई।
- सन 1892 में युवा सुधारकों ने मद्रास में मद्रास हिंदू समाज सुधार संघ की स्थापना की।
- सन 1905 में गोपाल कृष्ण गोखले द्वारा 'सर्वेन्ट ऑफ इंडिया सोसाइटी' की नींव डाली गई। इसके द्वारा राजनैतिक कार्यों के साथ -साथ सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक और दलित वर्ग के लिए कार्य आरंभ किए गए।
- 1906 में वी.आर.शिंदे द्वारा मुंबई में भारत दलित वर्ग मिशन समाज की स्थापना की गई।
- 1908 में मुंबई संघ द्वारा सेवा सदन की स्थापना की गई। इसका उद्देश्य महिला कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षित करना था।
- 1917 में समाज सेवा सम्मेलन की पहली बैठक की गई।
- 1917 में ही एनी बिसेंट एवं मारगैरेट कासिन्स द्वारा मद्रास में प्रांतीय महिला संघ की स्थापना की।
- 1920 के दशक उपरांत डॉ. भीमराव अंबेडकर ने दलितों के सर्वांगीण विकास हेतु कार्य किए।
- 1925 में राष्ट्रीय स्तर पर महिलाओं की राष्ट्रीय सभा की गई।

ज्ञान शांति मैत्री

- ❖ एन.एम.जोशी तथा चंद्रावरकर ने मुंबई में सोशल सर्विस लीग की स्थापना की जो मिल में काम करने वाले लोगों के लिए तथा उनके बच्चों के लिए मनोरंजन का प्रबंध करती थी व रात्रि पाठशालाएँ चलाती थी।

उर्पयुक्त विद्वानों ने मध्य काल में समाज कार्य को लेकर अनेक प्रयास किए जिनके परिणामस्वरूप आज समाज कार्य को काफ़ी हद तक मान्यता प्राप्त हो रही है, किंतु यह कार्य अधिकतर मानवीय पक्ष आधार पर ही थे। यह कार्य वर्तमान आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर ही किए जाते थे। इन प्रयासों में कोई स्पष्ट सिद्धांत प्रणालियाँ नहीं थी। इस दृष्टिकोण को सहायता करने वाले लोगों ने बाद में संशोधित किया जब पश्चिमी देशों में एक व्यवसाय के रूप में समाज कार्य विकसित हुआ और इसका प्रभाव भारत में भी देखा गया।

1.4 आधुनिक काल समाज कार्य का इतिहास

स्वतंत्रता प्राप्ति पश्चात के काल को हम आधुनिक काल के रूप में देख रहे हैं। इस काल के प्रारंभ से ही सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक एवं विकास जैसे अनेक कार्यक्रमों को समाज कार्य के क्षेत्र में प्रारंभ किया गया। बच्चों, युवाओं एवं वृद्धों के लिए अनेक प्रकार के कार्यक्रमों को चलाया गया। बच्चों के लिए एन.सी.सी., एन.एस.एस., गर्ल्स स्काउट, ब्वायज स्काउट आदि संगठनों को बनाया गया। युवाओं के कल्याण हेतु ,युवा कल्याण निदेशालय एवं नगरों में युवक कल्याण समितियाँ बनाई गई। जो महिलाएँ नौकरी करने के लिए जाती थी उनके लिए अलग से मनोरंजन आवास गृहों का निर्माण किया गया। वृद्धों के लिए देवा केंद्रों का निर्माण किया गया जिसके माध्यम से वृद्ध एक-दूसरे के साथ मिलकर जीवन-यापन कर सकें, तो इस प्रकार से अनेक कार्य स्वतंत्रता के पश्चात होने लगे। यदि व्यावसायिक एवं औपचारिक रूप से देखा जाए तो समाज कार्य का प्रारंभ बीसवीं शताब्दी में ही हुआ जब मुंबई में एक संस्था सोशल सर्विस लीग ने छह सप्ताह का संक्षिप्त पाठ्यक्रम समाज कार्यकर्ताओं के लिए चलाया। उन्हें प्रशिक्षण देकर समाज की वर्तमान समस्याओं से लड़ने के लिए सक्षम बनाया। तत्पश्चात 1936 में सर दोराबजी ग्रेजुएट स्कूल ऑफ सोशल वर्क की स्थापना मुंबई के एक स्लम क्षेत्र देवनार में की गई। इस संस्था का मुख्य उद्देश्य समाज कार्य को एक व्यावसायिक सेवा प्रदान करने वाले यंत्र के रूप में विकसित करना है, जिससे समाज कार्य को एक व्यावसायिक रूप प्रदान किया जा सके और कार्यकर्ताओं में व्यावसायिक गुण विकसित किए जा सके। समाज कार्य करते समय समाज कार्य की मुख्य प्रणालियों(सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य, सामाजिक समूह कार्य, सामुदायिक संगठन, सामाजिक क्रिया, समाज कल्याण प्रशासन और सामाजिक शोध) का प्रयोग कर समाज में व्यक्ति, समूह और समुदाय की समस्याओं का उचित समाधान किया जा सके। वर्तमान में यह विद्यालय टाटा इन्स्टीट्यूट ऑफ सोशल साइन्स के नाम से जाना जाता है और यहाँ समाज कार्य से संबंधित बीएस.डब्ल्यू., एम.एस.डब्ल्यू., एम.फिल. एवं पीएच.डी. तक की औपचारिक शिक्षा प्रदान की जाती है। इसके साथ स्वंतत्र भारत में संस्थाओं का खुलना प्रारंभ हो गया

और 1947 में दिल्ली स्कूल ऑफ सोशल वर्क की स्थापना की गई। इसी वर्ष काशी विद्यापीठ में समाज विज्ञान संकाय के अतंर्गत समाज कार्य विभाग खुला जिसमें बीएस.डब्ल्यू., एम.एस.डब्ल्यू., एम.फिल. एवं पीएच.डी. तक संपूर्ण अध्ययन कार्य कराया जाता है।1949 में लखनऊ विश्वविद्यालय में समाज कार्य में शिक्षा प्रारंभ हुई। इसके पश्चात देश के अन्य विश्वविद्यालयों जैसे - आगरा, इंदौर, मद्रास, पटना, कलकत्ता, जबलपुर, महाराष्ट्र (मुंबई, नागपुर, वर्धा इत्यादि) जगह पर समाज कार्य पाठ्यक्रमों को प्रारंभ किया गया जिसमें औपचारिक शिक्षा के माध्यम से व्यावसायिक एवं क्षेत्र कार्य आधारित शिक्षा प्रदान की जाती है। 1960 में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (यूजीसी) ने अपनी एक समिति नियुक्त की जिसने अपने प्रतिवेदन में यह संस्तुति की है कि समाज कार्य की शिक्षा अन्य विद्यालयों में पूर्वस्नातक स्तर पर भी होनी चाहिए।

भारत में समाजकार्य के विद्यालयों का विकास मुख्य रूप से स्वतंत्रता के पश्चात हुआ है। 1948 तक केवल टाटा इन्स्टीट्यूट ऑफ सोशल साइन्स में ही समाज कार्य संबंधी शिक्षा दी जाती थी, परंतु 1958 में समाज कार्य के 6 विद्यालय, 1958 में 13, 1961 में 20 और अब लगभग 25 विद्यालय है जिनमें से 17 में केवल समाज कार्य की शिक्षा दी जाती है और 8 में अन्य प्रकार की संबंधी शिक्षा भी प्रदान की जाती है। (पाण्डेय, 2010 : 60) वर्तमान समय में समाज कार्य के क्षेत्र में अब नयापन आने लगा है और समाज कार्य क्षेत्र में जाकर अभ्यास कार्य कराया जाने लगा है जिससे विद्यार्थियों को समाज कार्य के संबंध में व्यावहारिक ज्ञान भी प्राप्त हो सके। वे समाज में उत्पन्न समस्याओं का समाधान करने में सक्षम बन सके। आज आवश्यकता है कि समाज कार्य जैसे पाठ्यक्रमों का व्यावहारिक पक्ष मजबूत किया जाए और जिससे समाज कार्य को प्रत्येक संकटग्रस्त व्यक्ति तक पहुंचाया जा सके।

आज भारतीय परिदृश्य में अनेक क्षेत्रों में समाज कार्य को देखा जा सकता है जिसने वर्तमान समय में समाज की अनेकों समस्याओं से सुलक्षाने में सहायक के रूप में कार्य किया है।

- **विद्यालीय समाज कार्य -** वर्तमान समय में विद्यालय समाज कार्य एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण कार्य समझा जाने लगा है। विद्यालय समाज कार्य के माध्यम से छात्र-छात्राओं में व्यक्तित्व विकास जैसे पक्षों पर विशेष बल दिया जा रहा है। साथ ही साथ जो विद्यार्थी किसी अन्य समस्या से ग्रस्त रहता है समाज कार्यकर्ता के माध्यम से, शिक्षकों एवं अभिभावकों के साथ मिलकर इसे हल करने का प्रयास किया जाता है। आज के समय में विद्यार्थियों का सामंजस्य भी एक प्रमुख समस्या बनकर सामने आ रही है। विद्यार्थी कक्षा में, सहपाठियों के साथ एवं और तो और अपने परिवार में सामंजस्य स्थापित नहीं कर पाता है जिससे वह गलत रास्तों को ग्रहण कर लेता है, जिससे अनेक बाल-अपराध जैसी समस्याएँ दिनों-दिन बढ़ती जा रही है। समाज कार्यकर्ता ऐसे बच्चों के सामंजस्य हेतु अनेक प्रकार के रचनात्मक कार्यक्रमों को इस प्रकार से आयोजित करता है कि समूह गतिविधियों के माध्यम से समूह लक्ष्य तथा इसी तरह से व्यक्तिगत लक्ष्य प्राप्त करने के लिए एक साथ मिलकर कार्य करें।

❖ **चिकित्सीय समाज कार्य -** चिकित्सीय समाज कार्य आधुनिक समय में सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य माना जाने लगा है। विभिन्न अस्पतालों के माध्यम से यह कार्य विभिन प्रकार की प्रणाली के माध्यम से कार्यकर्ता द्वारा दिया जाने लगा है । मानव समाज एक परिवर्तनशील समाज है। इसमें निरंतर परिवर्तन होता रहता है। बढ़ते औद्योगीकरण, नगरीकरण एवं संयुक्त परिवार के पतन ने दिनों-दिन कई प्रकार की आर्थिक सामाजिक एवं मनोसामाजिक समस्याओं को जन्म दिया है। परिणामस्वरूप इन समस्याओं के निवारण एवं निराकरण हेतू चिकित्सीय समाज कार्य की महत्त्वपूर्ण उपयोगिता को देखा जा रहा है। प्रोफेसर राजाराम शास्त्री ने चिकित्सीय समाज कार्य को परिभाषित करते हुए कहा था कि चिकित्सीय समाज कार्य का मुख्य उद्देश्यचिकित्सीय सहूलियतों का उपयोग रोगियों के लिए अधिकाधिक फलप्रद एवं सरल बनाने तथा चिकित्सा में बाधक मनोसामाजिक दशाओं का निराकरण करना है। चिकित्सीय समाज कार्य के इतिहास पर यदि नज़र डाला जाए तो इसकी शुरूआत व्यवस्थित रूप से अमेरिका के मैसाचुसेट जनरल अस्पताल में हुई। डॉ. रिचर्ड सी केवट पहले व्यक्ति थे, जिन्होंने यह स्वीकार किया कि रोगों का सामाजिक ज्ञान अत्यंत आवश्यक है, क्योंकि इसकी सामाजिक स्थिति का प्रभाव रोगी पर पड़ता है। 1920 के दशक में समाज कार्यकर्ताओं की चिकित्सा के क्षेत्र में भर्ती बढ़ती हुईनज़र आई है, जिसके माध्यम से अपाहिज एवं आवश्यकता ग्रस्त व्यक्ति के उपचार हेतु कार्यकर्ताओं को नियुक्त किया गया । भारत में चिकित्सीय समाज कार्य के इतिहास पर यदिनज़र डाली जाए तो 1946 में सर्वप्रथम चिकित्सा समाज कार्यकर्ता की नियुक्ति मुंबई के जे.जे. अस्पताल में हुई। कार्यकर्ता अपनी निपूणताओं से संभावित रोगियों के लिए समाज कार्य तकनीकों का प्रयोग मनोचिकित्सीय प्रकार से करता है एवं उनके परिवारों को भावनात्मक सहयोग उपलब्ध कराने के लिए मदद करता है। कार्यकर्ता द्वारा इस प्रकार का प्रयास किया जाता है कि सेवार्थी को किस प्रकार की चिकित्सीय सुविधा उपलब्ध कराई जाए जिससे वह अपने परिवार में सामंजस्य स्थापित कर पाए। समाजकार्य की प्रमुख प्रणाली समूह कार्य के माध्यम से रोगी और उनके परिवारों के सदस्यों को सहयोगात्मक चिकित्सा उपलब्ध कराई जाती है। समूह कार्य दुश्चिंता, तनाव एवं एकाकीपनजैसी स्थिति को दूर करने में सहायता करता है।आज के समय में यदि देखा जाए तो राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन (एन.आर.एच.एम) जैसे सरकारी कार्यक्रमों में सामाजिक कार्यकर्ताओं की नियुक्ति होने लगी है जिसमें बच्चों एवं माताओं के पोषाहार से लेकर उनके संपूर्ण रोगों का अध्ययन किया जा रहा है। वर्तमान में चिकित्सीय समाज कार्य का क्षेत्र अत्यधिक बढ़ता जा रहा है और यह सरकारी एवं निजी अस्पताल देखा जा सकता है।

❖ **नशाबंदी केंद्रों में समाज कार्य -** नशा करना या व्यसन करना आज के समाज में एक चुनौतीपूर्ण गंभीर सामाजिक समस्या बनती जा रही है जिसने समाज के प्रत्येक वर्ग को प्रभावित किया है चाहे वह पुरूष हो या महिला, वृद्ध हो या जवान या फिर बच्चे और उच्च, निम्न या

मध्यम वर्ग। प्रत्येक समाज के वर्ग को इस नशाखोरी जैसी भयावह समस्या ने अपने चंगुल में कर लिया है । समूह कार्यकर्ताओं के माध्यम से इसे दूर करने का प्रयास किया जा सकता है जिससे व्यक्ति समाज में कुशल जीवनयापन कर सके। कार्यकर्ता द्वारा नियंत्रण, रोकथाम और उपचार के माध्यम से इस कार्य को किया जाता है। यदि हम एक उदाहरण के रूप में समझे तो यदि कार्यकर्ता एक शराबी व्यक्ति का अध्ययन करेगा तो सर्वप्रथम वह व्यक्ति के शराब पीने के कार्य-कारणों का अध्ययन व्यक्ति से जुड़े समस्त पहलुओं से करेगा, जिसमें व्यक्ति के परिवार, आस-पडोस एवं मित्रगणों की हम भूमिका होगी। तत्पश्चात निदान की योजना तैयार करेगा और फिर उपचार के माध्यम से शराब को नियंत्रित करने का प्रयास करेगा। इस प्रकार कार्यकर्ता द्वारा नशाखोरी जैसी भयानक समस्या से व्यक्ति को निजात दिलायी जा सकती है जिसने संपूर्ण समाज को प्रभावित किया है।

- **युवाओं के क्षेत्र मेंसमाज कार्य** - युवा शक्ति, ऊर्जा, क्षमता, कुशलता एवं परिश्रम से भरपूर होता और यदि उन्हें उचित मार्गदर्शन दिया जाए तो यह समाज के निर्माण में एक आवश्यक रूप में नज़र आते हैं। किंतु वर्तमान समय में युवाओं को भी अनेक समस्याओं जैसे बेरोज़गारी, नशाखोरी एवं अपराध जैसी कुव्यवस्थाओं ने जकड़ लिया है जिससे उनका एवं राष्ट्र का विकास रूका हुआ नज़र आ रहा है। युवाओं की भागीदारी की ओर यदिनज़र डालें तो राजनैतिक दल से लेकर हर कोई युवाओं के महत्त्व को स्वीकार कर रहा है एवं विद्यार्थी नेतृत्व को महत्त्व दे रहे हैं। सभी विश्वविद्यालयों और कालेजों में विद्यार्थी विंग स्थापित किए गए थे। ये समूह संगठित प्रयासों के माध्यम से विद्यार्थी समुदाय की सामान्य आवश्यकताओं और समस्याओं पर ध्यान केंद्रित कर उनका समाधान निकालते हैं। भारत सरकार ने1988 में निर्मित राष्ट्रीय युवा नीति को वर्ष 2003 में और अधिक व्यापक व सशक्त रूप प्रदान किया है जिससे युवाओं का सर्वांगीण विकास किया जाए। अनेक संस्थाओं जैसे युवा समाज, एन.सी.सी., ग्रामीण युवा क्लबों की स्थापना कराई गई है। कुछ गैर-सरकारी युवा और विद्यार्थी संगठनों जैसे एम.सी.ए. वाई, डब्ल्यू.सी.ए., स्काउट्स और गाइड्स इत्यादि का उद्गम हुआ है। नेहरू युवा केंद्र की स्थापना 1972 में हुई। यह छठी पंचवर्षीय योजना का एक भाग था जिसका भारत में समाज कार्य के ऐतिहासिक विकास के संदर्भ में वर्णन किया जा सकता है। इस केंद्र के कारण ग्रामीण क्षेत्रों के युवाओं को प्रशिक्षण देकर उनमें सामूहिक भावना को पैदा कर सामूदाय आधारित कार्यों को करना एव युवा नेतृत्व का निर्माण करना था जो अत्यंत ही प्रभावी शाबित हुआ। 1969 में गैर-सरकारी मंच पर विश्व युवक केंद्र का निर्माण कर युवा संगठन तथा युवा सेवाओं को विकसित करने की आवश्यकता एवं उनमें जागरूकता लाने के लिए प्रशिक्षण देकर कार्यकर्ता तैयार करने पर बल दिया जाता है।

❖ **महिला एवं बाल-विकास के क्षेत्र में समाज कार्य -** समाज कार्य के क्षेत्र में एक और महत्त्वपूर्ण कार्य महिला एवं बालविकास का हैजो आज के दौर में कार्यकर्ताओं द्वारा आवश्यक रूप से किया जा रहा है। प्राचीन काल से ही महिलाओं को अधिक कमज़ोर माना जाता रहा है। उनके साथ हमेशा से ही भेदभाव किया जाती रहा है। हमेशा ही लिंगभेद होते आ रहा है। जिस कारण से वे हमेशा पिछड़ी रही। जबकि यह सर्वविदित है कि महिलाओं की भागीदारी के बिना राष्ट्र व समाज का विकास असंभव है। समाज कार्य के माध्यम से आवश्यकता ग्रस्त महिलाओं को शिक्षण प्रशिक्षण देकर उन्हें आत्मनिर्भर बनाने का कार्य किया जाता है । यदि कहें तो महिलाओं के सर्वांगीण विकास हेतु सरकार द्वारा भी कुछ पहल की जा रही हैजिनमें प्रमुख रूप से वर्ष 1990 को बालिका वर्ष के रूप में मनाना, वर्ष 2001 को महिला वर्ष के रूप में मनाना, यू.एन.ओ.द्वारा 1975 को अंतरराष्ट्रीय महिला वर्ष और 1975-76 को अंतरराष्ट्रीय महिला दशक के रूप में घोषित करना और हमारे देश में 8 मार्च को महिला दिवस के रूप में मनाना शामिल है। भारत सरकार द्वारा प्रत्येक पंचवर्षीय योजना में भी महिलाओं को लेकर अनेक कार्यक्रमों को संचालित किया जा रहा है। सरकार द्वारा मुख्य रूप से निम्नलिखित प्रमुख योजनाएँ चलाई जा रही है जिनमें प्रमुख हैं –

डवाकारा योजना 1982 में एकीकृत ग्राम्य विकास योजना की सहायक योजना के रूप में ग्रामीण क्षेत्रों की महिलाओं एवं बच्चों के लिए प्रारंभ की गई । महिला विकास निगम(1986-87) में महिला विकास निगम को इस उद्देश्य के साथ बनाया गया कि महिलाओं में अधिक रोज़गार के साधन प्रदान किए जाऐ। महिलाओं को स्वरोज़गार हेतु वित्तीय सहायता-महिलाओं में उद्यम को बढ़ावा देने के लिए निगम अपने फंडों में से 3 प्रतिशत से 7 प्रतिशत ब्याज दर पर ऋण देता है। इसके अतिरिक्त विशेष केंद्रीय सहायता के अधीन अनुसूचित जाति की पीले कार्ड धारक महिलाओं को स्वीकृत ऋण का25 से 35 प्रतिशत तक की पूँजी में सबसिडी दी जाती है। महिला समाख्या कार्यक्रम के (1988) के माध्यम से समाज एवं अर्थव्यवस्थामें महिलाओं द्वारा अपने योगदान की उपयोगिता पहचान सकने में उनकी सहायता करना एवं वर्तमान शिक्षा प्रणाली में नए जीवन का संचार करना एवं यह विश्वास दिलाना कि महिलाएँ स्वयं अपनी एवं अपने बच्चों की देखभाल कर सकती है। इस प्रकार सरकार द्वारा अनेक कार्यक्रमों को महिलाओं के विकास हेतु चलाया जा रहा है जिसमें कार्यकर्ता समूह कार्य के माध्यम से इन कार्यक्रमों को संचालित करने में सहायता करता है। महिलाओं को ज्यादा-से-ज्यादा सहभागी होने के लिए प्रेरित करता है। दूसरी ओर बालकों के विकास हेतु भारत सरकार द्वारा वर्ष1974 में बाल-नीति का निर्माण किया गया जिसमें अनेक प्रावधान बच्चों के लिए किए गए और साथ-ही-साथ प्रत्येक पंचवर्षीय योजना में भी बच्चों के कल्याण हेतु कार्यक्रमों को सुनिश्चित किया गया है। विभिन्न संचालित योजनाओं जैसे महिला एवं बाल विकास मंत्रालय की स्थापना1985

में की गई। समेकित बाल विकास सेवाएँ जिसे आईसीडीसी भी कहा जाता है को 2 अक्टूबर 1975 से इस उद्देश्य के साथ बनाया गया कि 0-6 वर्ष के बच्चों के पोशाहार और स्वास्थ्य में सुधार लाया जाए। धारा 21 ए में भी 6 से 14 वर्ष के बच्चों को निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा का प्रावधान किया गया है। 1995 से मध्याल भोजन को प्रारंभ किया गया है। इन सभी कार्यक्रमों में गैर-सरकारी संगठन और समाज कार्यकर्ता द्वारा अपने स्तर से कार्यक्रमों को क्रियान्वित करने में सहायता करते हैं और समूह प्रयास से यह तय करते हैं कि कैसे इन योजनाओं को सफल बनाया जाए जिससे कि महिला एवं बाल विकास के क्षेत्र में भी समाज कार्यकर्ता अपनी अहम भागीदारी को सुनिश्चित कर सकें।

❖ वृद्धों के क्षेत्र में समाज कार्य

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 41 में वर्णित राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांतों के अंतर्गत देश के विभिन्न राज्य सरकारों तथा संघीय क्षेत्रों ने वृद्ध व्यक्तियों की सहायता हेतु वृद्वावस्थापेंशन योजना को प्रारंभ किया है। सर्वप्रथम इस योजना को उत्तर प्रदेश सरकार ने वर्ष 1957 में प्रारंभ किया। इसके अलावा हैल्पेज न्यासकोष, हैल्पेज इंडिया (1978), एज-केयर-इंडिया (1980) एवं दिवा केंद्र इत्यादि को स्थापित कर वृद्धों की समस्याओं को दूर करने का प्रयास किया जा रहा है, जिसमें कार्यकर्ता वृद्धों के कार्यों को सृजनात्मक कार्यक्रमों के रूप में बदलने का प्रयास करता है। उनमें उत्पन्न सांवेगिक समस्याओं को दूर करने का भी प्रयास करता है। परिवार में समायोजन स्थापित करने में सहायता करता है और संगठित मनोरंजन के साधन को उपलब्ध कराने में सहायता करता है।

❖ विशेष योग्यता रखने वाले व्यक्तियों के क्षेत्र में समाज कार्य

विशेष योग्यता रखने वाले व्यक्ति, जिन्हें पूर्व में बाधित व्यक्ति कहा जाता था, ऐसे व्यक्ति जो अपनी व्यक्तिगत, शारीरिक, मानसिक एवं सामाजिक सीमाओं एवं परिस्थितियों के कारण अपना जीवन सामान्य रूप से बिताने में असमर्थ हैं, को विशेष योग्यता रखने वाले व्यक्ति कहा जाता है। ऐसे व्यक्तियों को भारत सरकार के समाज कल्याण विभाग ने 4 भागों में बाँटा है- प्रथम शारीरिक दृष्टि से विकलांग- ऐसे व्यक्ति जिनकी शारीरिक क्षमता उनके किसी भी शारीरिक अंग द्वारा ह्रास विकृति या किसी अन्य कारण से खराब हो गयी है। दूसरे- नेत्रहीन, तीसरे- मूक-बधिर और चौथे मानसिक दृष्टि से मंदित/ कुष्ठ रोगी। इन सभी व्यक्तियों के साथ सामाजिक कार्यकर्ता समस्याओं को समझकर उनका उपचार करता है तथा उसे संस्था में समुदाय में उपलब्ध साधनों के उपयोग में सहायता करता है साथ ही वह परिवार के सदस्यों को सहयोग एवं मनोसामाजिक समस्याओं का समाधान करने में सहयोग प्रदान करता है। विशेष योग्यता रखने वाले व्यक्तियों के लिए भारत सरकार द्वारा विभिन्न क्षेत्रों में कुछ महत्त्वपूर्ण संस्थाओं को बनाया

गया है, जिसमें इन व्यक्तियों की आवश्यकताओं को ध्यान मेंरखकर इनका निर्माण किया गया है।

संस्थान	मंत्रालय	स्थान	वर्ष
राष्ट्रीय दृष्टि विकलांग संस्थान (NIVH)	केंद्रीय षिक्षा मंत्रालय के अधीन	देहरादून	1950
राष्ट्रीय अस्थि विकलांग संस्थान (NIOH)	कल्याण मंत्रालय द्वारा स्थापित	कलकत्ता	1978
अली यावर जंग राष्ट्रीय श्रवण विकलांग संस्थान (AYJNIHN)	कल्याण मंत्रालय के अधीन	मुंबई	9 अगस्त 1983
राष्ट्रीय मानसिक विकलांग संस्थान (NIMH)	कल्याण मंत्रालय के अधीन	स्वायत्त संस्था	1984

उपर्युक्त क्षेत्रों में समाज कार्यकर्ता द्वारा समाज की समस्याओं को दूर करने का प्रयास किया जाता है, जिसमें व्यक्ति समाज में अपना जीवन-यापन सुचारू रूप से कर पाए।

1.5 सारांश

भारतीय परिदृश्य में समाज कार्य दिनों-दिनों नए-नए आयामों की ओर अग्रसर हो रहा है। प्राचीन काल से ही संपूर्ण विश्वमें एक-दूसरे की सहायता करने की परंपरा रही है चाहे उसका माध्यम या विधि कोई भी क्यों ना हो। प्राचीन काल से लेकर आधुनिक काल तक इसके कार्य क्षेत्रों में हुए अनेक परिवर्तनों को देखा जा सकता है। पूर्व के कालों में यह कार्य केवल दान, धर्म या सेवा भावना के आधार पर किया जाता था, परंतु वर्तमान समय में समाज कार्य को एक व्यासायिक दृष्टिकोण के रूप में देखा जा रहा है, जिसमें विभिन्न प्रणालियों एवं तकनीकियों केमाध्यम से समाज कार्य को संपन्न किया जाता है।

1.6 बोध प्रश्न

1. भारतीय परिदृश्य में समाज कार्य के एतिहासिक विकास पर चर्चा कीजिए।
2. प्राचीन काल में समाज कार्य किस प्रकार किया जाता था? स्पष्ट कीजिए।
3. मध्ययुगीन काल में समाज कार्य को रेखांकित कीजिए।

4. आधुनिक काल में समाज कार्य के विकास पर चर्चा कीजिए।
5. विभिन्न क्षेत्रों में समाज कार्य की आवश्यकता पर प्रकाश डालिए।

1.7 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

1. सिंह सुरेंद्र, मिश्र.पी.डी. (2001). *समाज कार्य* लखनऊ :न्यू रॉयल बुक कंपनी।
2. प्रो.नील एबेल एवं डॉ.अशोक सरकार(2009).*समाज कार्य का उद्गम और विकास*.नई दिल्ली: समाज कार्य विद्यापीठ,इग्नू।
3. डा. राकेश द्विवेदी एंव डा. सरिता गौतम (2014). *समाज कार्य इतिहास दर्शन एवं क्षेत्र* कोटा: वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय।
4. पाण्डेय बालेस्वर (2003). *समाज कार्य,* नई दिल्ली: राज कमल प्रकाशन।
5. सिंह, ए.एन. एवं सिंह, ए.पी. (2008). *समाज कार्य*. लखनऊ: (इंडिया) प्रा.लि.।
6. तेज संगीता एवं पाण्डेय तेजस्कर(2010). *समाज कार्य*. लखनऊ : जुबली एच फाउंडेशन।

ज्ञान शांति मैत्री

इकाई -2
विभिन्न धर्म और समाज कार्य

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य
2.1 प्रस्तावना
2.2 हिंदू धर्म एवं समाज कार्य
2.3 इस्लाम एवं समाज कार्य
2.4 ईसाई धर्म एवं समाज कार्य
2.5 बौद्ध धर्म एवं समाज कार्य
2.6 जैन धर्म एवं समाज कार्य
2.7 सिख धर्म एवं समाज कार्य
2.8 सारांश
2.9 बोध प्रश्न
2.10 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

2.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन पश्चात आप -

1. विभिन्न धर्मों एंव समाज कार्य के आपसी अंतर्संबंधों की समझ विकसित कर सकेंगे।

ज्ञान शांति मैत्री

2.1 प्रस्तावना

समाज कार्य अनुशासन का उद्गम सामान्यत: धार्मिक लोकाचार और करूणा में देखा जाता है, इसलिए यह प्रासंगिक होगा कि सामान्य तौर पर समाज कार्य के दर्शन में विभिन्न धर्मों के योगदान और विशेष तौर पर, भारत में इसके व्यवहार की पड़ताल (परख) की जाए। समाज कार्य समाज में साझेपन को बढ़ावा और पोषण देने का एक महत्वपूर्ण साधन है। धर्म की अवधारणा को गहराई से समझने पर, समाज कार्यकर्ताओं को प्रभावपूर्ण व्यावसायिक सेवा प्रदान करने में मदद मिल सकती है।

2.2 हिंदू धर्म और समाज कार्य

हिंदू दर्शन और परंपरा में सेवा तथा करूणा की भावना का काफ़ी महत्व है। हिंदू अवधारणाओं में इस तथ्य पर जोर दिया गया है कि व्यक्ति का अपना कल्याण दूसरों के कल्याण से जुड़ा है। व्यावसायिक समाज कार्य की तरह, हिंदू दर्शन भी इसमें विश्वास करता है कि जीवन के लक्ष्य को प्राप्त करने की

दिशा में मनुष्य बदल सकते हैं और बदलते भी हैं। धर्म की अवधारणा और पालन का घनिष्ठ संबंध सामाजिक कार्यप्रणाली की अवधारणा से है । जीवन की किसी भूमिका में किसी विशिष्टस्थिति में हमसे जो अपेक्षित है उसे करने को, उसे अच्छी तरह से भरने और उससे संतोष प्राप्त करने को मानसिक कल्याण का आधार माना गया है।

तो सामाजिक कार्य के निष्पादन का एक अत्यंत महत्वपूर्ण घटक कार्यकर्ता और व्यावसायिक सहायता के इच्छुक व्यक्ति का परस्पर संबंध है। समाज कार्य के विभिन्न सिद्धांतों में, स्वीकृति का सिद्धांत सर्वाधिक बुनियादी सिद्धांत है और इसे लगभग एक परम मूल्य ही माना जाता है। मनुष्य की दिव्यता में हिंदू धर्म का विश्वास उसे इस सिद्धांत के अनुकूल बनाता है। समस्तमनुष्य आत्म प्रत्यक्षीकरण के प्रयास में लगे हैं, इस मान्यता के कारण तथाकथित गंभीर अपराधियों के प्रति भी अनिर्णयात्मक मनोवृति बनाकर रखना संभव होपाता है। हिंदू शास्त्रोंमें ऐसे अपराधियों के अनेक उदाहरण मिल जाते हैं, जिन्हें इसलिए मुक्ति मिल गई क्योंकि सभी में वास करने वाले ईश्वर को पतितपावन के रूप में देखा जाता है अर्थात गिरे हुओं को मुक्तकरने वाला । हिंदू धर्म में जीवन का लक्ष्यपरमात्मा में विलीन होना समझा जाता है, इसलिए क्षमा और करूणा के गुणों को ईश्वरीय माना जाता है । इस तरह व्यक्ति में इन गुणों का विकास वांछनीय होता है। अहिंसा के पालन में सुधार के आकांक्षी व्यक्ति के प्रति घृणा अथवा दोषारोपण का अभाव होता है। गीता में नियंत्रित भावनात्मक आसक्ति के सिद्धांत की पर्याप्त व्याख्या की गई है। 'स्थितप्रज्ञ और धीर व्यक्ति' वह है जिसने उच्च भावनात्मक स्थिरता प्राप्त कर ली है, जिसमें स्पष्ट बोध है और उच्च स्तर की आत्म-चेतना है; जो सामाजिक चेतना से युक्त है, और जो अनासक्त रहते हुए अपने सहचर प्राणियों के प्रति करूणा का भाव रखता है।

समाज कार्य में कार्यकर्ता-सेवार्थी संबंध में अंतर्निहित सत्ता और अधिकार पर बारबार आलोचनात्मक ढंग से विचार किया गया है। सेवार्थी अपने आपको अकिंचन समझता है और कार्यकर्ता को ऐसा विशेषज्ञ मानता है जो उसकी सहायता करने में सक्षम है और जिसके नियंत्रण में आवश्यक संसाधन हैं। हिंदू शास्त्र मानते हैं कि देने वाला 'दाता' लेने वाले से बढ़ कर नहीं होता। देने वाले और लेने वाले दोनों मेंएक ही ईश्वर काम करता है। देने वाले को तो, बल्कि आभार मानना चाहिए कि लेने वाले ने उसे एक अवसर दिया है कि वह नेक काम के लिए पुण्य कमा सकता है। समाज कार्य में मनुष्यों के सम्मान को जो अनिवार्य मूल्य माना जाता है, वह वास्तव में हिंदू धर्म में प्रमुख विश्वास है। यह विश्वास तो आत्मा की अवधारणा से निकला है कि व्यक्ति की वास्तविक पहचान शारीरिक तथा सामाजिक गुणों से नहीं, बल्कि उसकी दिव्यता से निश्चित होती है। सभी मनुष्योंका सम्मान होना चाहिए क्योंकि उन सभी में वही आत्मा वास करती है। मनुष्यों के जन्मजात सम्मान को मान्यता देना हिंदू दर्शन का अनिवार्य तत्वहै। स्वामी विवेकानंद के शब्दों में, 'मनुष्य में आस्था रखो, चाहे वह तुम्हें अत्यंत विद्वान लगे अथवा अत्यधिक अज्ञानी। मनुष्य में आस्था रखो, चाहे वह देवदूत जैसा दिखाई दे या फिर शैतान जैसा' (द कॉमन बेसेज़ ऑफ हिंदुइज़्म)।

समाज कार्यकर्ताओं ने कमियों(अभावों) अथवा समस्याओं पर ध्यान केंद्रित करने के बजाय जिस 'शक्ति परिप्रेक्ष्य' पर जोर देना शुरू कर दिया है, वह हिंदू धर्म में लगभग अनायास ही उभर आता है। समस्त मनुष्यों में आत्म सिद्धि की जन्मजात शक्ति और प्रवृत्ति होती है । आध्यात्मिक गुरूओं का आग्रह यह रहता है कि समस्त मनुष्यों के आंतरिक संसाधनों को बाहर लाया जाए। शुरूआत उससे की जाए जो प्रत्येक मनुष्य के पास है, इसे उजागर करने से नहीं कि उसके पास क्या नहीं है। व्यक्ति दिशाहीन हो गया है, वह भावनात्मक रूप में विचलित है, और अपने धर्म के पालन में असमर्थ है- इस वास्तविकता को मायावी संसार में जीवन की प्रकृति से ही बखूबी समझा जा सकता है। किंतु जिस व्यक्ति को सहायता की दरकार होती है वह पूरे तौर पर 'असहाय' नहीं होता ।

जन्मजात योग्यता की अवधारणा से आत्म सहायता और आत्म निर्धारण के सिद्धांतों की पुष्टि भी होती है। कार्यकर्ता प्रमुख तौर पर सेवार्थी को इस योग्य बनाता है कि वह अपने आंतरिक और बाह्य संसाधनों को जुटा सके, और वह इस प्रक्रिया को सुविधाजनक भी बनाता है। समाज कार्य की एक बहु-प्रचलित परिभाषा-समाज कार्य लोगों की मदद करता है इस बात की पुष्टि करती है सेवार्थी को अपनी स्वयं की बदलाव संबंधी प्रक्रिया का स्वामी बनना होता है।

कर्म के नियम से युक्त पुनर्जन्म की अवधारणा यह कहती है कि प्रत्येक मनुष्य में एक समान दिव्य ज्योति होने के बावजूद वह एक अद्वितीय नियति लेकर पैदा होता है। यह उस व्यावसायिक धारणा के अनुकूल है कि प्रत्येक व्यक्ति अद्वितीय होता है। इस तथ्य के बावजूद कि उसमें और उसके सामाजिक समूह में कुछ आम चारित्रिक विशेषताएँ एक जैसी होती हैं।

समाज कार्य स्वयं का विकास व्यावसायिक समाज कार्यकर्ताओं के प्रशिक्षण का अत्यंत महत्वपूर्ण अंग है। समाज कार्यकर्ता कुछ धारणाओं में विश्वास करना सीखता है, जैसे कि प्रत्येक मनुष्य अद्वितीय होता है; वह कुछ अनिवार्य मूल्य और कुछ महत्वपूर्ण गुण अपने अंदर विकसित करता है, जैसे कि करूणा, नियंत्रित भावनात्मक आसक्ति, समस्त मनुष्यों के प्रति सम्मान आदि; वह उच्च स्तर की आत्म–चेतना अर्जित करता है; भावनात्मक स्थिरता प्राप्त करता है; दूसरों की सहायता करता है, सामाजिक विवेक के प्रति संवेदनशील नागरिक बनता है, आत्म-सिद्धि की ओर लगातार प्रयास करता है; और अंतत: एक आदर्श बन जाता है। गीता में विहित निष्काम सेवा के आदर्श का मतलब मुफ्त काम करना नहीं होता। इसका मतलब होता है अपने फायदे या प्रशंसा से मुक्त होकर काम करना। इसका मतलब होता है करूणा के साथ किंतु अनासक्त होकर काम करना, और सहायता के आकांक्षी व्यक्ति पर अपनी इच्छा अथवा अपने विचार न थोपते हुए उसे मुक्त होकर उसके अनुसार क्रिया करने देना। कार्यकर्ता एक श्रोता, एक सामर्थ्यदाता, एक सहायक की भूमिका निभा सकता है अथवा सक्रिय रूप में एक शिक्षक, समन्वयक, मध्यस्थ, अथवा पक्ष समर्थक का काम भी कर सकता है; किंतु अधिकतर वह एक उत्प्रेरक काम करता है और केवल एक व्यावसायिक कार्यकर्ता होकर ही बदलाव करता है। वास्तव में, भारत में समाज कार्यकर्ता को लोग ईश्वर की तरह मानते हैं, चाहे उसके व्यक्तिगत आध्यात्मिक तथा धार्मिक विश्वास

कुछ भी हों। समाज कार्यकर्ताओं को सामाजिक कार्यकर्ताओं के रूप में ज़िम्मेदार माना जाता है कि वे एक उच्च सत्ता की मानवजाति की एक लगभग सार्वभौमिक छवि के अनुसार व्यवहार करें।

2.3 इस्लाम धर्म एवं समाज कार्य

इस्लाम के वर्तमान स्वरूप का उद्भव अरब में सातवीं शताब्दी ईसवी के प्रारंभ में हुआ। भारतीय उपमहाद्वीप में इसे लाने वाले पहले तो समुद्र के रास्ते व्यापार करने वाले वे अरब मुलमान थे जो उत्तर केरल के मालाबार तट पर बस गए। धीरे-धीरे, इस धर्म को स्वीकार किया जाने लगा और यह उपमहाद्वीप के कोने-कोने तक फैल गया।

इस्लामी दर्शन में मनुष्य कोई पूर्व-नियत जीव नहीं है। कुरान की विभिन्न आयतों में मनुष्य को एक लक्ष्य के साथ जीवन जीने की सलाह दी गई है। कुरान कहता है कि प्रत्येक व्यक्ति को स्वभाव और क्षमताएँ दी गई हैं, और एक तरह का आंतरिक निर्देश और जन्मजात मार्ग दर्शन भी। यह उस पर निर्भर करता है कि वह अपना विकास किस रूप में करें।

समाज कार्य में अहस्तक्षेप के सिद्धान्त को स्वीकार नहीं किया जाता। अमीर अथवा ताकतवर लोग अनिवार्यत: 'सक्षम' नहीं होते, और गरीब अथवा कमज़ोर लोग अनिवार्यत: 'अक्षम' नहीं होते। समाज कार्य का अभिप्राय समाजीकृत व्यक्तिवाद होता है। इस्लाम मानता है कि ऐसे अनेक व्यक्ति है जो अनेकानेक समस्याओं का सामना करते हैं और बिना मदद के इन समस्याओं (छल) का समाधान नहीं किया जा सकता और न ही उनसे बचा जा सकता है। उन्हें जानकार और अनुभवी व्यक्तियों की सहायता की जरूरत होती है ।

समानता और न्याय की अवधारणाओं के बावजूद आबादी का एक तबका वंचित अथवा हाशिए पर रहा जाता है। उन्हें निश्चय ही अधिकार है कि सम्पन्न तबके के लोग उनकी ओर ध्यान दें। उनकी कमाई में उन लोगों का भी हिस्सा है जो मदद माँगते हैं और वंचित है।कुरान में सभी विश्वासियों से कहा गया है कि वे जरूरतमंदों और गरीबों को खैरात (दान), सदका (प्रियजनों के कल्याण के लिए खैरात), फितरा (रमजान के लिए धन्यावाद ज्ञापन का दान) और जकात (मुसलमान की सालाना बचत का चालीसवाँ हिस्सा जो नगद या किसी वस्तु के रूप में हो सकता है।)करें। दरअसल जकात उन पाँच आदेशों में से एक है जिसका पालन प्रत्येक मुसलमान को करना होता है। यहाँ यह समझना जरूरी है कि इस्लामी परोपकार भीख माँगने को प्रोत्साहित नहीं करता है या 'सामाजिक परजीवी' पैदा करता है। इस्लाम यह बताता है कि कौन लोग 'खैरात', 'फितरा' और 'जकात' पाने के हकदार हैं और कौन नहीं। इस्लाम में यह भी बताया गया है कि इन तरह-तरह के दान का इस्तेमाल किन उद्देश्यों के लिए किया जा सकता है और किनके लिए नहीं। उदाहरण के तौर पर, इनमें से किसी का भी उपयोग मस्जिद बनाने या उसके लिए सामान जुटाने के लिए नहीं किया जा सकता।

इसके अलावा, पैगम्बर ने यह भी कहा है कि अगर देने वाले को पता हो कि देने में कितना सवाब (भलाई) होता है, तो वह कभी भिखारी को मना नहीं करेगा,और अगर भिखारी को यह पता हो कि भीख माँगने में कितनी बुराई या नुकसान है, तो वह भीख के लिए कभी हाथ नहीं फैलाएगा।

इस्लाम में सामाजिक रूप में विकलांगों तथा वंचितों को 'सरकारी मदद' की व्यवस्था की अवधारणा प्रस्तुत की गई और उसे व्यावहारिक रूप दिया गया है। इन लोगों को उनकी जरूरतों के अनुसार बैत-उल-माल अथवा सरकारी खजाने से मदद देने का प्रावधान है ।

2.4 ईसाई धर्म और समाज कार्य

ईसाई धर्म के मूल सिद्धांत समाज कार्य के मुख्यमूल्यों के अनुकूल दिखाई देते हैं। यही नहीं, समाज कार्य का उद्भव ईसाई धर्म के उसी सिद्धांत से हुआ है जिसमें मनुष्यकी गरिमा का समर्थन किया गया है। ईसाई धर्म ने एक व्यवसाय के रूप में, समाज कार्य के विकास में एक केंद्रीय भूमिका निभाई हैं। समाज कार्य के इतिहास का अध्ययन करते समय हमने यह अध्ययन किया है कि समाज कार्य व्यवसाय का उद्भव उसके परोपकारी संस्थापकों की यहूदी-ईसाई धार्मिक परंपराओं की प्रेरणा से हुआ। चैरिटी ऑर्गनाइजेशन सोसाइटी (सी.ओ.एस.) और सेटलमेंट हाउस मूवमेंट की उत्पत्ति पादरियों के काम से हुई। बाद में, अमेरिकन सोशल गॉस्पल मूवमेंट ने सामाजिक समस्याओं के एक विधायी समाधान और सार्वजनिक सामाजिक सेवा के विकास में प्रमुख भूमिका निभाई

मिडग्ले (1989) ने उन्नीसवीं शताब्दी में पाश्चात्य औद्योगिक देशों में समाज कार्य के उभार में धर्म-प्रेरित व्यक्तियों और संगठनों की भूमिका का विस्तृत विवरण दिया है। एक स्कॉटिश पादरी थोमल चामर्स को आम तौर पर यह श्रेय दिया जाता है कि उसने सामाजिक विजिटिंग के मूल सिद्धांतों का निरूपण किया था, जिसने बाद में समाज केस वर्क का रूप ले लिया। चैरिटी ऑर्गनाइजेशन सोसाइटी के निर्माणात्मक नेतृत्व में पादरियों का अच्छा खासा प्रतिनिधित्व था। एक अन्य पादरी, रेव, स्टीफन गर्टी ने 'दान संगठन संघ' अवधारणा को अमेरिका में प्रचारित किया। एक अन्य पादरी, सैमुएल बार्नेट ने लंदन के ईस्टएंड के सेंट जूड्स पैरिश में काम करते समय सेटलमेंट हाउस के विचार की संकल्पना की थी। बार्नेट अपनी प्रगतिशील, सुधारवादी गतिविधियों के लिए विख्यात था और फेबियंस के साथ मिल कर उसने अर्थव्यवस्था और सामाजिक मामलों में सरकारी हस्तक्षेप का समर्थन किया था। इस संबंध में, उसका काम अमेरिकन सोशल गॉस्पल के प्रगतिशील सुधारवाद के समानांतर रहा जिसमें सार्वजनिक समाज सेवाओं की स्थापना और सामाजिक समस्याओं के समाधान के लिए विधायी अधिकार के विस्तार का समर्थन किया गया था।

ईसाई धर्म के विचारों ने समाज कार्य की अवधारणाओं और उसके मूल्योंऔर नैतिक सिद्धांत के विकास को भी प्रभावित किया है। करूणा, प्रेम, समझ और स्वीकृति पर जोर देने वाले, बीस्टेक का प्रतिपादन शायद समाज कार्य में ईसाई अवधारणाओं के समावेश का सबसे अच्छाउदाहरण है।

2.5 बौद्ध धर्म में समाज कार्य

बौद्ध धर्म में "सामाजिक क्रिया" से आशय मानव जाति के हितार्थ किए जाने वाले अनेक प्रकार के कार्य है। इनमें दान, शिक्षण और प्रशिक्षण के साधारण व्यक्तिगत कर्मों से लेकर संगठित किस्म की सेवा, सहायक व्यवसायों के भीतर और बाहर "सम्यक आजीविका", सामुदायिक विकास के विभिन्न कार्य और एक बेहतर समाज के लिए काम करने संबंधी राजनीतिक गतिविधि तक आ जाती है।

बुद्ध के उपदेशों अथवा दीर्घ निकाय में संकलित सूत्रों के प्रमाण से यह स्पष्ट है कि प्रारंभिक बौद्ध मतावलंबी बौद्ध मूल्यों के व्यक्तिगत निर्माण के प्रति अनुकूल सामाजिक स्थितियों के निर्माण के प्रति अत्यधिक चिंतित थे। बाद के समय में, इसका एक असाधारण उदाहरण बौद्ध सम्राट अशोक (ई.पू.274-236) द्वारा स्थापित उल्लेखनीय "कल्याणकारी राज्य" है। बौद्ध धर्म भारत में सामाजिक अन्यायों, पतनकारी अंधविश्वासी अनुष्ठानों, संस्कारों और यज्ञों के विरोध में एक आध्यात्मिक शक्ति के रूप में उभरा। इसने जाति व्यवस्था के अत्याचार की निंदा की और समस्त मनुष्यों की समानता की पक्षधरता की। इसने महिला को मुक्त कराया और उसे पूर्ण आध्यात्मिक स्वतंत्रता दी।

बौद्ध धर्म एक विधिवत स्व-सहायता अभ्यास है जिसमें शिक्षक इससे अधिक और कुछ नहीं कर सकता कि वह मार्ग दिखाए और बौद्ध बंधुओं के साथ एक लंबे और एकाकी प्रयास में समर्थन, उत्साह और प्रोत्साहन दे। वस्तुत: यह समाज कार्य की परिभाषा के अत्यंत निकट है। बौद्ध जन हमेशा ही अपने संबंधों में खुलेपन, सहयोग सद्भाव और समानता की भावना रखने का प्रयास करते हैं।

बौद्ध धर्म का पहला सूत्र है हत्या न करना। किंतु यहाँ यह स्पष्ट कर देना होगा कि बौद्ध 'सूत्र' या शील आदेश नहीं है, वे "अच्छे संकल्प है" और स्वेच्छा से ही गई शुद्ध आकांक्षाएँ हैं। वे दिशानिर्देशक हैं। बौद्ध जन हमेशा ही हिंसक कर्म में प्रत्यक्ष रूप में लिप्त होने से और अपनी आजीविका इस ढंग से कमाने से दूर रहते है जिसमें प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप में हिंसा करनी पड़े।

भारत में अंग्रेजी राज और धार्मिक असहिष्णुता के विरूद्ध महात्मा गाँधी का अहिंसक संघर्ष, अमेरिका में रेव मर्टिन लूथर किंग का अश्वेत लोगों के नागरिक अधिकारों का आंदोलन आदि सर्वविदित हैं। इन्होंने सत्ता के विरूद्ध शांतिपूर्ण अथवा अहिंसक जन प्रदर्शन को प्रस्थापित किया है।

बौद्ध सामाजिक संपर्क केंद्र अच्छे समाज कार्य के उदाहरण हैं। ऐसे समुदायों/केंद्रों द्वारा संपर्क और प्रशिक्षण कार्यक्रम चलाएं जाते हैं। वे कक्षाएँ और लघु पाठ्यक्रम और दीर्घ अवधि के प्रशिक्षण भी चलाते हैं; जिनमें प्रशिक्षु समुदाय के वास्तविक सदस्य बन जाते हैं। और यह उन बाहरी लोगों के लिए समुदाय के "खुलेपन" के अर्थ में सच हो सकता है जो फिलहाल काम, कर्मकांड, शिक्षण ध्यानसाधना में किसी न किसी तरह की भागीदार करके समुदाय के साथ अपना संवाद शुरू करना चाहते हैं।इसके अतिरिक्त ये धर्मशाला चलाना एवं स्थानीय समुदाय के लोगों के लिए व्यक्तिगत और सामाजिक स्तर की व्यापक समस्याओं के समाधान हेतु सूचना तथा परामर्श केंद्र स्थापित करना आदि कार्य भी करते हैं।

पिछले कुछ दशकों में बौद्धों ने अपने धर्म की शिक्षाओं की पुनःसमीक्षा की है और सामाजिक क्रिया का आधार तलाशने का प्रयास किया है। इसका उद्देश्य युद्ध, नस्लवाद, शोषण, वाणिज्यीकरण, और पर्यावरण के विनाश से निपटना था। व्यवहार में, बौद्ध धर्म दूसरों के कल्याण का ऐच्छिक प्रयास है। भारतीय संस्कृति में समाज कार्य के दर्शन की उत्पत्ति बौद्ध दर्शन में देखी जा सकती है। प्रारंभिक बौद्ध परंपरा में समाज कार्य एक मनो-नैतिक अवधारणा के रूप में मिलता है, जिसकी शुरूआत आध्यात्मिक और भौतिक उपलब्धियों के संतुलन और सुखद मिश्रण के साथ समाज में लोगों पर पूर्ण सद्भाव के अवतरण के लिए की गई थी। समाज कार्य के सिद्धांत का सीधा संबंध सामाजिक व्यवस्था के विचार से है, जिसकी संकल्पना बुद्ध ने की थी। बुद्ध ने एक ऐसे सामाजिक तानेबाने और व्यवस्था की संकल्पना की थी जहाँ विशुद्ध प्रेम और स्नेह की भूमि थी जो विश्व मैत्री, करूणा, आनंद और समचित्तता की लहरों से आदेशित था। भारत में अंग्रेज़ी राज और आजादी के बाद के वर्षों में बौद्ध धर्म ने बौद्धों और अन्य धर्मावलंबियों के कल्याणार्थ कल्याण के उपाय ज़ारी रखने और अपनाने का भी प्रयास किया। ये धर्म केंद्र, ध्यान केंद्र, विपश्यना अंतरराष्ट्रीय अकादमी, युवा बौद्ध सोसाइटी आदि के रूप हैं। इनमें से अधिकांश संगठन मुफ्त होम्योपैथिक डिस्पेंसरी, गरीब तथा जरूरतमंद बच्चों के लिए स्कूल, ऐम्बुलेंस सेवा, आपदा प्रबंधन तथा आपातकालीन राहत, विकलांग बच्चों के लिए मुफ्त शिक्षा ''छात्रवृति'' भोजनालय सेवा आदि की व्यवस्था करते हैं। वे जन स्वास्थ्य शिक्षा प्रशिक्षकों और स्वैच्छिक समन्वयकों को भी प्रशिक्षित करते हैं जो व्यक्तिगत स्वच्छता तथा जल स्वच्छता प्रक्रिया की बुनियादी बातों में स्थानीय महिलाओं को प्रशिक्षित करने के लिए समुदायआधारित कार्यशालाओं का नेटवर्क स्थापित करते हैं।

2.6 जैन धर्म और समाज कार्य

जैन धर्म को परंपरागत रूप से एक धर्म तथा दर्शन की तरह जाना जाता है, जिसकी शुरूआत ईसवी पूर्व की शताब्दियों में दक्षिण एशिया में हुई। इक्कीसवीं शताब्दी में, जैन धर्म भारत में एक अल्पसंख्यक धर्म है जबकि अमेरिका, पश्चिमी यूरोप, अफ्रीका और अन्य जगहों में इस समुदाय की संख्याबढ़ रही है। 'जैन' का शाब्दिक अर्थ होता है विजेता, अर्थात जिसने अपने उद्यमी प्रयासों के बल पर इच्छा, घृणा, क्रोध, लोभ, अभिमान जैसी सांसारिक वासनाओं को जीतलिया है और स्वयं को सांसारिक अस्तित्वके बंधनों से मुक्त कर लिया है। यह अवधारणा उस अवधारणा के निकट है जिसके प्रति एक व्यावसायिक सामाजिक कार्यकर्ता प्रयास करता है। ध्यान साधना को जैन धर्म में अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। जैन धर्म समस्त जीवों की आध्यात्मिक स्वतंत्रता और समानता पर जोर देता है, और इस क्रम में अहिंसा पर विशेष जोर देता है जो कई देशों में समाज कार्य के व्यवसाय द्वारा प्रोत्साहित की जा रही कार्यनीतियों में से एक है। आत्मसंयम वह साधन है जिसके द्वारा जैनीमुक्ति/कैवल्य प्राप्त करते हैं।

ज्ञान शांति मैत्री

जैन संस्थाओं को मुख्यतौर पर दो श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है : आम जनसंख्या के लिए धर्मार्थ संस्थाएँ और केवल जैनियों के लिए धर्मार्थ संस्थाएँ। अपनी आर्थिक स्थिति के कारण जैन इस स्थिति में हैं कि वे बहुत सारी संस्थाएँ चला सकते हैं। पहली किस्म की संस्थाएँ चलाकर उन्होंने दूसरों की सद्भावना प्राप्त की है और दूसरी किस्मकी संस्थाओं के माध्यम से उन्होंने अपने धर्म को बचाने और इन तमाम वर्षों में अपने समुदाय को स्थिरता देने का प्रयास किया है।

जैन धर्म अपने अनुयायियों का आदेश देताहै कि वे समस्त प्राणियों और विशेषकर जरूरतमंदों के प्रति करूणा भाव रखें। यही नहीं, जैन श्रावकों के छह दैनिक कर्तव्यों में एक यह है कि वह दूसरों को कुछ न कुछ दान रूप में दे। दान चार प्रकार के निर्धारित किए गए हैं: भोजन का दान (आहार दान) संरक्षण (अभय दान) दवाएँ (औषध दान) और विद्या (शास्त्र दान)।

आम जनता के लिए स्थापित संस्थाओं में गरीबों के लिए चलाई जा रही धर्मशालाएँ अथवा आराम गृह अथवा भिक्षुकगृह स्कूल, कॉलेज, सार्वजनिक, पुस्तकालय और व्यावसायिकक प्रशिक्षण केंद्र हैं जिसका उद्देश्य विशिष्ट व्यवसायों में कौशल का विकास है और निर्धन, ग्रामीण, दूरदराज के क्षेत्रों में शिविरों के माध्यम से मुफ्त चिकित्सा सुविधा उपलब्ध कराने के लिए सचल चिकित्सा इकाई संचालित औषधालय और अस्पताल हैं।

इसके अतिरिक्त जैनियों ने असहाय और निर्बल पशु-पक्षियों के संरक्षण और देखभाल के लिए पिंजरपोल नाम की विशेष संस्थाओं की स्थापनाऔर उनका प्रबंधन किया है। यह स्पष्ट है कि सेवा कर्म केवल मनुष्यों तक ही सीमित नहीं था और इससे यह प्रमाणित होता है कि जैन धर्म में पर्यावरण के प्रति विशेष ध्यान है। इस अवधारणा में पक्का विश्वास रखने से पर्यावरण-संतुलन और टिकाऊ विकास को बढ़ावा देने और बनाए रखने में मदद मिलेगी।

दूसरी श्रेणी की जैन संस्थाओं में, धार्मिक किस्म की संस्थाओं को सामाजिक अथवा शैक्षिक किस्मकी संस्थाओं से अधिक प्रमुखता दी जाती है। इस तरह की संस्थाएँ मूल रूप में उन धार्मिक ग्रंथों, पुस्तकों और पांडुलिपियों के संरक्षण में लगी है जो पारंपरिक ज्ञान कीदृष्टि से समृद्ध हैं और अत्यधिक महत्वपूर्ण हैं। ग्रंथ-भंडार नाम की ये संस्थाएँ अक्सर जैन मंदिरों में अवस्थित होती हैं। अभी हाल में इन संस्थाओं ने मुद्रित तथा डिजिटल दोनों रूपों में इन रचनाओं के संपादन, अनुवाद और प्रकाशन का काम शुरू किया है। ये रचनाएँ अधिकतर प्राकृत में हैं जिन्हें अंग्रेज़ी और अन्य प्रमुख भारतीय भाषाओं में प्रस्तुत किया जा रहा है जिससे इनमें अंतर्निहित समृद्ध साहित्यका लाभ राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तरों पर वृहतर समाज को मिल सके और एक शांतिपूर्ण और न्यायपूर्ण व्यवस्था की स्थापना में मदद मिल सके।

2.7 सिख धर्म और समाज कार्य

विश्व के सबसे नए और पाँचवे सबसे बड़े धर्म, सिख धर्म, की स्थापना लगभग 500 वर्ष पहले गुरू नानक ने (वर्तमान भारत और पाकिस्तान के) पंजाब जिले में की थी। सिख धर्म का आधार गुरू नानक

और उनके बाद हुए नौ सिख गुरूओं की शिक्षाएँहैं। विश्व में लगभग दो करोड़ सिख हैं, और उनमें से अधिकांश भारत में रहते हैं। सिख धर्म एक परमात्मा 'सृजनहार' में विश्वास पर जोर देता है। सिख धर्म दस (10) गुरूओं की शिक्षा पर आधारित एक विशिष्टधर्म है।

सिख धर्म के विभिन्न पहलू और मूल्यसमाज कार्य से घनिष्ठता से जुड़े है। समाज कार्य की तरह, सिख धर्म भी स्वतंत्रता, विश्व बंधुत्व और कल्याण (सरबत का भला) में विश्वास करता है। यह व्यक्ति के महत्व और सम्मान में विश्वास करता है।

जीवन के प्रति सिख धर्म के दृष्टिकोण में व्यक्तियों तथा लोगों की स्वतंत्रता का सरोकार सम्मिलित है। सिख चिंतन में प्रत्येक मनुष्य अपने आप में साध्य है। समाज कार्य की भांति सिख धर्म में भीमनुष्य को प्रत्येक सामाजिक और राजनीतिक संस्था के महत्व अथवा वांछनीयता का अंतिम निर्णायक बनाया गया है। वास्तव में समस्त सामाजिक संस्थाओं और समितियों का अभिप्राय व्यक्ति की मदद करना होता है कि वह अपने जीवन के मुख्य उद्देश्य को प्राप्त कर सके, आत्म-सिद्धि कर सके अथवा अपने सर्वोत्तम पक्ष का विकास कर सकें। लेकिन इसे प्राप्त करने के लिए, समाज को न्याय, बंधुत्व भावना, स्वतंत्रता और समानता के स्वस्थ आधार पर संगठित करना होगा और उसे किसी भी प्रकार के उत्पीड़न से मुक्त करना होगा।

सिख धर्म के अनुसार, स्वतंत्रता केवल तब वास्तविक होती है जब:

क) मनुष्य अंधविश्वासों और अत्याचारपूर्ण सामाजिक व्यवहारों तथा विश्वासों से मुक्त हो जाता है।

ख) अर्थव्यवस्था में शोषण नहीं होता।

ग) शासक न्यायी और ज़िम्मेदार होते हैं।

घ) भय से मुक्ति मनुष्योंके मन में मजबूती से जमी होती है

ङ) लोगों की संप्रभुता को संस्थाका रूप दिया जाता है।

सिख धर्म के अनुसार, अन्य मनुष्यों के प्रति स्नेहपूर्ण, मधुर तथा सम्मानजनक रूख और सभी के कल्याण के प्रति वचनबद्धता एक धार्मिक व्यक्ति के सामाजिक आचरण की खास निशानी (पहचान) है। समाज कार्यकर्ता की तरह उसे दूसरों के साथ मेलजोल रखने वाला और उनके दुखदर्द का ध्यान रखने वाला होना चाहिए और ऐसा होने के लिए व्यक्ति को अपनी इच्छाओं पर नियंत्रण होगा और एक संयमित जीवन शैली विकसित करनी होगी।

सेवा (स्वैच्छिक सेवा) समाज कार्य की एक प्रमुख अवधारणा है और सिख धर्म का एक महत्वपूर्ण अंग है। सिख धर्म में, स्वैच्छिक सेवा के उदाहरणीय आदर्श गुरूद्वारों में प्रशिक्षण देने केलिए आयोजित किए जाते हैं। इसके सरल रूप हैं गुरूद्वारे के फर्श पर झाड़ू लगाना और सफाई करना, संगत को पानी पिलाना या पंखा झलना, साझा रसोई में किसी भी प्रकार की सेवा करना और सामान देना, गुरूद्वारे में आने वाले

लोगों के जूते साफ करना आदि। सिख धर्म में सेवा आध्यात्मिक जीवन के लिए अनिवार्य है। तीन प्रकार की सेवा सिख मत में स्वीकृत है: तन, मन और धन से की गई सेवा।

सिख धर्म में 'संगत', 'पंगत' और 'लंगर' पर विशेष जोर दिया गया है। संगत संतों, पवित्र लोगों या उन लोगों की जो नाम सिमरन के लिए जमा होने की जमात होती है । पंगत तो गुरू घर का एक अभिन्न अंग है, क्योंकि हरेक जाति, पंथ, आर्थिक स्थिति, लिंग और धर्म के लोग एक पांत में साथ-साथ बैठते हैं। गुरूद्वारे में जो साझा रसोईघर होता है, वह 'लंगर' है जहाँ सभी लोग एक साथ बैठकर साझा रसोई से खाते हैं; चाहे उनकी जाति, वर्ग, पंथ, धर्म और लिंग कुछ भी हो। सिखों की सामुदायिक सेवाएं तो सामाजिक कार्य में निहित सामुदायिक कार्य की अवधारणा के समान हैं।

जाति व्यवस्था का पूरे तौर पर अस्वीकार्य सिख परंपरा की अपनी अलग विशेषता है। सिख मूल्य जाति व्यवस्था की निंदा करते और सभी को बराबरी की शिक्षा देते हैं। यहाँ तक कि गुरू नानक और अन्य सिख गुरूओं ने खुशी से नीची जातियों के साथ अपने आपको जोड़ा।

2.8 सारांश

उपरोक्त वर्णित तथ्यों के आधार पर कहा जा सकता है कि विभिन्न धर्म वास्तव में मनुष्य में करूणा, दया तथा सेवा के भाव जागृत करते हैं। समाजकार्य का उद्देश्य मनुष्य मात्र की सहायता करते हुए आत्मनिर्भर बनाने का रहा है। विभिन्न धर्म अपनी अवधारणात्मक प्रस्थिति में इसी को समृद्ध करते हैं।

2.9 बोध प्रश्न

प्रश्न 1 : हिंदू धर्म में समाज कार्य की अवधारणा को स्पष्ट करें ।

प्रश्न 2 : इस्लाम धर्म में समाज कार्य की अवधारणा को स्पष्ट करें ।

प्रश्न 3 : ईसाई धर्म में समाज कार्य की अवधारणा को स्पष्ट करें ।

प्रश्न 4 : बौद्ध धर्म में समाज कार्य की अवधारणा को स्पष्ट करें ।

प्रश्न 5 : जैन धर्म में समाज कार्य की अवधारणा को स्पष्ट करें ।

प्रश्न 6 : सिख धर्म में समाज कार्य की अवधारणा को स्पष्ट करें ।

2.10 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

1. नाडकर्णी, एम.वी. (2006). *हिंदुइज्म: ए गांधियन पर्सपेक्टिव*, नई दिल्ली : एन बुक्स इंडिया.
2. स्वामी विवेकानंद, *इ कॉमन बेसेज आफ हिंदुइज्म* derived from http:www. geocities. comAthens/ Olyspus/5208/ Vedanta/ Hinduism.html.
3. बनर्जी, गौरी रानी : *पेपर्स ऑन सोशल वर्क : एन इंडियन पर्सपेक्टिव*, सं. 23, टाटा इंस्टीट्यूट ऑफ सोशल सांइसेज.

4. अहमद मौलवी, सी.एन. (1979). *इस्लाम: ए कंप्रेहेन्सिव स्टडी*, कालीकट : पारस प्रिन्टर एंड पब्लिशिंग वर्क्स लि.
5. बिस्नों, हर्बर्टै. (1952). द *फिलॉसफी ऑफ सोशल वर्क*, वाशिंगटन, डी.सी. : पब्लिक अफेअर्स प्रेस.
6. मजूमदार, आर.सी. (1961). *सोशल वर्क इन एंशिएंट एंड मेडिएवल इंडिया*
7. वाडिया, ए. आर. *हिस्ट्री एंड फिलॉसफी ऑव सोशल वर्क इन इंडिया*, मुम्बई : एलाइड पब्लिशर्स.
8. रीमर, एफ.जी. (2005). *सोशल वर्क वैल्यूज एंड एथिक्स*, जयपुर : रावत पब्लिकेशंस.
9. शिमेल, ऐनमैरी (1980).*इस्लाम इन दि इंडियन सबकॉन्टिनेंट*, लीडेन कोल्न : ई.जे. ब्रिल .
10. सिंह, योगेंद्र (1973). *मॉडनाईजेशन ऑव इंडियन ट्रेडिशन*, नई दिल्ली : थॉम्पसन प्रेस .
11. स्मिथ.डब्लू.सी. (1947). *मॉर्डन इस्लाम इन इंडिया*, लाहौर : फिरोज सन्स.
12. संगावे, विलास ए.(1997).*आस्पेक्ट्स ऑव जैन रिलीजन*, नई दिल्ली : भारतीय ज्ञानपीठ.
13. पटेल, छाया. (सं) 'सोशल वर्क – ए क्रिश्चियन पर्सपेक्टव', *"कंटम्प्रेरी सोशल वर्क"*, वॉल्यूम XXII, अप्रैल 2006.

ज्ञान शांति मैत्री

इकाई 3
राज्य और समाज कार्य

इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य

3.1 प्रस्तावना

3.2 प्राचीन भारत में समाज कार्य की पहलें

3.3 उपनिवेशी काल में समाज कार्य की पहलें

3.4 स्वतंत्र भारत में समाज कार्य की पहलें

3.5 सारांश

3.6 बोध प्रश्न

3.7 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

3.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप

- प्राचीन और मध्यकाल के शासकों द्वारा की गई पहलों से अवगत हो सकेंगे।
- औपनिवेशिक काल के दौरान राज्य द्वारा की गई पहलों को रेखांकित कर सकेंगे।
- स्वतंत्रता प्राप्ति पश्चात राज्य और केंद्रित सरकरों की पहलों का विवरण दे सकेंगे।

3.1 प्रस्तावना

भारत में समाज कार्य का लंबा इतिहास रहा है। यद्यपि व्यवसाय के रूप में समाज कार्य पश्चिमी देशों द्वारा स्वीकार तथा विकसित किया गया है। फिर भी जिन आधारों पर समाज कार्य व्यवसाय खड़ा है उसके अतीत एवं वर्तमान को जानना आवश्यक है।समाज कार्य का उद्भव सामाजिक सेवाओं, दान सुधार, और कल्याण के सापेक्ष महत्व से व्यवसाय के रूप में प्रारंभ हुआ। समाजकार्य को कल्याण से सशक्तिकरण और विकास तक लम्बी यात्रा तय करनी पड़ी और व्यवसाय का वर्तमान बल लोगों के अधिकारों के संरक्षण और संवर्धन पर है। प्रस्तुत इकाई में राज्य द्वारा की गई उन पहलों को सूत्रीबद्ध करने का प्रयास किया गया है जो समाज कार्य से संबंधित है।

3.2 प्राचीन भारत में समाजकार्य की पहलें

वैदिक काल से ही सुदृढ़ नैतिक और आध्यात्मिक मूल्य भारतीय परम्पराओं केअभिन्न अंग रहे हैं। समाज सेवा की भावना जीवन के भिन्न–भिन्न क्षेत्रों में स्वत: प्रकट होती थी और इसने समाज में अलग-

अलग व्यक्तियों और संगठित समूहों को प्रेरित किया। आर्यों के आगमन से पहले ही लोगों की स्वप्रेरित सहयोग की देशी प्रणालियाँ विद्यमान थीं। हड़प्पा और मोहनजोदड़ों में प्रयुक्त प्रौद्योगिकी के बारे में माना जाता है कि वह नगर नियोजन के मामले में उत्कृष्ठ और उन्नत था। वहाँ की वास्तुकला और प्रशासन के बारे में प्राप्त ज्ञान से पता चलता है कि भवन की डिजाइनिंग और पैटर्न उन्नत थी तथा सार्वजनिक स्थलों, जल निकास प्रणाली सुनियोजित तरीके से काम करती थी। इसके साथ ही समाज के प्रत्येक वर्ग, अर्थात् धनी और निर्धन की आवश्यकता पर कल्याणकारी प्रशासन की झलक मिलती है। यह निर्धारित नियमों के साथ सामुदायिक जीवन का पैटर्न प्रदान करता है और लोगों की मैत्रीपूर्ण समाज का यहएक उत्कृष्ट उदाहरण है।

वैदिक काल के दौरान परिवार और कबीले के रूप में राज्य प्राधिकार का पता चलता है। बहुत से परिवार एवं गोत्र वंश बनाते थे। कई गोत्रों से जिला बनता था और इन जिलों से कबीले गठित होते थे। जिसे उच्चतम राजनीतिक इकाई माना जाता था। उपलब्ध साहित्य के अध्ययन से पता चलता है कि राजतंत्र ने लोगों का कल्याण और सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए बहुत से शासकीय पद बनाए थे। राज्य, राजतंत्र और समाज से संबद्ध कार्यों के प्रति लोगों की भावनाएँ ज्ञात करने के लिए संदेशवाहक और गुप्तचर थे। विवाह, शिक्षा, धर्म, कानून आदि का आविर्भाव वैदिक काल के दौरान हुआ था, जो आज भी सामाजिक जीवन का सारभाग हैं। विधानसभाओं को ''सभा'' और ''समिति'' कहा जाता था, उन्हें निर्णय करने के लिए गठित किया जाता था और लोगों की सहभागिता सुनिश्चित की जाती थी।

प्राचीन ग्रंथों, जैसे मनु की मनुस्मृति, कौटिल्य का अर्थशास्त्र और वेदव्यास के महाभारत ने वैज्ञानिक शासन व्यवस्था के उदाहरण के रूप में राजनीतिक संस्थाओं का उल्लेख किया है। अर्थशास्त्र और महाभारत में बहुत पहले की निर्वाचक प्रणाली की चर्चा की गई है। प्रजा की रक्षा और सुरक्षा राजा का महत्वपूर्ण कार्य और उत्तरदायित्व माना जाता था। राजा लोगों द्वारा चुना जाता था। कौटिल्य के अर्थशास्त्र में राज्य की उन भूमिकाओं (कार्यों) का विवरण है जिसने मनुष्य के सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, नैतिक और आध्यात्मिक जीवन पर प्रभावशील भूमिका निभाई। कल्याणकारी राज्य प्राचीन भारत की आदर्श विशेषता है, क्योंकि राजा धर्म से उत्पन्न कानून का परिरक्षक था। पौराणिक कथाएँ कर्म सिद्धांत के बारे में भी चर्चा करती हैं जो कार्यों का सार प्रस्तुत करते हैं।

गरीबों की सहायता करना राज्य के महत्वपूर्ण कार्यों में से एक था। प्राकृतिक आपदाओं के दौरान सहायता तथा रक्षा करना राज्य का कर्तव्य था। आश्रितों और रोगी व्यक्तियों के लिए विशेष प्रयास किए जाते थे। परिवारों और जरूरतमंदों के ब्यौरे राज्य द्वारा तैयार किए जाते थे। सूखे और अकाल से उत्पन्न स्थिति से राज्य कोष द्वारा जनकल्याण पर खर्च किया जाता था। कौटिल्य ने अकाल सहायता के बारे में उल्लेख किया है। ह्युआन च्वांग (Yuan Chwang) ने जरूरतमंद और विपदाग्रस्त यात्रियों की सहायता के लिए बहुत से विश्रामगृहों का उल्लेख किया है, जहाँ भोजन, औषधियाँ और अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति की जाती थी।

प्राचीन तथा मध्य काल तक नगर प्रशासन, उद्यानों, मनोरंजन केन्द्रों, वन भूमि, सिंचाई कार्य, श्मशान घाट भोजनालयों और यात्री निवास के निर्माण के लिए उत्तरदायी था। गाँवों की समुचित सीमा, लोगों की विस्तृत जानकारी का लेखा-जोखा और उनके नाम, भूमि की बिक्री और हस्तांतरण का पंजीकरण, परिवार के सदस्यों और पशुओं की गणना करना, सक्षम प्राधिकारी द्वारा स्वीकृत करों का संग्रह, व्यवसाय आधारित श्रेणियों, व्यापारियों, सौदागरों, मजदूरों, कारीगरों और गुलामों की गणना, जन्म और मृत्यु, आय और व्यय का रिकॉर्ड रखने का कार्य इनके द्वारा किया जाता था। नगर प्रशासन और स्थानीय प्रशासन के प्रभारी नगरपाल थे। सार्वजनिक खाते से छल-कपट और गबन अथवा चोरी को गंभीर अपराध माना जाता था तथा भ्रष्टाचार समाप्त करने के लिए दंडों की सूची बनाई गई थी।

3.3 उपनिवेशी काल में समाज कार्य की पहलें

उपनिवेशी अवधि देश के जीवन में पूरी तरह से नई प्रावस्थाको निरूपित करती है। पहले भी आक्रमण कारी और विजेता होते थे, परंतु वे शीघ्र ही देश के मूल निवासियों की भाँतिरच-बस जाते थे। समय के अंतराल में राजनीतिक केंद्र में सरकारें बदल जाती थीं, जिसका प्रभाव समाज (विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में) पर नहीं होता था। उपनिवेशी शासक इस संबंध में भिन्न थे और उनके साथ विभिन्न प्रकार की नई सामाजिक शक्तियाँ जैसे धर्म, प्रौद्योगिकी, शिक्षा, कानून और न्यायिक प्रशासन की प्रणाली आदि आई।
भारत में उपनिवेशी युग 15 वीं शताब्दी के अंत में प्रारंभ हुआ, जब पुर्तगाली नाविक, वास्को-डी-गामा ने गोवा में व्यापार स्थापित किया। यूरोपीय शक्तियों के बीच प्रतिद्वंद्विता ने डचों का प्रवेश संभव किया। बाद में ब्रिटिश और फ्रांसिसियों ने भी 16 वीं शताब्दी के प्रारंभ में यहाँ व्यापार स्थापित किया।
उपनिवेशी राज्य का मुख्य ध्यान, उपनिवेशी राज्य क्षेत्र का विस्तार करना और उसे बनाए रखना था। उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में राजस्व संग्रह और कानून तथा व्यवस्था बनाए रखने के अलावा प्रशासन ने अन्य पहलुओं पर भी उपनिवेशी राज्य ने कुछ ध्यान देना शुरू किया।
1770 और 1860 के बीच उपनिवेशी भारत में कई अकाल पड़े। अकाल की समस्या से निपटने के लिए कोई निश्चित नीति नहीं थी। सम्राट के शासन (1890-1909) के पहले वर्षों के दौरान किए गए बहुत से प्रयोग बहुत असफल सिद्ध हुए। इंग्लैंड में एलिजाबेथ के शासन काल में 1601 ई. में आई पुअर लॉ (Poor Laws) के अनुभव से उपनिवेशी राज्य ने अपनी अकाल राहत नीति बनाई। इसमें प्रावधान किया गया कि ज़रूरतमंदों को आवश्यक सहायता की सबसे बड़ी राशि दी जाए जो उस पर अनावश्यक निर्भरता को कम से कम बढ़ावा देता है। इस नीति में 1861 में थोड़ा-सा संशोधन किया गया जब राज्य ने अकाल के दौरान निराश्रितों को खाना खिलाने के व्यय पूर्ति के लिए निजी एजेन्सियों को अनुदान देने का निर्णय किया। बार-बार होने वाली अकाल की घटना की गंभीरता ने उपनिवेशी राज्य को 1880 में अकाल आयोग नियुक्त करने के लिए विवश किया। बाद में 1883 में अकाल संहिता तैयार की गई।

अकाल राहत, बीमा और कृषि पर निर्भर रहने वाले अधिशेष आबादी के लिए रोज़गार के वैकल्पिक स्रोतों के लिए आयोग की सिफारिशों के बावजूद प्रशासक समस्या का समाधान करने में इच्छुक नहीं थे। 1885 में एक कानून पास किया गया जिसके अनुसार यदि काश्तकार के पास जमीन 12 वर्ष तक रही है तो उसे उस पर कब्जा करने का अधिकार होगा। लॉर्ड कर्जन के कार्यकाल के दौरान रॉयल कृषि संस्थान की स्थापना हुई। इसमें उन्नत प्रशिक्षण, अनुसंधान और प्रयोगात्मक कृषि की सुविधाओं की व्यवस्था की गई। देश के भिन्न-भिन्न भागों में कुछ कृषि स्कूल और कालेज भी स्थापित किए गए।

भारत में पहली रेलवे लाइन बनाने का श्रेय लॉर्ड डलहौजी (Lord Dalhousie) को जाता है। मुंबई और ठाणे को जोड़ने वाली पहली रेलवे लाइन 1853 में शुरू की गई थी। आगामी वर्षों में कलकत्ता को रानीगंज के कोयला क्षेत्रों से और मुंबई को कल्याण से जोड़ा गया। 1856 में एक अन्य लाइन एराकोनम (Arakonam) से मद्रास को मिलाने के लिए शुरू की गई।

उपनिवेशी राज्य सम्पूर्ण भारत को अपने नियंत्रण में लेने के लिए सम्पूर्ण देश में एक समान कानून और प्रशासन स्थापित करना चाहता था। इससे देश में राजनीतिक एकता का निर्माण हुआ। अब क्षेत्रीय राज्यों की अवधारणा का कोई महत्व नहीं था। लोगों ने अपने को एक ही देश के भाग के रूप में देखा। भिन्न-भिन्न क्षेत्रों के बीच परिवहन और संचार इस प्रक्रिया में सहायक हुआ। लोगों ने यात्रा की, डाक और तार प्रणाली के माध्यम से सूचना का आदान-प्रदान किया और यह क्षेत्रों के बीच नेटवर्क स्थापित करने में सहायक हुआ। शिक्षा वह सबसे प्रमुख क्षेत्र था, जहाँ राज्य ने पहल शुरू की थी। 1813 के चार्टर अधिनियम द्वारा कंपनी प्रशासन को भारत की शिक्षा का उत्तरदायित्व दिया गया। 1833 तक शिक्षा अनुदान जो 1813 के चार्टर अधिनियम के अधीन एक लाख रूपये था, प्रतिवर्ष दस लाख तक बढ़ गया। 1835 में गवर्नर-जनरल विलियम बैंटिक ने भारत में पश्चिमी शिक्षा लाने का निर्णय किया। 1844 में अंग्रेज़ी राजभाषा बनी और यह घोषणा की गई कि अंग्रेज़ी का ज्ञान रखने वाले लोगों को सरकारी नौकरी में वरीयता दी जाएगी। 1854 में उपनिवेशी राज्य ने सर चॉर्ल्स वुड द्वारा सुझाई गई प्रणाली को स्वीकार करते हुए राज्य ने प्राथमिक स्कूल से विश्वविद्यालय तक शिक्षा में बदलाव की घोषणा की।

मध्य काल तक स्वास्थ्य सेवाएँ दूर-दूर तक फैली हुई नहीं थी, उपनिवेशी राज्य ने चिकित्सा देखभाल मुहैया कराने के प्रयास किए। ईस्ट इंडिया कंपनी ने अपने कर्मचारियों के लिए 1664 में अस्पताल खोले थे। अठाहरवीं शताब्दी के अंत तक कलकत्ता में भारतीयों के लिए अस्पताल खोला गया था। 1800 ई. के आसपास मुंबई और मद्रास में भी भारतीयों के लिए अस्पताल शुरू किए गए। 1840 तक प्रेजिडेन्सियों के अलावा, विभिन्न बड़े शहरों में भारतीयों के लिए लगभग एक दर्जन अस्पताल थे। भारतीयों को स्वास्थ्य सेवाएँ प्रदान करने में राज्य के इन सीमित प्रयासों को क्रिश्चियन मिशनरियों विशेषकर भीतरी कस्बों में जरूरतमंद और जनता को दी गई स्वास्थ्य सेवाओं से बल मिला। उपनिवेशी अवधि के दौरान पहला मेडिकल कालेज 1835 में कलकत्ता में स्थापित किया गया था और उसके बाद बम्बई और मद्रास में भी मेडिकल कालेज प्रारंभ किए गए। सम्पूर्ण चिकित्सा क्षेत्र में स्वास्थ्य सर्वेक्षण तथा विकास करने के

लिए 1945 ई. भोर समिति (Bhore Committee) की नियुक्ति की गई। इस समिति ने अस्पताल सामाजिक कार्यकर्ता के प्रचलन की सिफारिश की और पहला प्रशिक्षित सामाजिक कार्यकर्ता 1946 में जे.जे.अस्पताल, मुंबई में नियुक्त किया गया। चिकित्सा सामाजिक कार्यकर्ता पाठ्यक्रम सबसे पहले डॉ. (सुश्री.) जी. आर. बनर्जी के निदेशन में टाटा इंस्टिट्यूट ऑफ सोशल साइन्सेज में, 1946 में भारत में आरंभ किया गया।

3.4 स्वतंत्र भारत में केंद्रित और राज्य सरकारों द्वारा की गई पहल

समाज कार्य व्यवसाय की विचारधाराओं, अवधारणाओं और दृष्टिकोण मेंस्वतंत्रता प्राप्ति के बाद बड़ा परिवर्तन देखा गया। यहाँ समाज कार्य व्यवसाय को वर्तमान आवश्यकताओं और चुनौतियों से जोड़ने पर बल दिया गया। कल्याणकारी राज्य की अवधारणा ने अर्थव्यवस्था, सेवा क्षेत्रों के विस्तार आदि ने समाज कार्य प्रणाली के क्षेत्र को और अधिक व्यापक कर दिया।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् केंद्रीय एवं राज्य सरकारों ने समाज के कमजोर वर्गों के उत्थान के संबंध में अपनी सामाजिक ज़िम्मेदारियाँ निभानी प्रारंभ की। भारत सरकार ने कारखाना अधिनियम, 1948 बनाकर श्रमिकों के कल्याण के लिए महत्वपूर्ण कदम उठाया। इसके उपबंधों में स्वास्थ्य, सुरक्षा, अल्पवयस्क व्यक्तियों और बच्चों का नियोजन, वयस्क और बाल कामगारों के काम के घंटे, अवकाश और मज़दूरी सहित छुट्टी आदि के प्रावधान शामिल किए गए। इसी तरह बागान श्रम अधिनियम, 1951 और खान अधिनियम, 1952 में श्रम अधिकारी की नियुक्ति के लिए प्रावधान किए गए। प्रथम पंचवर्षीय योजना (1952-1956) में कल्याण सुविधाओं का विस्तार करके श्रमिकों के कल्याण पर यथोचित ध्यान दिया गया था। बागान श्रम अधिनियम, 1951, खान अधिनियम 1952, कर्मचारी भविष्य निधि अधिनियम, 1952 इस अवधि के दौरान बनाए गए। इसी समय राज्य सरकारों ने श्रमिकों के लिए आवास सुविधाओं से सम्बन्धित विभिन्न कानून बनाए। मुंबई आवास बोर्ड अधिनियम, 1948 इसमें मील का पत्थर था। द्वितीय पंचवर्षीय योजना (1956-61) में बेहतर कार्य दशाओं पर विशेष ध्यान दिया गया। विभिन्न सांविधिक कल्याण प्रावधानों के प्रभावी क्रियान्वयन को तृतीय पंचवर्षीय योजना(1961-66) के दौरान महत्व दिया गया। इसमें कार्यदशाओं में सुधार पर अधिक जोर दिया गया है। इस अवधि के दौरान सरकार द्वारा किए गए कुछ पहलों में प्रसूति सुविधा अधिनियम1961, शिशु अधिनियम 1961, लौह अयस्क खान श्रम कल्याण उपकर अधिनियम 1961 और बोनस संदाय अधिनियम, 1965 थे। चौथी पंचवर्षीय योजना (1969-74) में कर्मचारी राज्य बीमा योजना में दुकानों और वाणिज्यिक स्थापनाओं को भी शामिल किया गया। इसमें बीमाकृत व्यक्तियों के परिवार को चिकित्सा सुविधा प्रदान की गई तथा श्रमिकों के आर्थिक लाभों को अधिक महत्व दिया गया। ठेका श्रम (विनियम और उत्पादन) अधिनियम 1970, उपदान संदाय अधिनियम 1972, कर्मचारी परिवार पेंशन योजना 1971 आदि इसी योजना काल में पारित किए गए। योजना आयोग ने सभी राज्य सरकारों को कल्याण केंद्र, अवकाश गृह और मनोरंजन

केंद्र मुहैया कराने का निदेश दिया। पाँचवीं पंचवर्षीय योजना(1974-79) में औद्योगिक सुरक्षा के संवर्धन के लिए विभिन्न राज्यों में सुरक्षा सेल स्थापित करने पर बल दिया। समान पारिश्रमिक अधिनियम, 1976 और अंतर राज्यिक प्रवासी कामगार (नियोजन का विनियमन) और सेवा शर्तें अधिनियम, 1979 इस समय पारित किए गए महत्वपूर्ण कानून थे। छठी पंचवर्षीय योजना(1980-85) में इन विधायी उपायों के प्रभावी कार्यान्वयन पर ध्यान केंद्रित किया गया। राज्य सरकारों को ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में कृषि श्रमिकों, कारीगरों, हथकरघा बुनकरों, मछुआरों, चमड़ा कामगारों और अन्य असंगठित कामगारों को लाभ प्रदान करने की सलाह दी गई।

सातवी पंचवर्षीय योजना (1985-90) ने ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों के असंगठित कामगारों की कार्य और रहने की दशा सुधारने पर बल दिया। यह ऐसा समय था जब सरकार ने कामगारों के लिए शिक्षा और कार्यक्रमों पर जागरूकता तथा कानूनी सहायता पर जोर दिया।

बंधुआ श्रमिकों के पुनर्वास, महिला और बाल कामगारों के कल्याण और कामगार शिक्षा पर आठवीं पंचवर्षीय योजना (1992-97) में विशेष बल दिया गया था। इसमें स्वस्थ कार्य दशा में औद्योगिक संबंधों के महत्व पर बल दिया गया। इसने प्रबंधन में कामगारों की सहभागिता को भी प्रोत्सहित किया। लम्बे संघर्ष के बाद इस अवधि के दौरान भवन और निर्माण कामगार कल्याण उपकर अधिनियम, 1996 पारित किया गया। नौवीं पंचवर्षीय योजना (1997-2002) ने श्रम कानूनों को दृढ़ता से लागू करने पर बल दिया। इस योजना की खास विशेषता बेरोज़गारों को पंजीकृत करने के लिए राष्ट्रीय रोज़गार कार्यालय स्थापित करना था। यहाँ काम चाहने वालों के कुछ समूह, जैसे कोयला खानों और बागानों जैसे विशेष उद्योगों में श्रमिकों की माँग के साथ-साथ शारीरिक रूप से विकलांगों के पंजीकरण के लिए पहली बार प्रयास किया गया। दक्षता और उत्पादकता सुधारने के लिए नए व्यावसायिक प्रशिक्षण संस्थान स्थापित किए गए और बहुत सी औद्योगिक इकाइयों को प्रशिक्षु प्रशिक्षण देने के लिए प्रोत्सहित किया गया। दसवीं पंचवर्षीय योजना (2002-07) में श्रम बाज़ार संस्थाओं का क्षेत्र बढ़ाने के प्रयास किए गए। इसमें व्यावसायिक प्रशिक्षण और श्रमिकों की दक्षता निर्माण पर मुख्य बल था।

जनजाति लोगों की सांस्कृतिक और भाषायी अद्वितीयता को इसी दौरान मान्यता दी गई। उन्हें अपनी संवृद्धि और प्रगति के लिए अपनी आवश्यकताएँ पूरी करने के अवसर दिए गए। अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 इसी दिशा में एक क्रांतिकारी कानून था। इसके लिए केंद्र सरकार ने अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति(अत्याचार निवारण) नियमावली, 1995 के रूप में नियम बनाए। इस अधिनियम के अधीन उन राज्यों के राज्यपालों को, जिनमें जनजाति क्षेत्र स्थित हैं, के हितों की सुरक्षा करने के लिए विशेष उत्तरदायित्व दिए गए थे। इसके अलावा, उन्हें जनजाति जीवन के अनुकूल बनाने के लिए राज्य और केंद्रित कानूनों का संशोधन करने तथा भूमि पर उनके अधिकारों के और साहूकारों से संरक्षण के लिए प्रचालनात्मक विनियम बनाने का अधिकार दिया गया । भारतीय संविधान की पाँचवीं और छठी अनुसूचियाँ में उनके कल्याण और विकास के लिए

अनुसूचित और ग़ैरअनुसूचित दोनों राज्योंमें प्रशासन पर निर्देश दिए गए। पाँचवी और छठी अनुसूची का मूल उद्देश्यसामाजिक कल्याण प्रशासन को सुदृढ़ करना है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद ग्रामीण विकास के क्षेत्र में स्वैच्छिक प्रयासों को तरजीह दी गई । इसके लिए केंद्रित और राज्य सरकारों ने कई पहलें की। शरणार्थी पुनर्वास परियोजना के रूप में 1948 में निलोखेड़ी परियोजना चालू की गई। इसका उद्देश्य परियोजना के अधीन शरणार्थियों को प्रशिक्षण और रोज़गार के अवसर देने के लिए व्यावसायिक प्रशिक्षण एवं उत्पादन केंद्र आरंभ करना था । स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद ग्रामीण समुदायों के विकास के लिए इटावा प्रायोगिक परियोजना के सकारात्मक प्रभाव के परिणामस्वरूप सामुदायिक विकास परियोजनाएँ राष्ट्रीय स्तर पर आरंभ की गई। छठी पंचवर्षीय योजना (1980-85) ने गरीबी उन्मूलन को मुख्य उद्देश्य के रूप में लिया, परिणामत: राष्ट्रीय ग्रामीण रोज़गार कार्यक्रम, ग्रामीण भूमिहीन रोज़गार कार्यक्रम (बाद में जवाहर रोज़गार योजना के विलय), स्वरोज़गार के लिए युवकों का प्रशिक्षण, ग्रामीण क्षेत्रों में महिला और बाल विकास तथा एकीकृत ग्राम विकास कार्यक्रम संबंधित मंत्रालय द्वाराकार्यान्वित किए गए। नौवीं योजना के दौरान गरीबों को लाभ प्रदान करने के लिए कार्यक्रमों की दक्षता बढ़ाने की दृष्टि से गरीबी निवारण कार्यक्रमों का पुनर्गठन किया गया।

प्रत्येक दरवाजे तक पेय जल पहुँचाने और जल विभाजक विकास कार्यक्रमों को कार्यान्वित करने के लिए 2002 में “स्वजलधारा” और 2003 में “हरियाली” नामक नई पहलों को शुरू किया। दोनों योजनाओं को पंचायती राज संस्थाओं के साथ जोड़ा गया।

73 वें संविधान संशोधन अधिनियम1992 के अधीन संविधान ने आर्थिक विकास और सामजिक न्याय के विभिन्न कार्यक्रम बनाने और निष्पादन की भारी ज़िम्मेदारी पंचायतों पर रखी है। कईकेंद्रित प्रायोजित योजनाएँ पंचायतों के माध्यम से कार्यान्वित की जा रही हैं। पंचायती राज संस्थाओं को शक्तियों के विकेंद्रीकरण तथा हस्तांतरण के आधार पर नए आयाम दिए गए हैं। इसमें लोगों द्वारा स्वयं बुनियादी आवश्यकता आधारित योजना निर्माण पर बल दिया गया । इसके अतिरिक्त ग्राम विकास मंत्रालय द्वारा पंचायती राज संस्थाओं में निर्वाचित महिला सदस्योंके क्षमता निर्माण के लिए राज्य सरकारों को वित्तीय सहायता प्रदान की गई है।

स्वास्थ्य सुविधाओं की योजना और कार्यान्वयन राष्ट्रीय विकास कार्यक्रम का भाग है। यह सामग्री जनशक्ति और वित्तीय संसाधनों के लाभकारी उपयोग के लिए आवश्यक है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद, भारत सरकार ने मुदलियार समिति (Mudaliar Committee) नाम से प्रचलित स्वास्थ्य सर्वेक्षण और योजना समिति नियुक्त की। उसने प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों और जिला अस्पतालों को सुदृढ़ करने की सलाह दी ताकि वे परामर्शी केन्द्रों के रूप में प्रभावी ढंग से कार्य कर सकें।

बाल कल्याण की अवधारणा समाज कार्य की बदलती हुई अवधारणा के साथ बदली है। स्वतंत्रता के बाद के वर्षों में युवा कल्याण ने काफ़ी महत्व ग्रहण किया है। युवा नेतृत्व, खेलकूद, प्रशिक्षण शिविरों, छात्र अध्ययन दौरों और गैर-छात्र क्लब तथा केन्द्रों के प्रोत्साहन पर अधिक ध्यान केन्द्रित किया है।

स्कूल स्तर पर शारीरिक शिक्षा सम्मिलित करने के लिए केंद्रीत मंत्रालय ने राष्ट्रीय स्वस्थता कोर नाम का एकीकृत कार्यक्रम प्रारंभ किया, जिसमें शारीरिक शिक्षा, राष्ट्रीय अनुशासन स्कीम और सहायक केडेट कोर शामिल हैं। चौथी पंचवर्षीय योजना के दौरान ग्राम विकास के अधीन हाई स्कूलों और मिडिल स्कूलों को सम्मिलित किया गया। शिक्षा मंत्रालय द्वारा भिन्न-भिन्न स्थानों पर समाज कार्य के स्कूलों को प्रोत्साहित करने तथा स्थापित करने के लिए वित्तीय सहायता दी गई। मंत्रालय ने समाज शिक्षा प्रणालियों का अध्ययन तथा विकास करने के लिए पृथक अनुभाग भी स्थपित किया।

स्कूली शिक्षा में संबंधित मामलों पर केंद्रित और राज्य सरकारोंको सहायता और सलाह देने एवं माध्यमिक शिक्षा में सुधार के लिए, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद की स्थापना की गई। केंद्रित शिक्षा माध्यमिक बोर्ड, केंद्रित विद्यालय संगठन, नवोदय विद्यालय, केंद्रित तिब्बत स्कूल प्रशासन, राष्ट्रीय मुक्त स्कूली संस्थान राष्ट्रीय शिक्षक कल्याण प्रतिष्ठान आदि मानव संसाधन विकास मंत्रालय के अधीन महत्वपूर्ण निकाय हैं। प्रौढ़ शिक्षा निदेशालय ने भी मानव संसाधन विकास मंत्रालय के अधीन कार्य करना आरंभ किया।

उच्चतर शिक्षा प्रणाली में सुधार हेतु कई पहल की गई मसलन उच्चतर शिक्षा मानकों के समन्वय, निर्धारण और अनुरक्षण तथा अनुदान प्रदान करने के लिए विश्वविद्यालय अनुदान आयोग का गठन किया गया। इसके अतिरिक्त कई व्यावसायिक परिषदें बनाई गई जैसे अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद (All India Council for Technical Education; AICTE), दूर शिक्षा परिषद(Distance Education Council; DEC), भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद(Indian Council for Research; ICAR), बार काउंसिल ऑफ इंडिया(Bar Council of India ; BCI), राष्ट्रीय शिक्षक शिक्षा परिषद (National Council for Teachers Education; NCETE), भारतीय पुनर्वास परिषद (Rehabilitation Council of India RCI), भारतीय चिकित्सा परिषद (Medical Council of India MCI), भारतीय फार्मेसी परिषद (Pharmacy Council of India FCI), भारतीय नर्सिंग परिषद (Indian Nursing Council ; INC),भारतीय दंत चिकित्सक परिषद (Dentist Council Of India; DCI), केन्द्रीय होम्योपैथी परिषद (Central Council of Homeopathy; CCH) और केंद्रित भारतीय औषधि परिषद (Central Council of Indian Medicine; CCIM) जिनका उद्देश्य उच्चतर शिक्षा मानकों के समन्वय, निर्धारण और अनुरक्षण करना था।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात अनुसूचित जातियों और अनुसूचितजनजातियों के कल्याण, अपराध और जेल प्रशासन, अनैतिक व्यापार, दमन, किशोर अपराध, नैतिक और सामाजिक स्वच्छता गृह मंत्रालय को सौपी गई ज़िम्मेदारियाँ थीं। परंतु अब सामाजिक न्याय और सशक्तीकरण मंत्रालय को समाज के वंचित तथा सीमांतकीकृत भाग अर्थात अनुसूचित जाति, पिछड़ा जाति, अशक्त व्यक्तियों, वृद्ध लोगों और मादक नशाखोरों के कल्याण, सामाजिक न्याय तथा सशक्तीकरण से संबंधित कार्य सौंपा गया है। महिलाओं और बाल कल्याण महिला एवं बाल कल्याण मंत्रालय द्वारा देखाजाता है।

3.5 सारांश

उक्त वर्णित तथ्यों के आधार पर कहा जा सकता है कि भारतीय परिपेक्ष्य में राज्य द्वारा समाज कार्य के लिए हमेशा से प्रयत्न किया जाता रहा है। सरकार को नीतियों और कार्यक्रमों के कार्यान्वयन में विभिन्न व्यावहारिक कठिनाईयों का सामना करना पड़ा और इसलिए आवश्यकता आधारित सुविधाओं के कार्यान्वयन का उत्तरदायित्व दिया गया। सरकार ने कल्याण संगठन के प्रयासों को मान्यता दी तथा समाज कल्याण के क्षेत्र में प्रशिक्षित समाज कार्यकर्त्ताओं की मान्यता से इसे गति मिली।

3.6 बोध प्रश्न

प्रश्न 1: प्राचीन भारत में समाज कार्य के क्षेत्र में की गई पहलों की विवेचना कीजिए।

प्रश्न 2: औपनिवेशी काल में राज्य द्वारा समाज कार्य के लिए किए गए कार्यों को स्पष्ट कीजिए।

प्रश्न 3: स्वतंत्र भारत में समाज कार्य की पहलों पर प्रकाश डालिए।

3.7 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

देसाई, एम.(2002). *आइडोलॉजी एंड सोशल वर्क.* जयपुर: रावत प्रकाशन।

पाठक, एस.(1981). *सोशल वेलफेयर : एन एवेल्यूशनरी एंड डेवलपमेंटल पर्सपेक्टिव* दिल्ली : मैकमिलन इंडिया लिमिटेड।

बार्कर, आर. (2003) *सामाजिक कार्य शब्दकोश* (5 वां संस्करण). वाशिंगटन डीसी: एनएएसडब्ल्यू प्रेस।

पायने, एम. (1997). *आधुनिक सामाजिक कार्य सिद्धांत एक महत्वपूर्ण शुरूआत.* शिकागो: लिसेयुम।

रीचर्ट, ई. (2003). *सामाजिक कार्य और मानव अधिकार: नीति और अभ्यास के लिए एक आधार.* न्यूयार्क : कोलंबिया विश्वविद्यालय प्रेस।

इकाई 4 गांधी विचार एवं समाज कार्य

इकाई की रूपरेखा

4.0 उद्देश्य
4.1 प्रस्तावना
4.2 गांधी: परिचय और प्रमुख विचार
4.3 गांधी का समाज कार्य : विधियाँ एवं तकनीकें
4.4 गांधी के सामाजिक कार्य की विशेषताएँ
4.5 सारांश
4.6 बोध प्रश्न
4.7 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

4.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आप : -

1. गांधी के विचारों से परिचित हो पाएंगे।
2. गांधी के दृष्टिकोण से मनुष्य तथा समाज से उसका संबंधको जान सकेंगे।
3. गांधीय समाज कार्य की तकनीक की व्याख्या कर सकेंगे।
4. गांधीजी के सामाजिक कार्य की विशेषताओं को रेखांकित कर सकेंगे।

4.1 प्रस्तावना

भारत में समाज कल्याण का बहुत समृद्ध व विस्तृत इतिहास रहा है। समाज कल्याण के क्षेत्र में बहुत-सी विचारधाराएँ व उसे करने के अनेक तरीके हैं। इनमें से समाज कार्य के गांधीवादी उपागम का विशाल तंत्र है जिसमें गांधीवादी संस्थाएँ व कार्यकर्ता सम्मिलित हैं। भारतीय परिप्रेक्ष्य में एक व्यावसायिक सामाजिक कार्यकर्ता इसे अनदेखा नहीं कर सकता, क्योंकि यह देशज पद्धति को निरूपित करता है और यह पूर्णत भारतीय दर्शन, संस्कृति व परंपराओं पर आधारित है। गांधीवादी समाज कार्य की समझ एक व्यावसायिक सामाजिक कार्यकर्ता को भारतीय समाज के मानस व प्रकृति को समझने की अंतर्दृष्टि प्रदान करता हैं जिसके परिणामस्वरूप अच्छी सेवाएँ प्रदान की जा सकती हैं।

4.2 गांधी: परिचय और प्रमुख विचार

जीवन परिचय

मोहनदास करमचंद गांधी(2 अक्टूबर 1869- 30 जनवरी 1948) का जन्म गुजरात के काठियावाड़ जिले के पोरबंदर नामक स्थान पर एक वैष्णव परिवार में हुआ था। ब्रहम अथवा किसी आधारभूत सर्वव्यापी सत्ता में अटूट विश्वास गांधी के विचारों का मूल मंत्र है। गांधी पर पुरातन धार्मिक ग्रंथों के अलावा कुछ पश्चिमी विद्वानों के प्रभाव को स्पष्ट तौर पर देखा जा सकता है। इस सूची में जॉन रस्किन, टॉलस्टॉय, थोरो, टी.एच. ग्रीन प्रमुख हैं। गांधी की प्रमुख कृतियाँ निम्नवत हैं–

- हिंद स्वराज्य
- सत्य के साथ मेरे प्रयोग
- दक्षिण अफ्रीका में सत्याग्रह
- स्वास्थ्य की कुंजी
- मंगल प्रभात आदि

विचार

सत्य एवं अहिंसा

गांधी के आध्यात्मिक, नैतिक व समाजशास्त्रीय धारणाओं के बीच अंतःसंबंध है। ईश्वर अथवा सत्य उनके चिंतन के बुनियादी आधार हैं। गांधीजी का समस्त दर्शन सत्य, अहिंसा और लोकतंत्र के मौलिक सिद्धांतों पर आधारित था। गांधी से पूर्व विभिन्न दार्शनिकों, धर्मों व संप्रदायों ने समय-समय पर सत्य-अहिंसा की रूढ़िवादी-परंपरावादी व्याख्या प्रस्तुत की है।

गांधी को 'महात्मा' का संबोधन दिया जाता है। उनके जीवन में क्रियात्मक आधार पर कुछ नैतिक मानदंड शामिल हैं, संभवतः इसी कारण उन्हें महात्मा गांधी का संबोधन मिला। मानव धर्म को नैतिकता से संबंधित मानते हुए उनका विचार है कि कोई ऐसा धर्म नहीं है जो नैतिकता से ऊपर हो।

एकादश व्रत

आश्रमवासियों के लिए गांधी जी ने कुछ नैतिक नियम बनाए थे जिन्हें एकादश व्रत के नाम से भी जाना जाता है। ये हैं–

1. सत्य
2. अहिंसा
3. सत्याग्रह
4. ब्रह्मचर्य
5. सर्वोदय
6. शारीरिक श्रम
7. स्वदेशी
8. अस्तेय तथा अपरिग्रह

9. निष्काम भावना
10.सर्व-धर्म समभाव
11.साधन और साध्य की पवित्रता

सर्वोदय की अवधारणा

महात्मा गांधी ने संपूर्ण विश्व के विकास-क्रम का एक स्वाभाविक वर्णन करते हुए सर्वोदय के विचार को प्रस्तुत किया। इसका शाब्दिक अर्थ 'सभी का उदय' है। गांधी जी के अनुसार एकलोकतंत्र में यदि कुछ लोगों का शोषण होता है तो इसे सच्चा लोकतंत्र नहीं कहा जा सकता है। एक समता मूलक व्यवस्था वही हो सकती है, जिसमें देश के सभी नागरिकों और संपूर्णमानव जाति का समान रूप से विकास हो। गांधी जी ने इस विचार के तीन पक्षों का उल्लेख किया है–

- प्रेम और अहिंसा
- अंत्योदय
- मानवीय मूल्यों की स्थापना

सर्वोदय की अवधारणा का उद्देश्य निम्नप्रकार से विश्लेषित किया जा सकता है–

1. विकेंद्रीकरण
2. स्वावलंबन
3. आत्म-अनुशासन में वृद्धि
4. सर्व-धर्म समभाव

संरक्षकता या ट्रस्टीशिप का सिद्धांत

महात्मा गांधी से पूर्व भारत का पूरा आर्थिक इतिहास एक असमानताकारी और सामंती व्यवस्था की चपेट से आहत था। गांधी जी विषमता और आर्थिक शोषण के विरुद्ध थे और उन्होंने इसके निवारण के रूप में संरक्षकता के सिद्धांतका प्रतिपादन किया। इसमें उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि धनवान लोगों में अपनी आवश्यकताओं में व्यय के पश्चात बचे पैसों का उपयोग जनसाधारण के हित में करना चाहिए। इस प्रकार से समाज में बिना किसी संघर्ष के आर्थिक समता स्थापित की जा सकती है। गांधी जी ने कहा है कि समाज में निवासरत सभी व्यक्तियों की कुशलता और शक्ति एक समान नहीं होती है। यदि बुद्धिमान और शक्तिशाली लोगों द्वारा अपने कौशल का प्रयोग जनसाधारण के हित के लिए किया जाए तो वे समाज में समता बनाने में अपना योगदान दे सकते हैं। यह सिद्धांत बताता है कि व्यक्तिगत संपत्ति और संरक्षक की संपत्ति में अंतर होता है। व्यक्तिगत संपत्ति उत्तराधिकार के रूप में पिता से पुत्रको पीढ़ी दर पीढ़ी प्राप्त होती है, परंतु संरक्षकता की संपत्ति का स्वामी स्वयं व्यक्ति होता है उसका कोई उत्तराधिकारी नहीं होता है। इस संपत्ति पर यदि किसी का अधिकार होता है तो वह समाज का अथवा जनता का होता है। गांधी जी ने जिस समाज की कल्पना इस सिद्धांत के माध्यम से की है उसमें संपत्ति अथवा भूमि पर

स्वविमत्व तो जमींदार अथवा पूंजीपति अथवा भूस्वामी का होगा, परंतु नैतिक रूप से यह संपत्ति पूरे समाज की होगी।

4.3 गांधीजी का समाज कार्य : विधियाँ एवं तकनीकें

गांधी ने जिस भारतीय समाज कार्य की नींव रखी, उसकी जड़ें सत्याग्रह के रूप में प्रस्फुटित हुई । 'सत्याग्रह' शब्द 'सत्य' और 'आग्रह' शब्दों से बना है जिसका अर्थ है सत्य के लिए दृढ़ता पूर्वक आग्रह करना। सत्याग्रह का शाब्दिक अर्थ है सत्य–आचरण हैं। सत्य को आत्मबल के रूप में भी समझा जाता है। यह हिंसा की उपेक्षा करता है। दक्षिण अफ्रीका में प्रवासी भारतीयों के अहिंसात्मक प्रतिरोध व अन्य लोगों के निष्क्रिय-विरोध में फ़र्क दिखलाने के लिए सत्याग्रह शब्द गढ़ा गया था। सत्याग्रह प्रेम पर आधारित है, घृणा पर नहीं। सत्याग्रह का आधार अपने विपक्षी को प्रेम करने और स्वयं कष्ट उठाकर उसका हृदय-परिवर्तन करने में है। सत्याग्रह पाप का प्रतिरोध है, पापी का नहीं। सत्याग्रह अनुशासन की मांग करता है, इसके परिणामस्वरूप व्यक्ति को आत्मबलिदान करना पड़ सकता है।

❖ सत्याग्रही के लिए नियम

गांधी जी ने सत्याग्रही के लिए कुछ नियम निर्धारित किए थे जिसका पालन सभी सत्याग्रही को करना चाहिए-

- सत्यरूपी ईश्वर के अस्तित्व में विश्वास करना
- अहिंसा में विश्वास
- ब्रह्मचर्य का पालन
- आस्तेय का व्यावहारिक प्रयोग
- अपरिग्रह
- मादक द्रव्यों से दूर रहना
- खादी पहनना.
- अस्पृश्यता का पालन करना
- आत्मानुसरण व अनुशासन का पालन करना

❖ सत्याग्रह के चारित्रिक लक्षण

1) सत्याग्रही में सत्याग्रह करने से पहले उसके उद्देश्यों की सफलता का ज्ञान एवं निष्ठा होना आवश्यक है। इसे आत्मबल कहते हैं ।

2) सत्याग्रही को प्रेम, सद्भावना एवं उत्साहवर्धक वातावरण का निर्माण करना चाहिए, ना कि भय या आतंक का। सत्याग्रह सामने वाले के हृदय एवं मस्तिष्क के परिवर्तन हेतु प्रयास करता है। इसे प्रेमबल कहते हैं ।
3) सत्याग्रही को निडर होना चाहिए ताकि प्रतिद्वंदी पर भी भरोसा कर सके। प्रतिद्वंदी यदि उसे बार बार धोखा देता है फिर भी सत्याग्रही को उस पर विश्वास करना चाहिए ।
4) सत्याग्रही को हमेशा अपना पक्ष या विचार खुले रखने चाहिए ताकि उनका मूल्यांकन और पुनर्मूल्यांकन हो सके। उनकी त्रुटियों का निराकरण किया जा सके।
5) सत्याग्रही के लिए कोई संघर्ष समय सीमा निश्चित नहीं है। सत्याग्रही को कष्ट या पीड़ा उठाने के लिए अपने आप को समर्थ बनाना चाहिए। सत्याग्रह में हार के लिए कोई स्थान नहीं है।
6) एक बड़े उद्देश्य से किया गया सत्याग्रह इस बात पर निर्भर नहीं होता कि उसमें कितनी संख्या है किन्तु उसकी सफलता उसकी गुणवत्ता पर निर्भर होता है। एक सच्चा सत्याग्रही किसी भी उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए पर्याप्त है।
7) सत्याग्रह की अचार संहिता में कठोर ताकतों के सामने समर्पण करने का प्रावधान नहीं है। पीड़ा के कारण भी समर्पण नहीं होना चाहिए, न ही बंदूक के डर से समर्पण होना चाहिए।
8) सत्याग्रह सत्य को प्राप्त करने की एक अथवा प्रयास एवं निश्चय है।
9) सत्याग्रही को हमेशा ही संघर्ष के लिए तैयार रहना चाहिए, किंतु शांति हेतु भी उतना ही आतुर रहना चाहिए। शांति के हर अवसर का स्वागत करने को तत्पर रहना चाहिए। इसे न्यायबल कहते हैं ।

❖ **सत्याग्रह की सफलता के लिए निम्नलिखित शर्तें आवश्यक हैं-**

अ) सत्याग्रह में विरोधियों के प्रति अपने में किसी प्रकार की घृणा या दुर्भावना नहीं होनी चाहिए। प्रेम से ही विजय का लक्ष्य प्राप्त करना है।

आ) निश्चित रूप से सत्य समाज के कल्याण हेतु होना चाहिए। सर्वजन हिताय सर्वजन सुखाय सत्याग्रही को अपने उद्देश्य की सफलता के लिए हर समय तैयार रहना चाहिए।

❖ **सत्याग्रही के लिए आचार संहिता**

गांधीजी ने सत्याग्रही के लिए निम्नलिखित आचार संहिता का पालन आवश्यक बताया है-

1) सत्याग्रही को ईश्वर में अटल विश्वास होना चाहिए।
2) उसका विश्वास सत्य एवं अहिंसा पर दृढ़ होना चाहिए। अपनी पीड़ा के माध्यम से मानवीय संवेदना एवं ईश्वर के प्रति सच्ची निष्ठा होनी चाहिए ताकि सत्य एवं प्रेम को जागृत कर उन्हें प्रसारित किया जाए।
3) उसका जीवन आडंबर रहित होना चाहिए। साथ ही अपने उद्देश्य की सफलता के लिए सभी तरह का त्याग करने के लिए तत्पर रहना चाहिए।

4) उसके जीवन का आवश्यक उद्देश्य खादी पहनना एवं सूत कातना होना चाहिए।
5) सत्याग्रही को मादक द्रव्यों का उपयोग निषेध होना आवश्यक है ताकि वह अपने उद्देश्य के प्रति मानसिक रूप से संतुलित रहे।
6) सत्याग्रही को समय-समय पर बनाए गए नियमों का पालन एवं अनुशासित होना परम आवश्यक गुण है।

❖ सत्याग्रह की विधि

गांधी एवं उनके अनुयायी द्वारासत्याग्रह की निम्नलिखित पद्धतियाँ बताई गई है :

- **आग्रह या दबाव**

यह सत्याग्रह की सबसे नरम या कोमल विधि है जोकि गलत नीतियों पर चोट करती है। सत्याग्रही का उद्देश्य गलत काम करने वालों को नीचा दिखाना न होकर उसका हृदय परिवर्तन करना होता है। सत्याग्रही का उद्देश्य सामने वाले का हृदय परिवर्तन करना है।

इसमें स्वयं कष्ट उठाकर विरोधी को जीतना होता है। बलपूर्वक विरोध द्वारा किसी को अपने अधीन बनाना एवं पीड़ा पहुँचानाइसका उद्देश्य नहीं है। सत्याग्रही बल रहित एवं शांतिपूर्वकतरीके से अपनी बात मनवाने पर अपना ध्यान केंद्रित करता है।

- **उपवास**

उपवास सत्याग्रह की एक महत्वपूर्ण विधि है जिसकागांधीजी निरंतर प्रयोग करते थे। उन्होंने अपने जीवन काल में इसका 17 बार उपयोग किया । ब्रिटिश साम्राज्य की अन्यायी प्रवृत्ति के विरूद्ध हरिजन एवं अछूतों के हित के लिए सांप्रदायिक दंगों के दमन, अहिंसा एवं उपद्रवों के रोकथामहेतु आत्मशुद्धि एवं प्रायश्चित के लिए एवं मिल कर्मचारियों की समस्याओं केलिए भी प्रयोग किया । गांधीजी ने अनुसार सत्याग्रह में उपवास एक सबल एवं सार्थक हथियार है जिसे हर कोई नहींकर सकता है। गांधीजी के अनुसार सत्याग्रही में स्वार्थ, क्रोध एवं अधैर्य नहीं होना चाहिए । उसे दृढ़ सहनशील, ठोस इच्छा शक्ति एवं शांतस्वभाव का होना अत्यंत आवश्यक है, तभी वह अपने लक्ष्य को प्राप्त कर सकता है। सत्याग्रही उपवास को अंतिम अस्त्र के रूप में मानता है। जब सारे उपाय विफल हो जाते हैं तब उपवास की आवश्यकता होती है। उपवास में नकल एवं दिखावे के लिए कोई स्थान नहीं है।

- **बहिष्कार**

सत्याग्रह की एक महत्वपूर्ण विधि बहिष्कार भी है, लेकिन गांधीजी इसे बहुत अच्छा उपाय नहीं मानते थे। किसी व्यक्ति या समूह का सामूहिक रूप से संबंध तोड़ना ही बहिष्कार कहलाता है। बहिष्कार निरस्त करने की शर्त है जिसके नियम बहुत कष्टदायी है । गांधीजी ने बहिष्कार का प्रयोग मुख्यत: तीन प्रमुख संस्थाओं के प्रति किया थाजो ब्रिटिश साम्राज्य को संगठित एवं शक्तिशाली बनाते थे। वे तीन संस्थाएं, विधानसभा, न्यायालय और सरकार द्वारा संचालित शिक्षण संस्थाएं थी। इसके विकल्प के रूप में उन्होंने

ग्राम पंचायत, स्वदेशी एवं बुनियादी तालीम का नारा दिया था। ग्राम पंचायत के माध्यम से गांधी जी आत्म निर्भर गांवों का प्रस्ताव रखते हैं जो अपनी मूलभूत जरूरतों के लिए किसी पर आश्रित नहीं होगा एवं जो सामूहिकता की भावना से प्रेरित होगा। स्वदेशी के माध्यम से उन्होंने विदेशी वस्तुओं के निषेध एवं घर में ही बनी वस्तुओं का प्रयोग सुझाया, ताकि गृह उद्योग को संरक्षण मिल सके। बुनियादी तालीम के माध्यम से उन्होंने नैतिक एवं हस्त-कौशल को बढ़ावा देने वाली शिक्षा पर जोर दिया।

- **सविनय अवज्ञा**

गांधीजी सविनय अवज्ञा को संवैधानिक आंदोलन का अचूक अस्त्र मानते थे। उनके अनुसार, सविनय अवज्ञा आंदोलन एक स्वस्थ प्रभावकारी संवैधानिक आंदोलन है। अवज्ञा एक ऐसा हथियार है जिसके लिए व्यक्ति में साहस एवं उत्साह होना अनिवार्य है। यह कार्य जन अवज्ञा, राजतंत्र या आपराधिक प्रवृत्ति द्वारा संभव नहीं है। राज्य का चरित्र होता है कि वह अपराधों का दमन बलपूर्वक करते हैं। सत्याग्रही समाज के नियमों के तहत विवेकपूर्ण एवं शुद्ध आत्मा एवं दृढ़ इच्छा से इसे प्रयोग कर सकता है। सार्वजनिक आंदोलन के लिए सबसे अहम सिद्धांत है कि उसमें किसी हिंसा के लिए स्थान नहीं होना चाहिए। वह निश्चित व्यक्तियों या सामान्य जनमानस द्वारा किया जाना चाहिए, साथ ही राज्य या प्रतिपक्षी संस्था द्वारा उन्हें उकसाया नहीं जाना चाहिए। अत: यह स्पष्ट है कि सिविल अवज्ञा अहिंसात्मक होनी चाहिए।

- **धरना**

धरना हिंदी और उर्दू का शब्द है जिसमें हम किसी के घर के सामने या आफिस के सामने बैठकर अपनी बात मनवाने का प्रयास करते हैं। गांधी जी के अनुसार यह एक क्रूर कार्य होता है। इससे अपनी बात मनवाने के लिए प्रतिद्वंदी पर अनावश्यक दबाव दिया जाता है। गांधी जी के अनुसार यह एक कायराना एवं तिरस्कृत कार्य है। इसे वह हिंसक कार्य कहते हैं।

- **हड़ताल**

गांधीजी के अनुसार सत्याग्रह की अन्य विधियों में हड़ताल भी एक कारगर अस्त्र या तरीका है। वह हड़ताल सामान्य या औद्योगिक ही क्यों न हो उसका भी आधार सत्य एवं अहिंसा होनी चाहिए। उनके अनुसार हड़ताल की प्रकृति एवं लक्ष्य न्यायिक प्रक्रिया द्वारा ही होनी चाहिए। अन्य प्रकरण जो सामान्य जनमानस या राजनैतिक दलों द्वारा लगाए जाते हैं, उनका भी स्पष्ट उद्देश्य होना चाहिए।

4.4 गांधीजी के समाज कार्य की विशेषताएँ

गांधीजी द्वारा किए गए सामाजिक कार्यों का विश्लेषण करने के उपरांत उनमें निम्नलिखित विशेषताएँ बताई जा सकती हैं-

- **देशज समाज कार्य का प्रारूप**

गांधीजी भारत के पहले सामाजिक विचारक थे जिन्होंने भारतीय समाज को एक नए आदर्श रूप में प्रस्तुत किया। उन्होंने प्रत्येक क्रिया विषय पर अपने विचार दिए जैसे कि राज्य व प्रशासन की प्रकृति, सुरक्षा, स्वास्थ्य, स्वच्छता, गृह शिक्षा, रोज़गार, कमजोर वर्गों का विकास तथा समाज में व्याप्त बुराईयों जैसे अस्पृश्यता, नशा मुक्ति, गरीबी आदि।

- **सामाजिक दायित्वों का नया चिंतन**

यद्यपि, गांधीजी ने स्वयं कहा है कि उनके मूल्यव सिद्धांत उतने ही पुराने हैं जितना कि प्रकृति फिर भी उनका संहिताबद्ध प्रस्तुतीकरण एक नवीनता लिए हुए है। यह उनकी सामाजिक व राजनीतिक गतिविधियों का अनुपम आधार है। गांधीवादी चिंतकों द्वारा तैयार की गई आचार संहिता भी अनुकरणीय है।

- **व्यावहारिक चिंतन**

गांधीजी केवल एक सैद्धांतिक चिंतक ही नहींथे, उन्होंने जो कहा उसे व्यवहार में भी लाए। ये सब उनके विचारों एवं कार्यों से स्पष्ट परिलक्षित होता है। गांधीजी का अठारह सूत्री रचनात्मक कार्यक्रम कथनी को करनी में बदलने का एक अच्छा उदाहरण है।

- **सामाजिक दायित्वों को पूरा करने की विधियों का अविष्कार**

गांधीजी ने बड़े स्तर पर सामाजिक व राजनीतिक उद्देश्यों की पूर्ति हेतु सत्याग्रह का प्रयोग किया तथा इनकी उपयोगिता को नया आयाम/अर्थ प्रदान किया। असहयोग की अवधारणा गांधीजी ने पाश्चात्य विचारक हेनरी डेविड़ थोरो से लीया, लेकिन सत्याग्रह उनकी अपनी खोज थी। उनके द्वारा सत्याग्रह का प्रयोग समाज शास्त्र के विद्यार्थियों के लिये विशेष अध्ययन का विषय रहा।

- **सामाजिक सुधार से सामाजिक विकास की ओर**

नि:संदेह गांधी की सामाजिक क्रियाशीलता का प्रारंभ एक समाज सुधारक के रूप में हुआ। देश में वह समय समाज सुधार का ही था। लेकिन गांधीजी ने दूसरों की तरह अपने आपको वहीं तक सीमित नहीं रखा, बल्कि सामाजिक समस्याओं से पीढ़ियों की भलाई के लिए अपने कार्य करते रहे। असल में गांधीजी समाज में कुछ छिट-पुट कार्यों में विश्वास नहीं करते थे वो बुरे तरीके, विकृत व टूटे समाज का पुनर्निर्माण व नए समाज की रचना करना उनका उद्देश्य था।

- **कार्यकर्ताओं व संस्थाओं का राष्ट्रीय संगठन**

गांधीजी ने अपने जीवन के अंतिम पड़ाव पर, काँग्रेस पार्टी को विघटित कर लोक सेवक संघ बनाने की सलाह दी जो राजनीतिक गतिविधियों से पूर्णत: मुक्त हो तथा जिसमें पूर्णकालिक सामाजिक कार्य हो। यद्यपि, यह विचार मूर्तरूप न ले सका तथापि गांधीजी ने बड़ी संख्या में राष्ट्रीय स्तर पर सामाजिक कार्यकर्ताओं काजो संगठन खड़ा किया वह अपने आप में अद्भुत एवं अनुकरणीय है ।ये सभी संस्थाएं वर्तमान में गांधीजी विचारधारा के अनुरूप कार्यकर रही हैं।

➢ समाज कार्य में धर्मनिरपेक्षता के पक्षधर

गांधीजी आगमन के पूर्व भारत में अधिकतर सामाजिक कार्य धर्म के आधार पर गठित संगठनों द्वाराकिए जा रहे थे। गांधीजी ने सभी सामाजिक गतिविधियों को एक धर्मनिरपेक्ष व आध्यात्मिक आधार प्रदान किया। आज की धर्मनिरपेक्षता से भिन्न गांधीजी ने धर्म को दरकिनार नहीं किया, परंतु सभी धर्मों से प्रोत्साहन देने वाले तत्वों का समावेश अपने दायित्व निर्वाह के दौरान किया।

4.5 सारांश

महात्मा गांधी बीसवीं सदी के एक ऐसे राजनीतिक एवं सामाजिक व्यक्तित्व के रूप में जाने जाते हैं जिन्होंने सिद्धांत को व्यवहार को एकीकृत करने के लिए अपना जीवन लगाया। समाज कार्य का उद्गम भले ही एक अनुशासन के रूप में पश्चिमी की देन हो, लेकिन उसे एक व्यावहारिक एवं जनापेक्षी चरित्र, जिसे देशज समाज कार्य कहा जा सके,गांधी की देन मानी जा सकती है।

4.6 बोध प्रश्न

प्रश्न 1: गांधीय समाज कार्य को विस्तृत रूप से समझाएं ।

प्रश्न 2: रचनात्मक कार्यक्रम क्या है ? स्पष्ट कीजिए।

प्रश्न 3: समाज कार्य अभ्यास की गांधीवादी प्रवृत्तियों को बताइए।

प्रश्न 4: टिप्पणी कीजिए-

1. स्वदेशी 2. चरखा
3 . ट्रस्टीशिप

4.7 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

गांधीजी, (2014). *रचनात्मक कार्यक्रम*. (अनु. काशीनाथ त्रिवेदी). अहमदाबाद : नवजीवन प्रकाशन मंदिर.

--------, (2014). *आत्मकथा*. (अनु. काशीनाथ त्रिवेदी). अहमदाबाद : नवजीवन प्रकाशन मंदिर.

--------, (2015). *हिंद स्वराज*. (अनुवादक, अमृतलाल ठाकोरदास नाणावटी). अहमदाबाद : नवजीवन प्रकाशन मंदिर.

अहमद, एजाज़.(2008). *किनकी सदी, किनकी सहस्राब्दी?* (अनु. मनोज झा). मेरठ : संवाद प्रकाशन.

आचार्य, नंदकिशोर. (2010). *सत्याग्रह की संस्कृति*. बीकानेर: वाग्देवी प्रकाशन.

कालेलकर, काका एवं अन्य (सं.), (1966). *गांधी: व्यक्तित्व, विचार और प्रभाव*. नई दिल्ली: गांधी स्मारक निधि तथा सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन.

ज्ञान शांति मैत्री

इकाई 5
समसामयिक प्रवृत्तियां

इकाई की रूपरेखा

5.0 उद्देश्य
5.1 प्रस्तावना
5.2 कॅरियर के रूप में समाज कार्य की प्रवृत्तियाँ
5.3 समाज कार्य अभ्यास के क्षेत्र की प्रवृत्तियाँ
5.4 समाज कार्य की समसामयिक प्रवृत्तियाँ
5.5 सारांश
5.6 बोध प्रश्न
5.7 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

5.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आप : -

1. समाज कार्य के समसामयिक संदर्भों को जान पाएंगे।
2. कॅरियर के रूप में समाज कार्य की संभावना को जान सकेंगे।

5.1 प्रस्तावना

समाज कार्य तेज़ी से उभरता हुआ अनुशासन है जो सिद्धांत एवं क्षेत्र व्यवहार को अपने में समाहित करते हुए एक अंतर-अनुशासनिक विषय के रूप में अपने को स्थापित कर रहा है। व्यावसायिक समाज कार्य द्वारा लगभग 100 वर्षों के इतिहास में कई प्रवृतियाँ व्यवहार में लाई गई हैं। इस इकाई में हम कॅरियर के रूप में समाज कार्य को और व्यावसायिक सामाजिक कार्य की नवीन प्रवृत्तियों को समझने का प्रयास करेंगे।

5.2 कॅरियर के रूप में समाज कार्य

समाजकार्य एक नया अनुशासन है जिसका व्यावसायिक इतिहास अभी सौ वर्ष का भी नहीं हुआ हैं। चूंकि समाजकार्य में समस्याओं में हस्तक्षेप के ज़रिएव्यक्तियों, परिवारों, समूहों एवं समुदायों के साथ संबंध स्थापित करने करने का प्रयास किया जाता है, इसलिए समाज कार्य का अनुशासन पूर्ण रूप से प्रशिक्षित और पेशेवर कार्यकर्ताओं पर भरोसा करता है।21 वीं सदी की बदलती जरूरतों एवं व्यापक जन-आकांक्षाओं ने समाज कार्य को एक पैशेवर कॅरियर के रूप में विकसित कर दिया है।

आज समाज कार्य केवल अच्छा करने या वंचितों की सहायता करना मात्र नहीं है, अपितु सामाजिक समस्याओं, नशीले पदार्थों के दुरूपयोग, निर्धनता, मानसिक रूप से बीमार, वृद्धों, किशोरों की समस्याओं इत्यादि के निरंतर बढ़ने से आज राष्ट्र की महत्वपूर्ण जरूरत बन चुका है। भले ही कॅरियर के रूप में यह ज्यादा लाभदायक नहीं हैं, परंतु यह व्यवसाय व्यक्ति को असीम संतोष प्रदान करता है।

समाज कार्य की समसामयिक प्रवृत्ति है कि इसमें एक ओर आय के उच्च साधन प्रदान किए जा रहे हैं और दूसरी ओर कॅरियर के लिए सुनिर्धारित मार्ग भी प्रशस्त हो रहा है।

समाज कार्य एक भिन्न अर्थ में एक कॅरियर है जो कॅरियर की रूढ़िगत परिभाषा से परे है। सामाजिक कार्यकर्ता की व्यावसायिक ज़िम्मेदारियों और उसका व्यक्तिगत जीवन एक-दूसरे से अभिन्न रूप से जुड़ा हुआ है। आज अधिकांश सामाजिक कार्यकर्ता केवल काम पर जाना, अपने काम करने और घर लौटते समय, कार्यालय में अपने काम संबंधी विचार और भावनाएँ वहीं पर छोड़कर नहीं आ सकते। वे अपनी भूमिकाओं और दायित्वों से अपनी व्यावसायिक चिंताओं को अलग रखने का प्रयास करते हैं लेकिन कार्य का स्वरूप इसे मुश्किल बना देता है।

व्यावसायिक समाज कार्य सेवार्थी को विभिन्न आयामों से एक समग्र व्यक्ति के रूप में देखता है। इन आयामों में शारीरिक, आध्यात्मिक, भावात्मक, मनोवैज्ञानिक, सामाजिक और बौद्धिक आयाम शामिल हैं। वे पारिस्थितिक और स्थितिक संदर्भ में सेवार्थी का आकलन भी करते हैं। यहीं संकल्पनाएँ उस व्यक्ति पर भी लागू होती हैं, जो सामाजिक कार्यकर्ता की भूमिकाएँ और दायित्व ग्रहण करता है। सामाजिक कार्यकर्ता अपने संपूर्ण अस्तित्व के साथ अभ्यास की चुनौतियों का उत्तर देता है अत: कार्यकर्ताओं के विश्वास, मूल्य और शारीरिक व भावात्मक कल्याण, आध्यात्मिकता, परिवार संबंध, मित्रता और जीवन के अन्य सभी पहलू समाज अभ्यास के प्रतिदिन के अनुभवों को प्रभावित करते हैं और उनसे प्रभावित होते हैं। सामाजिक कार्यकर्ता समुदाय के हितों के लिए काम करता है और सुनिश्चित करता है कि नागरिकों की सुरक्षा व देखभाल अत्यधिक संभावित तरीके से प्राप्त हो।

इस व्यवसाय में सफलता के लिए कुछ महत्वपूर्ण अनिवार्य शर्तें हैं:

- अवलोकन और विश्लेषणात्मक कौशल
- अन्य व्यक्तियों की समस्याओं को निष्पक्ष दृष्टि से देखने की योग्यता
- पहल करने की क्षमता
- अकेले काम करने और दल के एक हिस्से-दोनों तरह से काम करने की क्षमता
- मानव अधिकारों और सामाजिक न्याय के प्रति प्रतिबद्धता
- अनिर्णयात्मक मनोवृत्ति का न होना
- लोगों से धैर्यतापूर्वक व्यवहार करना (व्यवहार करते समय धैर्य बरतना)

- दायित्व लेना
- भावात्मक रूप से परिपक्व होना
- प्राथमिकताएँ निर्धारित करने में संवेदनशीलता
- लोगों की जरूरतों के प्रति संवेदनशीलता या सूक्ष्मदर्शिता
- प्रभावी और उपयुक्त संकट अंतक्षेप
- द्वंद समाधान कौशल
- चिंतनशील अध्ययन योग्यताएँ

इस क्षेत्र में कार्य करने के लिए जरूरी है कि सामाजिक कार्यकर्ता में मनोवैज्ञानिक और भावनात्मक पहलुओं में रूचि, धैर्यता और दृढ़ता होनी चाहिए। साथ ही एक समान व्यवहार और समाज के किसी भी वर्ग के प्रति पक्षपात या पूर्वाग्रह नहीं होना चाहिए।

5.3 समाज कार्य अभ्यास के क्षेत्र की प्रवृत्तियाँ

समाज कार्य एक अत्यंत विशाल व व्यापक क्षेत्र है, जिसमें कार्य करने के लिए अनेक क्षेत्र, मुद्दे और समूह हैं। यह विभिन्न स्तरों पर अंतःक्षेप (Intervention) के लिए विविध अवसर प्रदान करता है। समाज कार्य अभ्यास के विभिन्न क्षेत्र बच्चे, किशोर, बालिकाएँ और महिलाएँ, विशिष्ट समस्याओं वाले युवा, वृद्ध और इसी तरह के समाज के उपेक्षित वर्ग हैं। इन लोगों को परिवार कार्यस्थल, सामाजिक पर्यावरण की अन्य जगहों में अनगिनत समस्याओं का सामना करना पड़ता है और उन्हें सामाजिक कार्य व्यावसायिकों की मदद की भी जरूरत पड़ती है। समाज कार्य अभ्यास के निम्नलिखित कुछ सामान्य क्षेत्र हैं जो नौकरी के अवसर प्रदान करते हैं और समाज कार्य अंतक्षेप (Intervention) के लिए आपके कार्यस्थल बन सकते हैं-

- **शिक्षा में समाज कार्य**

भारतीय परिप्रेक्ष्य में बात की जाए तो शिक्षा में समाज कार्य प्राचीन समय से किया जा रहा है। इसके अंतर्गत मूल रूप से स्कूलों में समाज कार्य अभ्यास शामिल किया जाता है, लेकिन स्कूल के बाहर भी काफ़ी संभावनाएँ हैं। भारत में शिक्षा परिवेश समाज कार्य अंतःक्षेप के लिए एक विशाल क्षेत्र मुहैया कराता है। एक प्रशिक्षित समाज कार्य व्यावसायिक के रूप में आप सूकूलों में सामाजिक कार्यकर्ता के रूप में नौकरी प्राप्त सकते हैं। इसमें सामाजिक कार्यकर्ता का प्रमुख उद्देश्यबच्चों में सामाजिक न्याय, लोकतंत्र और समानुभूति के मूल्योंको प्रदान करने के साथ-साथ स्कूल, परिवार और समुदाय के बीच स्नेहपूर्ण संबंधों को सुधारना होता है।

यहाँ यह जान लेना महत्वपूर्ण है कि शैक्षिक परिवेशों में सामाजिक कार्यकर्ता न तो अध्यापक होता है और न ही प्रशासक, बल्कि वह इन दोनों के बीच सेतु का कार्य करता है। उसे स्वयं को मानव सेवा व्यावसायिक के रूप में बनाए रखना होगा, ताकि सामाजिक कार्यकर्ता विद्यालय प्राधिकारी, विद्यार्थी और स्टॉफ के बीच संवाद का वाहक बन सके।

- **चिकित्सा और मनोचिकित्सीय समाज कार्य**

समाज कार्य अभ्यास का एक महत्वपूर्ण क्षेत्र चिकित्सा और मनोचिकित्सीय समाज कार्य है। मनोचिकित्सीय सामाजिक कार्यकर्ता व्यवहार संबंधी समस्याओं वाले असामान्यव्यक्तियों के साथ काम करता है। वे उनकी समस्याओं का आकलन और निदान करता है और उपचार प्रक्रिया मेंमदद भी करता है। इस क्षेत्र में प्रवेश करने वाले सामाजिक कार्यकर्ता रोगियों व उनके परिवारों की तनाव तथा अन्य व्यक्तिगत और आर्थिक समस्याओं का सामना करने में मदद करते हैं। इनके द्वारा अस्पताल से छुट्टी के बाद गृह देखभाल के लिए सेवाएँ, निर्धन रोगियों की आर्थिक सहायता और दीर्घकालीन देखभाल सुविधाएँ प्रदान की जाती हैं। ये स्वास्थ्य व्यावसायिकों को रोगी की सामाजिक, भावात्मक और आर्थिक स्थिति से संबंधित सूचना प्रदान करस्वास्थ्य व्यावसायिकों की रोगियों का उपचार करने में मदद भी करते हैं।

- **अपराध विज्ञान और सुधारक समाज कार्य**

सामाजिक कार्यकर्ताओं द्वारा अपराध तथा समाजविरोधी व्यवहार की रोकथाम के लिए प्रतिप्रेषण गृहों (रिमांड गृहों) और जेलों में समाज कार्य किया जाता है। सुधारक सुविधाओं में प्रमुख ध्यान पुनर्वास पर केंद्रित होता है। सामाजिक कार्यकर्ता परिवीक्षा या परोल अधिकारी हो सकते हैं जो अपराधी के जेल से छूट जाने के बाद सेवाओं की व्यवस्था करते हैं, समूह गृह आवास ढूंढते हैं, उपचारी कक्षाओं, नौकरी-प्रशिक्षण, व्यसन उपचार, परामर्श, बाल देखभाल और परिवहन सेवाओं की व्यवस्था करते हैं। ये गतिविधियाँ उपभोक्ता की स्वतंत्रता और स्वाभिमान बढ़ाने में सहायक होती हैं।

सामाजिक कार्यकर्ता घरेलू झगड़ों/विवादों या प्रवर्तन अधिकारियों को सदमा और संकटकालीन घटना में सेवाएँ प्रदान करने में भी मदद कर सकता है। सुधारक संबंधी समाज कार्य गतिविधियों में विविधता होती है जैसे कि उपभोक्ता को विकास का अवसर प्रदान करना और विभिन्न प्रकार के कौशलों का प्रयोग करना। सुधार और न्याय वह होता है, जहाँ सामाजिक कार्यकर्ता पुनर्वास और प्राधिकारी का सृजनात्मक प्रयोग पर ध्यान केंद्रित कर सकता है।

- **शहरी और ग्रामीण समुदाय विकास**

भारतीय संदर्भ में, समुदायों को सशक्तीकरण की दिशा में संगठित करना समाज कार्य व्यवसाय के मुख्य उद्देश्यों में से एक है। शहरी मलिन और पुनर्वास कालोनियाँ, वे समुदाय हैं जहाँ सामाजिक कार्यकर्ताओं

को शहरों के अंदर ही काम करना पड़ता है। सामाजिक कार्यकर्ता विशिष्टसमुदायों की समस्याओं को हल करने हेतु कार्य करते हैं। वे आवास, बेरोज़गारी, स्थानीय सेवाओं के अभाव इत्यदि समस्याओं से भी निपटते हैं। वे संसाधनोंके वितरण और सामाजिक नीतियों के कार्यान्वयन में भी मदद करते हैं।

- **औद्योगिक समाज कार्य**

सामाजिक कार्यकर्ता उद्योगों और वाणिज्यिक इकाईयों में कर्मचारी का कल्याण सुनिश्चित करने में भी मदद करते हैं। वे मानव संसाधन विकास (एच.आर.डी.), कर्मचारी कल्याण, उद्यम के औद्योगिक संबंधों इत्यादि की ओर भी ध्यान देते हैं। कुछ औद्योगिक सामाजिक कार्यकर्ताओं के रूप में भी काम करते हैं। इस सूची में जो नवीनतम वृद्धि हुई है वह है कारपोरेट सामाजिक दायित्व(सी.एस.आई.) और कर्मचारी सहायक (ई.ए.)।

- **समाज कार्य अनुसंधान**

व्यावसायिक समाज कार्य की सर्वाधिक महत्वपूर्ण भूमिकाओं में से एक भूमिका है व्यवसाय की जानकारी को प्रसारित करना या उस जानकारी को विस्तृत करना। समाज कार्य शोधकर्ता उपभोक्ताओं की सहायता करने के दृष्टिकोणों, विधियों या कार्यक्रमों की प्रभावोत्पादक छानबीन करके जानकारी को विस्तृत करने के लक्ष्य को प्राप्त करते हैं। समाज कार्य शोधकर्ता एजेंसियों को ज्यादा प्रभावी ढंग से सेवाएँ प्रदान करने में मदद करते हैं और सामाजिक परिवर्तन के समर्थन और संवर्धन संबंधी प्रयासों में योगदान देते हैं। अनुसंधान संशोधित सामाजिक नीतियोंया विधि-निर्माण के लिए मार्गदर्शन करता है और सफल सामाजिक नीति समर्थन को मजबूत कर सकता है। कई शोधकर्ता अपनाकॅरियर प्रत्यक्ष सेवाओं और कार्यक्रम विकास में प्रारंभ करते हैं और फिर शोध कॅरियर जारी रखने के लिए डॉक्टोरल उपाधि प्राप्त करने के लिए विश्वविद्यालय में आ जाते हैं। कुछ लोग एजेंसियों या संगठनों तथा सरकारी विभागों में काम करते हैं।

- **वयोवृद्धि/जरा विज्ञान**

इसका अभिप्राय है वृद्धों के साथ काम करना, परामर्श प्रदान करना, पेंशन जैसे सामाजिक सुरक्षा उपायों का संवितरण, खर्च करने की सामर्थ्य सुनिश्चित करना, स्वास्थ्य देखभाल पद्धति की उपलब्धता, चिकित्सा उपचार के साथ उनकी सहायता करना, पीढ़ियों के बीच संबंधों (अंत: पीढ़ी संबंधों) को सुधारना, मनोरंजन (मनोविनोद) गतिविधियों का आयोजन करना, समूहों की सहायता करना और सामान्यत: उनके जीवन-स्तर को सुधारना। इसके अतिरिक्त वृद्ध आश्रमों का प्रबंधन, वरिष्ठ नागरिकों और अभिभावकों का कल्याण व रखरखाव अधिनियम 2007, सी.आर.पी.सी. धारा 125 और इसी तरह के कानूनों का उचित अधिनियम सुनिश्चित करना भी शामिल है।

- **सामाजिक पक्ष-समर्थन**

इसमें महिला सरोकारों, जाति-आधार भेदभाव उन्मूलन, रोज़गार निर्माण, काम की परिस्थितियाँ बेहतर बनाना, पर्यावरणी सुरक्षा और विभिन्न लोगों की वंचनाओं को दूर करने सहित विभिन्न सामाजिक मुद्दों पर काम करना शामिल है।

- **अक्षमता**

अक्षम जो अब ''असाधारण/विशिष्ट से योग्य'' कहलाते हैं, भारतीय समाज का वंचित वर्ग है। यद्यपि, सरकार ने विशिष्ट रूप से योग्य इन व्यक्तियों के लिए कई नीतियाँ और कार्यक्रम प्रारंभ किए हैं, लेकिन इसके कार्यान्वयन में कई बाधाएँ हैं। शारीरिक अक्षमता के अलावा विकासात्मक अक्षमताएँ भी होती हैं जिनमें मानसिक मंदता, प्रमस्तिष्क प्रघात, स्वनीलता, मिरगी और अन्य दशाओं को शामिल किया जा सकता है। इस क्षेत्र में कार्य करने के विभिन्न प्रकार की अक्षमताओं की जानकारी, अक्षम लोगों की जरूरतों और समस्याओं और उन्हें लाभ पहुंचा सकने वाली योजनाओं/सुविधाओं की पूर्णजानकारी होना ज़रूरी है। समाज कार्य अंतःक्षेप का उद्देश्य विशिष्ट रूप से योग्य व्यक्तियों को मुख्यधारा में लाना और समाज में उनका एकीकरण करना है।

- **नीति और योजना**

इस क्षेत्र में काम करने वाले सामाजिक कार्यकर्ता बाल दुरूपयोग, गृहविहीनता, नशीले पदार्थ का दुरूपयोग, हिंसा, बेरोज़गारी, महिलाओं संबंधी मुद्दों, मानसिक बीमारी इत्यादि जैसी समस्याओं पर कार्य करते हैं। वे प्रभावित लोगों की स्थितियाँ बेहतर बनाने के लिए, पद्धतियों को सुधारने हेतु काम करते हैं। जनगणना आँकड़ों और विधि-निर्माण का विश्लेषण करना, कागजातों का मसौदा तैयार करना, सार्वजनिक सुनवाईयों में साक्ष्य देना, मीडिया के साथ काम करना, नीति निर्माताओं के साथ बातचीत करना भी इनका महत्वपूर्ण काम माना जाता है। उनके कार्यों में फंड एकत्रित करना, अनुदानों के लिए लिखना या निदर्शन परियोजनाएँ करना भी शामिल हो सकता है। एक ही मुद्दे पर काम करने में कई महीने या वर्ष लग सकते हैं और परिवर्तन अक्सर (वृद्धिशील) होता है। लेकिन नीति और योजना क्षेत्र में काम करने से सामाजिक कार्यकर्ता को यह जानकर संतोष होता है कि वे समाज के सभी सदस्यों के जीवन स्तर को सुधारने के लिए समाज पर दबाव डाल रहे हों।

- **परामर्श**

परामर्श एक ऐसा कौशल है जिसे परिवेश और उपभोक्ता के अनुसार समुचित रूप से प्रयोग में लाया जाना चाहिए। परिवेश चाहे कोई भी हो सामाजिक कार्यकर्ता जिस परिवेश में भी कार्य करते हैं, लगभग सभी में वे परामर्श देने का काम करते हैं। ये गैर सरकारी-संगठनों, शैक्षिक संस्थाओं, मानसिक स्वास्थ्य

परिवेशों, अस्पतालों, समुदाय विकास परियोजनाओं आदि में पूर्वकालिक परामर्शदाताओं के रूप में नियुक्त किए जाते हैं।

परामर्श का उद्देश्य उपभोक्ताओं की अपनी भावनाओं(अनुभूतियों) को बेहतर तरीके से समझने, उनके व्यवहारों को सुधारने (परिवर्तित करने) और समस्यापूर्ण स्थितियों का सामना करने में मदद करके उनकी सामाजिक कार्य करने की पद्धति को सुधारने में मदद करना है। इस भूमिका को निभाने के लिए सामाजिक कार्यकर्ताओं को मानवव्यवहारों की जानकारी और सामाजिक पर्यावरण लोगों पर कैसे प्रभाव डालता है इसकी समझ होना जरूरी है। सामाजिक कार्यकर्ताओं कामुख्य कार्य दायित्वों में मनोसामाजिक आकलन और निदान, निरंतर स्थितिकृत (स्थायी) देखभाल, सामाजिक उपचार, अभ्यास मूल्यांकन इत्यादि शामिल है।

- **प्रबंधन तथा प्रशासन**

समाज कार्य प्रशासन में अन्य संगठनों में प्रशासन के कई सामान्य घटक शामिल हैं। लेकिन अंतर इस तथ्य से उभरता है कि समाज कार्य प्रशासन में मानव व्यवहार, सामाजिक समस्याओं, समाज सेवाओं और मूल्यों की जानकारी होना भी अनिवार्य होता है। इस कार्य में योजना बनाना, संगठित करना, स्टाफिंग, निर्देशन, समन्वयन, भर्ती और बजट बनाना भी आना चाहिए। संगठन के आकार के आधार पर सामाजिक कार्यकर्ता से इन सभी कार्यों या इन कार्यों के कुछ भागों को करने की अपेक्षा की जा सकती है।

5.4 समाज कार्य की समसामयिक प्रवृत्तियाँ

जैसा कि पहले भी कहा जा चुका है कि समाज कार्य एक नवीन अनुशासन है अत: इसने कई क्षेत्रों में व्यावसायिक अभ्यास को तरजीह दी है। पिछले कुछ समय से इसने निम्नलिखित क्षेत्रों में अभ्यास पर बल दिया है:

1. भूमंडलीकृतसमाज में सांस्कृतिक मूल्य

समकालीन परिप्रेक्ष्य में समाज कार्य सिर्फ सीमित विरासत की बात नहीं करता, अपितु भूमंडलीकृत समाज में सांस्कृतिक मूल्योंको संजोने की भी वकालत करता है।

व्यापक स्तर पर व्यक्तियों के लिए सब्सिडी में कमी और निगमों तथा सैन्य बल पर बड़े पैमाने के खर्च, वास्तविक मजदूरी और कार्यकर्ता लाभ, किफायती आवास में कटौती और सामाजिक कल्याणकारी राज्य की समाप्ति ने समाज कार्य के दायरे को विस्तृत कर दिया है।

2. भूमंडलीकरण

भूमंडलीकरणएक आर्थिक संकल्पना के साथ साथ एक सामाजिक- राजनीतिक संकल्पना भी है। इसके सकारात्मक और नकारात्मक दोनों अर्थ है। सकारात्मक दृष्टिकोण से तकनीकी क्रांति और धन का वैश्विक प्रवाह है वहीं नकारात्मक दृष्टिकोण से मजदूरी और काम की परिस्थितियों पर कुप्रभाव और अमीर और गरीब के बीच आय में एक बढ़ती खाई को देखा जा सकता है।

वैश्विक अर्थव्यवस्था की वर्तमान स्थिति में वैश्वीकरण की आवश्यकता है कि सामाजिक कार्यकर्ता अपने क्षितिज को व्यापक बनाने और एक वैश्विक ढांचे (पोलॅक 2004) के भीतर कई घरेलू और सामाजिक न्याय के मुद्दों को देखें।

3. उत्पीड़न

सामाजिक कार्य एब्सट्रैक्ट (फरवरी, 2005) में उत्पीड़न के 235 शब्दों को सूचीबद्ध किया गया है। लिस्टिंग की यह बड़ी संख्या सामाजिक कार्य के भीतर इसकी उपादेयता का संकेत है। उत्पीड़न केवल एक वर्णनात्मक शब्द नहीं, बल्कि एक सैद्धांतिक ज्ञान का विमर्श है । उत्पीड़न की गतिशीलता, वास्तव में, कभी सामाजिक कार्य अभ्यास की एक महत्वपूर्ण प्रवृति है।

4. सामाजिक बहिष्कार

सामाजिक बहिष्कार (Social Exclusion) एक अवधारणात्मक पद है जिससे सामाजिक कार्यकर्ताओं को परिचित होना ही चाहिए। सामाजिक कार्य एब्सट्रैक्ट (फरवरी, 2005) में सामाजिक बहिष्कार से संबंधित 19 सार का वर्णन किया गया है। पश्चिमी समाज कार्य अभ्यास में सामाजिक बहिष्कार (Social Exclusion) पर विस्तृत प्रकाश डाला जाता है । सामाजिक कार्य शब्दकोश में सामाजिक बहिष्कार को "लोगों या क्षेत्रों की उपेक्षा और अवसरों के लिए बाधाओं के रूप में परिभाषित किया गया है । भारतीय संदर्भों में भी इस पर बल दिए जाने की जरूरत है ।

राजनीतिक दायरे में सामाजिक बहिष्कार की अवधारणा मात्र शब्द "सामाजिक" और "बहिष्कार" से परे चला जाता है। इस अवधारणा में सन्निहित एक रूपरेखा राजनीतिक और आर्थिक प्रक्रिया के विषय में है।

5 . मानवाधिकार

मानव अधिकारों की सार्वभौम घोषणा मनुष्य के स्वतंत्र एवं गरिमपूर्ण अस्तित्व से संबंधित है । सामाजिक और राजनीतिक कार्रवाई सुनिश्चित करने के लिए घोषित आचार संहिता, जो सभी लोगों को रोज़गार और संसाधनों के बराबर उपयोग को संबोधित है, आज समाज कार्य अभ्यास का महत्वपूर्ण अंगा है ।

5.5 सारांश

उक्त वर्णित तथ्यों के आधार पर कहा जा सकता है कि समाज कार्य अनुशासन नित नई विश्व-दृष्टियों से संपुष्ट होता जा रहा है । इसमें कार्य करने के लिए अनेक क्षेत्र, मुद्दे और समूह हैं। यह विभिन्न स्तरों पर अंतःक्षेप (Intervention) के लिए विविध अवसर प्रदान करता है। 21 वीं सदी की बदलती जरूरतों एवं व्यापक जन-आकांक्षाओं ने समाज कार्य को एक पैशेवर कॅरियर के रूप में विकसित कर दिया है।

5.6 बोध प्रश्न

प्रश्न 1: समाज कार्य अभ्यास के कुछ सामान्य क्षेत्र की विवेचना कीजिए।

प्रश्न 2: समाज कार्य व्यवसाय में सफलता के लिए अनिवार्य शर्तों को स्पष्ट कीजिए।

प्रश्न 3: समाज कार्य अभ्यास की समसामयिक प्रवृत्तियों को बताइए।

प्रश्न 4: टिप्पणी कीजिए-

1. वैश्वीकरण
2. मानवाधिकार
3. कॅरियर के रूप में समाज कार्य

5.7 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

बार्कर, आर. (2003). *सामाजिक कार्य शब्दकोश* (5 वां संस्करण). वाशिंगटन डीसी: एनएएसडब्ल्यू प्रेस।

डेलरिम्पल, जे और बर्क, बी. (1995). *विरोधी दमनकारी अभ्यास: सामाजिक देखभाल और कानून.* बकिंघम, इंग्लैंड: ओपन यूनिवर्सिटी प्रेस।

अल-कृनेवी, ए और ग्राहम, जे (सं). (2003). *कनाडा में बहुसांस्कृतिक सामाजिक कार्य: विविध जातीय-जातीय समुदायों के साथ काम.* ऑक्सफोर्ड, इंग्लैंड: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

हीली, एल. (2001). *अंतर्राष्ट्रीय सामाजिक कार्य: एक अन्योन्याश्रित दुनिया में व्यावसायिक कार्रवाई* न्यूयॉर्क : ऑक्सफ़ोर्ड विश्वविद्यालय प्रेस।

सामाजिक कार्यकर्ताओं के राष्ट्रीय संघ (NASW) (1996). *आचार संहिता.* वाशिंगटन डीसी: एनएएसड्ब्ल्यू प्रेस ।

-------- (2000). *सामाजिक कार्य बोलता है.* वाशिंगटन डीसी: एनएएसडब्ल्यू प्रेस ।

पायने, एम. (1997). *आधुनिक सामाजिक कार्य सिद्धांत एक महत्वपूर्ण शुरूआत.* शिकागो: लिसेयुम ।

पोलॅक, आरजे. (2004). 21 वीं सदी में सामाजिक कार्य के लिए नई चुनौतियाँ. *सामाजिक कार्य,* 49, पृ. 281-290 ।

रीचर्ट, ई. (2003). *सामाजिक कार्य और मानव अधिकार: नीति और अभ्यास के लिए एक आधार.* न्यूयॉर्क : कोलंबिया विश्वविद्यालय प्रेस।